अमर शहीद श्री रामप्रसाद 'बिस्मिल'

आत्मकथा
रामप्रसाद 'बिस्मिल'

सम्पादक

बनारसीदास चतुर्वेदी

आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-6

प्रकाशकीय

अमर शहीद रामप्रसाद 'बिस्मिल' की आत्मकथा छापने का जो सौभाग्य हमे प्राप्त हुआ है तदर्थ हम इस ग्रथमाला के अवैतनिक सम्पादक श्री वनारसीदास चतुर्वेदी के ऋणी तथा कृतज्ञ हैं। 'काकोरी के शहीद' नामक पुस्तक की एक प्रति पडित झावरमल्ल जी शर्मा के पुस्तकालय से मिल सकी और इसलिये उनको भी धन्यवाद देना हमारा कर्त्तव्य है।

सम्पादक महोदय का अनुरोध है कि इस पुस्तक की रायल्टी शहीदो के श्राद्धकार्य मे ही व्यय की जाय और यह हमे सर्वथा मान्य है।

हमारा विश्वास है कि हिन्दी जनता द्वारा 'शहीद-ग्रन्थ-माला' का हार्दिक स्वागत होगा और इस महत्त्वपूर्ण पुस्तक के कई सस्करण हिन्दी मे शीघ्र ही खप जायेंगे।

—*रामलाल पुरी, संचालक*

प्रकाशक
रामलाल पुरी, सचालक
आत्माराम एण्ड सस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

मूल्य	:	दो रुपये ५० नये पैसे
प्रथम संस्करण	:	जुलाई, १९५८
आवरण	·	ना० मा० इगोले
मुद्रक	:	मूवीज प्रेस, दिल्ली-६

सम्पादकीय

हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ आत्मकथा

आत्मचरित लिखना कोई आसान काम नही, क्योकि पहले तो अपने-आप को पहचानना ही मुश्किल है और फिर पाठको के सम्मुख अपनी जिन्दगी के किन अशो को लाना उचित है और किन को न लाना, यह निर्णय करना कठिन है, और इन सब से अधिक महत्त्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या हमारे जीवन मे कोई ऐसी विशेष बात है भी, जिसका वर्णन किया जाय ? वैसे तो यदि कोई निर्जीव व्यक्तित्व वाला भी ईमानदारी के साथ अपनी निर्जीवता का वर्णन कर सके और उसके कारण भी बतला सके तो वह एक मनोरजक तथा उपदेशप्रद आत्मचरित लिख सकता है, पर दूसरो के जीवन मे स्फूर्ति उत्पन्न करने वाला आत्मचरित लिखना किसी सजीव व्यक्तित्व वाले पुरुष का ही काम है।

हिन्दी तथा अग्रेजी के अनेक आत्मचरितो को पढने का अवसर हमे मिला है और हम बिना किसी सकोच के कह सकते है कि रामप्रसाद 'बिस्मिल' का आत्मचरित हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ आत्मचरित है। जिन परिस्थितियो मे वह लिखा गया था, उनके बीच मे से गुज़रने का मौका लाखो मे एकाध को ही मिल सकता है। जरा इस वाक्य पर ध्यान दीजिए—

"आज १६ दिसम्बर, १९२७ को निम्नलिखित पक्तियो का उल्लेख कर रहा हूँ, जब कि १९ दिसम्बर १९२७ ई० सोमवार (पौष कृष्ण ११ सम्वत् १९८४ वि०) को ६॥ बजे प्रात काल इस शरीर को फाँसी पर लटका देने की तिथि निश्चित हो चुकी है। अतएव नियत समय पर इह-लीला सवरण करनी होगी ही।"

और १९ दिसम्बर को बन्देमातरम् और भारत माता की जय कहते हुए वे फाँसी के तख़्ते के निकट गये। चलते समय वह कह रहे थे—

> "मालिक तेरी रज़ा रहे और तू ही तू रहे,
> बाक़ी न मैं रहूँ, न मेरी आरज़ू रहे।

जब तक कि तन में जान, रगों में लहू रहे,
तेरा ही ज़िक्र या तेरी ही जुस्तजू रहे।"

तत्पश्चात उन्हो ने कहा—

"I wish the downfall of the British Empire"

(मैं ब्रिटिश साम्राज्य का विनाश चाहता हूँ) फिर वह तख्ते पर चढे और 'विश्वानिदेव सवितुर्दुरितानि' मन्त्र का जाप करते हुए फन्दे से झूल गए !

वह शानदार मौत जो 'बिस्मिल' को प्राप्त हुई, शायद लाखो मे दो-चार को ही मिल सकती है।

बिस्मिल का जन्म सन् १८९७ मे हुआ था और सन् १९२७ मे वह शहीद हुए, यानी कुल जमा उन्होने तीस वर्ष की उम्र पाई, जिनमे ११ वर्ष क्रान्तिकारी जीवन मे व्यतीत हुए।

क्या भाषा और क्या भाव, दोनो की दृष्टियो से बिस्मिल का आत्मचरित एक अद्भुत ग्रन्थ है। जब हमने पहले-पहल पुस्तक को समाप्त किया, तो हम स्तब्ध रह गए। सोचने लगे कि इतना महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ इतने वर्षों तक उपेक्षित क्यो पडा रह गया ? निस्सन्देह 'काकोरी के शहीद' नामक पुस्तक को ब्रिटिश सरकार ने जब्त कर लिया था, फिर भी स्वाधीनता प्राप्ति के बाद तो वह छप ही सकती थी। शायद उससे पहले भी छप जाती। बहुत कुछ सोचने के बाद हम इस परिणाम पर पहुँचे कि सारा दोष उस कृतघ्नतापूर्ण वातावरण का है, जो इस देश मे वर्षो से व्याप्त है। क्या राजनीतिक और क्या साहित्यिक, दोनो ही क्षेत्रो मे कृतज्ञता नामक गुण का लोप हो रहा है और उसकी जिम्मेदारी मुख्यतया लेखको तथा समालोचको पर है। पिछले वर्षो मे सैकडो-सहस्रो ही वृथापुष्ट पोथे हिन्दी प्रकाशको ने छापे होगे, पर बिस्मिल के इस ओजस्वी आत्मचरित पर किसी की निगाह नही पडी ! क्या डेढ सौ पृष्ठ की किताब का छापना भी कोई असम्भव कार्य था ? पर रीडरबाज़ी मे व्यस्त हिन्दी लेखको तथा प्रकाशको मे इतनी कल्पना-शक्ति या जीवन-शक्ति कहाँ है, जो वे बिस्मिल के उज्ज्वल आत्मचरित की ओर देखते !

क्या हाथ देखता है मेरा छोड दे तबीब !
ह्याँ जान ही बदन में नही नब्ज़ क्या चले ?

जिस कृतघ्न हिन्दी-जगत मे शहीद शिरोमणि गणेशशंकर विद्यार्थी द्वारा जेल मे किया हुआ विक्टर ह्यूगो के 'लै मिजरेबिल' का अनुवाद २५।२६ वर्ष से पडा हुआ है, वहाँ बिस्मिल की आत्मकथा को कौन पूछता ? भला हो श्री रामलालजी पुरी का, जिन्होंने मेरे आग्रह पर इस ग्रन्थ को छपाना स्वीकार कर लिया।

बिस्मिल ने अपने पूर्वजो का जो वृत्तान्त प्रारम्भिक पृष्ठो मे दिया है, वह वडा आकर्षक है। वे लोग ग्वालियर राज्य के चम्बल के किनारे के ग्रामो के निवासी थे। विस्मिल के बाबा गृह-कलह के कारण अपना गाँव छोडकर शाहजहाँपुर आ बसे थे। यहाँ उनकी दादी को जो घोर कष्ट सहने पडे उनकी कथा वडी हृदय-वेधक है। विस्मिल ने जो कुछ लिखा है वह अपने हृदय के रक्त से लिखा है और कही-कही तो उनका गद्य अपनी भाषा तथा भाव के कारण उच्च कोटि के काव्य की सीमा तक पहुँच गया है। उदाहरण के लिए अशफाक पर लिखे गए उनके शब्द गद्य-काव्य कहे जा सकते है—

"मुझे यदि सन्तोष है तो यही कि तुमने ससार मे मेरा मुख उज्ज्वल कर दिया। भारत के इतिहास मे यह घटना भी उल्लेख योग्य हो गई कि अशफाक उल्ला ने क्रान्तिकारी आन्दोलन मे योग दिया। जैसे तुम शारीरिक बलशाली थे, वैसे ही मानसिक वीर तथा आत्मा से उच्च सिद्ध हुए। इन सबके परिणाम-स्वरूप अदालत मे तुमको मेरा सहकारी (लेफ्टीनेण्ट) ठहराया गया और जज ने हमारे मुकदमे का फैसला लिखते समय तुम्हारे गले मे भी जयमाल (फाँसी की रस्सी) पहना दी। प्यारे भाई, तुम्हे यह समझ कर सन्तोष होगा कि जिसने अपने माता-पिता की धन-सम्पत्ति को देश-सेवा मे अर्पण करके उन्हे भिखारी बना दिया, जिसने अपने सहोदर के भावी भाग्य को भी देश-सेवा की भेट कर दिया, जिसने अपना तन-मन-धन सर्वस्व मातृ-सेवा मे अर्पण करके अपना अन्तिम बलिदान भी दे दिया, उसने अपने प्रिय सखा अशफाक को भी उसी मातृभूमि की भेट चढा दिया।

'असगर' रहीम इश्क में हस्ती ही जुर्म है,
रखना कभी न पाँव यहाँ सिर लिए हुए।

यह बतलाने की आवश्यकता नही कि काकोरी-केस के अभियुक्तो मे अशफाक का चरित्र ही सर्वश्रेष्ठ रहा, अत उनके बलिदान पर बिस्मिल का अभिमान सर्वथा स्वाभाविक था।

अपनी पूज्य माता जी के विषय मे लिखते हुए भी बिस्मिल की कलम ने कमाल कर दिखाया है—

"इस ससार मे मेरी किसी भी भोग-विलास तथा ऐश्वर्य की इच्छा नही। केवल एक तृष्णा है, वह यह कि एक बार श्रद्धापूर्वक तुम्हारे चरणो की सेवा करके अपने जीवन को सफल बना लेता। किन्तु यह इच्छा पूर्ण होती नही दिखाई देती और तुम्हे मेरी मृत्यु का दुखपूर्ण सवाद सुनाया जाएगा। माँ, मुझे विश्वास है कि तुम यह समझकर धैर्य धारण करोगी कि तुम्हारा पुत्र माताओ की माता—भारत माता—की सेवा मे अपने जीवन को बलि-वेदी की भेट कर गया और उसने तुम्हारी कुक्षि को कलकित न किया। अपनी प्रतिज्ञा मे दृढ रहा। जब स्वाधीन भारत का इतिहास लिखा जायगा, तब उस के किसी पृष्ठ पर उज्ज्वल अक्षरो मे तुम्हारा भी नाम लिखा जायगा।"

बिस्मिल ने आगे चलकर लिखा था—

"जन्मदात्री! वर दो कि अन्तिम समय भी मेरा हृदय किसी प्रकार विचलित न हो और तुम्हारे चरण-कमलो को प्रणाम कर मै परमात्मा का स्मरण करता हुआ शरीर त्याग करूँ।"

निस्सन्देह पूज्य माता के आशीर्वाद से बिस्मिल ने सर्वथा धैर्यपूर्वक अपने प्राणो का बलिदान किया। इस आत्मचरित की उपमा हम किसी महत्त्वपूर्ण नाटक से दे सकते हैं, जिसके दृश्य एक-से-एक बढकर रोमाचकारी हो। एक दृश्य के बाद दूसरा दृश्य आता है और हृदय पर अमिट छाप छोड जाता है। जहाँ बिस्मिल की निर्भयता, दृढ़ता और लगन तथा नेतृत्व का प्रभाव हमारे ऊपर पड़ता है, वहाँ उन के मनुष्यत्व की भी गहरी छाप पडती है। विश्वासघात करके वह आसानी से भाग सकते थे, पर उन्होंने ऐसा नही किया। भागने के कई मौके उन्होंने जान-बूझ कर छोड़ दिये।

पुस्तक मे स्पष्टवादिता है, अपने सगठन की त्रुटियो का ज़िक्र है और साथी-सगियो की खरी आलोचना भी है। बन्धुवर श्रीकृष्णदत्त पालीवाल ने हमे बताया था कि पुस्तक के कुछ अश इस कारण छोड़ दिये गए थे कि उनमे

जरूरत से ज्यादा स्पष्टवादिता थी । यह सम्भव है कि अपने साथी-सगियो पर लिखे गए उनके विवरण मे कुछ कठोरता प्रतीत हो, शायद वे भ्रमात्मक भी हो, पर हमे यह बात न भूलनी चाहिए कि बिस्मिल अत्यन्त असाधारण परिस्थिति मे अपना आत्मचरित लिख-लिख कर जेल से बाहर भेज रहे थे। आश्चर्य इस बात का है कि उन्होंने अपने मस्तिष्क का सन्तुलन इतनी मात्रा मे किस प्रकार कायम रखा ! बिस्मिल लिखते हैं—

"अन्त मे अधिकारियो ने यह इच्छा प्रकट की कि यदि मैं बगाल का सम्बन्ध बताकर कुछ बोलशेविक सम्बन्ध के विषय मे अपने बयान दे दूं, तो वह मुझे थोडी-सी सज़ा कर देंगे और थोडे दिनों बाद ही जेल से निकाल कर इग्लैण्ड भेज देंगे और पन्द्रह हजार रुपये पारितोषिक सरकार से दिला देंगे। मैं मन-ही-मन बहुत हँसता था। अन्त मे एक दिन फिर मुझसे जेल मे मिलने को गुप्तचर विभाग के कप्तान साहब आए। मैंने अपनी कोठरी से निकलने से ही इन्कार कर दिया। वह कोठरी मे आकर बहुत-सी बाते करते रहे, अन्त मे परेशान होकर चले गए।"

बिस्मिल यद्यपि कुल जमा तीस वर्ष के ही थे, पर उनकी बुद्धि परिपक्व हो चुकी थी। तत्कालीन परिस्थिति मे वह सशस्त्र क्रान्ति की निरर्थकता को समझ गये थे और उन्होने लिखा था—

"नवयुवको को मेरा अन्तिम सन्देश यही है कि वे रिवाल्वर या पिस्तौल को अपने पास रखने की इच्छा को त्याग कर सच्चे देश-सेवक बनें। पूर्ण स्वाधीनता उनका ध्येय हो और वे वास्तविक साम्यवादी बनने का प्रयत्न करते रहे।"

बिस्मिल के इस आत्मचरित के मुकाबले का ग्रन्थ केवल हिन्दी साहित्य मे ही नही, वरन् भारत की अन्य भाषाओ के साहित्य मे भी मुश्किल से मिलेगा।

चैकोस्लोवाकिया के शहीद फूचिक ने भी ऐसी ही परिस्थिति मे अपना चरित बिस्मिल के आत्मचरित के सोलह वर्ष बाद लिखा था और वह भारत की नौ भाषाओ मे प्रकाशित हो चुका है ! हमारे साम्यवादी भाई इस बात पर उचित अभिमान करते है, पर बिस्मिल का आत्मचरित एक बार छप कर जब्त हुआ सो फिर दूसरी बार तीस वर्ष बाद छप रहा है !

हम लोगो मे से प्राय सभी खाट पर पड कर मरेंगे—कोई ज्वर से, तो कोई निमोनिया से और कोई अन्य बीमारी से और कितने ही जीवन मे ही पिलपिले दिमाग के वनकर मृतावस्था को प्राप्त हो जाएँगे पर बिस्मिल-जैसी शानदार मृत्यु शायद ही किसी को प्राप्त होगी।

बिस्मिल ने आत्मचरित का प्रारम्भ इन पक्तियो मे किया है—

"क्या ही लज्जत है कि रग रग से यह आती है सदा,
दम न ले तलवार जब तक जान बिस्मिल में रहे।"

और अन्त इन शब्दो से किया है—

"मरते 'बिस्मिल' 'रोशन' 'लहरी' 'अशफाक' अत्याचार से
होगे पैदा सैकडो इनके रुधिर की धार से"

ज्योतिष मे हमारा विश्वास नही, भविष्यवाणी हम करते नही, पर इतना हम अवश्य कह सकते है कि आज नही तो कल बिस्मिल का यह आत्मचरित हिन्दी का सर्वश्रेष्ठ चरित घोषित किया जायगा और केवल भारतीय भाषाओ मे ही नही, बल्कि अग्रेजी, रूसी तथा अन्य भाषाओ मे भी इसके अनुवाद प्रकाशित होगे।

९९, नार्थ ऐवेन्यू, नई दिल्ली। —बनारसीदास चतुर्वेदी

पुनश्च :

इस आत्मकथा के विषय मे हमने एक लेख पत्रो मे छपवाया था। जिसे पढकर बाबा राघवदास जी ने अपनी ग्रामदान पद-यात्रा से २७ दिसम्बर १९५७ को एक पत्र हमे भेजा था।

पत्रोत्तर पता
रुद्रप्रणाय आश्रम
नरसिहपुर (मध्य-प्रदेश)

ता० २७-१२-५७
सत् आनन वर्ष
ग्रामदान पद-यात्रा
बालघाट

श्रीमान् पण्डित जी,

प्रणाम !

आपका अमर शहीद श्री रामप्रसाद जी 'बिस्मिल' की आत्मकथा पर लेख पढा, (२२-१२-५७ के साप्ताहिक हिन्दुस्तान मे) और मुझे उससे बडी प्रेरणा

मिला। क्या उस पुस्तक को मैं पढ सकूँगा ? मैंने शाहजहाँपुर पद-यात्रा मे उनकी पूज्य माता जी के दर्शन किये थे। उनके योगाभ्यास के स्थान पर गया था। जब गोरखपुर मे उनको फाँसी हो गई थी उस समय उनके पावन दर्शन करने का अवसर पा चुका हूँ। उनके अस्थि को ताम्र पात्र मे मैंने रखकर (आश्रम वरहज देवरिया मे) उस पर चवूतरा बनाया है। इस क्रान्तिकारी पुरुष को मैं कैसे भुला सकता हूँ ? उनके साथी श्री चन्द्रशेखर आजाद भी साथ मे रहे है। उनसे भी मेरा फरारी जीवन मे कुछ सहयोग रहा है। इस आत्मकथा का परिचय देकर मेरे लिए तो आपने एक आवश्यक प्रेरणा दी है। मेरा पत्रोत्तर पता—श्री कटारे वकील, वालघाट, मध्य-प्रदेश। मै इस समय मध्य-प्रदेश मे ग्रामदान पद-यात्रा कर रहा हूँ। —राघवदास

स्वर्गीय वावा राघवदास का अपनी युवावस्था मे क्रान्तिकारियो से घनिष्ठ सम्बन्ध था और उनके वारे मे अधिकाधिक जानने के लिये वे अपने अन्तिम दिनो तक उत्सुक रहे। अपने स्वर्गवास के अठारह दिन पूर्व उन्होने यह चिट्ठी मुझे भेजी थी। मैंने उन्हे उत्तर मे लिख दिया था कि पुस्तक छपते ही उनकी सेवा मे भेज दी जायगी। हमे इस बात का दुख है, कि यह पुस्तक श्रद्धेय वावा जी के जीवन काल मे नही छप सकी।

अमर शहीद विस्मिल की माता जी का एक शब्द चित्र, जिसे वन्धुवर श्री शिव वर्मा ने खीचा था, हमने परिशिष्ट मे दे दिया है। वह उनकी सन् १९४६ की डायरी का एक पृष्ठ है। शायद उसके डेढ साल वाद उत्तर-प्रदेश की सरकार ने उन्हे साठ रुपये महीने की पेंशन दे दी थी, जो उन्हे अपने जीवन के अन्तिम दिनो तक मिलती रही। उनके स्वर्गवास की तिथि का पता हम नही लगा सके। शायद वह पेंशन उन्हे ७।८ वर्ष मिली होगी।

विस्मिल के छोटे भाई का स्वर्गवास कभी का हो चुका था। अव उनकी एक मात्र वहन श्री शास्त्री देवी जीवित हैं। वे विधवा है। उनका पता है—कोसवाँ जिला मैनपुरी। मेरे अनुरोध पर श्री ओङ्कार नाथ पाण्डेय मिश्राना, मैनपुरी) उनसे मिलने गये थे। उन्होने अपने पत्र मे मुझे लिखा है—

"मैंने श्री शास्त्री देवी जी के दर्शन किये। वे वहुत वर्षो से विधवा हैं और उनका लडका हरिश्चन्द्र सिंह पाँचवी कक्षा तक पढा हुआ है और वह इस

समय एक मोटर ट्रक पर काम करता है, श्रीमती शास्त्री देवी ने बतलाया कि उसके पास चालक का लाइसेस नही है और वह बतौर क्लीनर के काम करता है। दशा दयनीय है। उनका मकान गली मे एक कोठा है और उसके सामने एक आँगन, जिसकी चौडाई दो गज से अधिक न होगी। तीन चार बीघा खेत है। हरिश्चन्द्र की आयु २५।२६ वर्ष की होगी। अभी तक शाहजहाँपुर मे दोनो रहते थे। वहाँ इनकी माँ को ६०) माहवार की पेशन सन् ४७ से मिलती थी। उसी मे इनका निर्वाह होता था। दो वर्ष हुए इनकी माता का देहान्त हो गया, अत वहाँ का मकान पन्द्रह सौ रुपये मे बेचकर यहाँ आ गईं। वे कहती थी कि उस रुपये से कर्जा अदा किया गया। गत वर्ष हरिश्चन्द्र का विवाह भी हो गया है। इस समय इनके सामने तीन प्राणियो के निर्वाह का प्रश्न है। मेरी राय मे इनको ५०) महावार की पेशन मिल जाय तो इनका निर्वाह हो सकता है। हरिश्चन्द्र भी विना किसी सावन के पढने से रह गया और ऐसी दशा मे अधिक अर्जन करने मे असमर्थ है।"

उत्तर-प्रदेशीय सरकार से हमारी करबद्ध प्रार्थना है कि वह बिस्मिल की माँ की पेशन उनकी बहन के नाम जारी कर दे। इस पुण्य कार्य से बिस्मिल की आत्मा को स्वर्ग मे कुछ सन्तोष तो होगा ही। श्री सम्पूर्णानन्द जी तथा श्री कमलापति जी त्रिपाठी की सहृदयता पर हमे विश्वास है।

—बनारसीदास चतुर्वेदी

भूमिका

परतन्त्र भारत की उत्पीडक ब्रिटिश सरकार की अदालत ने प० रामप्रसाद विस्मिल को उत्तर-प्रदेश मे सशस्त्र क्रान्तिकारी दल का मुख्य सगठनकर्त्ता और नेता घोषित किया और काकोरी षड्यन्त्र केस मे उन्हे प्राणदण्ड—सशस्त्र क्रान्तिकारी देशभक्ति का सर्वोच्च पुरस्कार—प्रदान किया। विस्मिल जी ने देशवासियो से अपनी कुछ 'अन्तिम बात' के रूप मे यह आत्मकथा गोरखपुर जेल की फाँसी की कोठरी मे फाँसी पर झूलने के तीन दिन पहले तक अधिकारियो की नज़र बचा कर लिखी थी। उन्ही के शब्दो मे सुनिये

" · आज १६ दिसम्बर १६२७ ई० को निम्नलिखित पक्तियो का उल्लेख कर रहा हूँ, जब कि १६ दिसम्बर १६२७ ई० सोमवार पौष कृष्ण ११ सम्वत् १६८४ वि० को ६॥ बजे प्रात काल इस शरीर को फाँसी पर लटका देने की तिथि निश्चित हो चुकी है।"

और जिस मनोदशा मे और जिस भावना से यह आत्मकथा लिखी गई थी, उसे शहीद की इन पक्तियो मे ही देखिये

" इसी कोठरी मे यह सुयोग प्राप्त हो गया कि अपनी कुछ अन्तिम बात लिख कर देशवासियो के अर्पण कर दूं। सम्भव है कि मेरे जीवन के अध्ययन से किसी आत्मा का भला हो जाय। बड़ी कठिनता से यह शुभ अवसर प्राप्त हुआ।

महसूस हो रहे हैं बादे फना के झोंके,
खुलने लगे हैं मुझ पर इसरार जिन्दगी के।

यदि देशहित मरना पड़े मुझ को अनेको बार भी,
तो भी न मैं इस कष्ट को निज ध्यान में लाऊँ कभी।
हे ईश! भारतवर्ष में शतबार मेरा जन्म हो,
कारण सदा ही मृत्यु का देशोपकारक कर्म हो।

बादे फना=नाश की हवा।

इसरार=आग्रह।

क्या हिन्दी ससार मे शहीद के स्वय अपने रक्त से फाँसी की कोठरी मे मृत्यु की छाया मे लिखी कोई अन्य साहित्यिक कृति भी है ? श्री बनारसीदास चतुर्वेदी ने इसकी तुलना, इस सम्बन्ध मे नाज़ी जर्मनी के गेस्टापो के अत्याचारो के शहीद वीर जूलियस फूचिक की पुस्तक से की है, जिसका अनुवाद नोट्स फ्राम दि गैलोज़ (Notes From The Gallows) के नाम से अग्रेजी मे हुआ है और जिसके अनेको अनुवादो के कई सस्करण विभिन्न भाषाओ मे सहस्त्रो की सख्या मे निकल चुके है और वितरित हो चुके हैं। शहीद वीर जूलियस फूचिक ने भी अपने ये नोट्स अपनी काल-कोठरी मे अधिकारियो की नज़र बचा कर कागज के टुकडो पर पेन्सिल से लिखे थे और उन्हे एक सहानुभूति रखने वाले ज़ैक पहरेदार के द्वारा बाहर भेजा था। फूचिक ने यह जून १९४३ मे किया था। उससे १६ वर्ष पूर्व श्री बिस्मिल ने भी अधिकारियो की नजर बचाकर अपनी फाँसी की कोठरी मे अपनी यह आत्मकथा रजिस्टर के आकार के कागजो पर पेन्सिल से लिखी थी। इन कागजो को उन्होने एक सहृदय जेल के वार्डर के हाथ बाहर गोरखपुर के सुप्रसिद्ध काँग्रेसी नेता 'स्वदेश' के सम्पादक श्री दशरथप्रसाद द्विवेदी के पास भेजा था। पूरी आत्मकथा तीन खेपो मे बाहर आई थी। अन्तिम खेप तो बिस्मिल जी के फाँसी पाने के एक दिन पहले ही आई थी। दल के सदस्य श्री शिव वर्मा को (जिन्हे बाद मे लाहौर षड्यन्त्र केस मे आजीवन कारावास का दण्ड मिला था) ये सब पूरे कागज श्री दशरथप्रसाद जी से प्राप्त हो गए थे। श्री शिव वर्मा ने बिस्मिल जी के फाँसी पाने के एक दिन पूर्व उनकी माता जी के साथ एक सम्बन्धी का छद्म बना कर जेल मे बिस्मिल जी से अन्तिम मुलाकात भी की थी। अन्त मे आत्मकथा के ये सब कागज अमर शहीद श्री गणेशशकर विद्यार्थी के पास पहुँचा दिए गए थे।

यहाँ यह उल्लेख कर देना ज़रूरी है कि बाहर क्रान्तिकारी दल मे अत्यन्त व्यस्त श्री भगतसिंह, चन्द्रशेखर आज़ाद आदि साथियों की राय यह हुई कि बिस्मिल जी के इस आत्मचरित मे दल के लोगो मे पारस्परिक अविश्वास, कटुता और अन्य प्रकार की वैयक्तिक कमजोरियो आदि पर यथार्थ लेकिन आवश्यक से अधिक जोर पड गया है, जब कि उसके सन्तुलन मे उन बातो और साथियो के उन गुणो का बखान प्राय उतना नही हुआ है, जितना कि उचित रूप मे होना चाहिए था, और जिनके कारण ही ये सब कमियाँ होते हुए भी ये सगठन चलते

रहे और उनके कार्य-कलाप मे, आत्म-बलिदान, बन्धु-प्रेम, विश्वास, अनुशासन की भावना, सहन-शक्ति की पराकाष्ठा की अभीष्ठ अभिव्यक्ति सदैव प्रचुर मात्रा मे होती रही। और यह बात तो है ही कि आत्मकथा मे सशस्त्र क्रान्तिकारी आन्दोलन के उस समय 'वक्त' के पहले की बात होने और क्रान्तिकारियो की मनोदशा 'नकटा पथियो' जैसी होने की बात, जो निराशा और अवसाद के स्वर मे कही गई है, श्री भगतसिंह और चन्द्रशेखर आज़ाद आदि साथियो को, जो प्राण होम रहे थे और अन्तत जिन्होंने होम भी दिए, भला कैसे रुचिकर हो सकती थी ? हाँ, श्री अशफाकुल्ला के सम्बन्ध मे बिस्मिल जी ने जो कुछ लिखा है उसे पढकर सब गद्‌गद् हो गये थे। वह वृत्तान्त बडा ही स्फूर्तिप्रद है और हिन्दू मुस्लिम ऐक्य की भावना को बढाने वाला, इसे सब मुक्त कण्ठ से स्वीकार करते थे। फाँसी की कोठरी मे लिखी गई इस आत्मकथा की प्रेरक शक्ति और भावमूल्य से भला कौन सहृदय व्यक्ति इन्कार कर सकता था ? और एक शहीद की देश के लोगो के नाम वसीयत की गई इस धरोहर को कौन हज़म कर सकता था ? परन्तु दूसरी ओर उस समय उसका प्रकाशन भी तो कोई आसान काम नही था। नाज़ी जर्मनी के परास्त हो जाने के बाद फूचिक की अमर कृति 'नोट्स फ्राम दि गैलोज़' के प्रकाशन मे तो कोई जोखिम रह ही नही गई थी। परन्तु ब्रिटिश सरकार के भारत मे रहते हुए फाँसी की कोठरी मे एक शहीद के द्वारा चोरी छिपी लिखी गई और बाहर भेजी गई इस आत्मकथा के प्रकाशन मे महान् जोखिम स्पष्ट ही थी। और यह बडे श्रेय की बात है कि यह आत्मकथा श्री गणेशशकर विद्यार्थी जी की देखरेख मे प्रताप प्रेस, कानपुर से प्रकाशित 'काकोरी के शहीद' नामक पुस्तक के अग्रभाग मे छपी। साथियो की राय मे इस आत्मकथा के अन्त मे जो अवसाद और निराशाजनक बातें आ गईं थी अथवा पारस्परिक कटुता, वैमनस्य आदि पर अनावश्यक बल पड गया था, उसका सन्तुलन उक्त पुस्तक मे प्रकाशित अन्य क्रान्तिकारियो के विवरणो से यत्किन्चित सन्तोषप्रद रीति से हो गया।

विश्वास किया जाता है कि श्री गणेशशकर विद्यार्थी इस आत्मकथा को भली भाँति देख गए थे। इस पवित्र धरोहर मे किसी को मीनमेष करने, उसकी भाषा सुधारने आदि का कोई अधिकार नही, इस आत्मकथा के सम्पादन के सम्बन्ध मे विद्यार्थी जी की यही धारणा रही। फिर भी आत्मकथा मे भूल

से भी ऐसी बातें नही जाने दी जा सकती थी, जिनसे पुलिस को कुछ और सुराग मिलता और अन्य क्रान्तिकारी विपत्ति मे पडते या अन्यथा सरकार का लाभ और स्वातन्त्र्य-आन्दोलन की क्षति होती। अतएव प्राप्त आत्मकथा में से वे ही बाते अपरिहार्य रूप मे निकाली या सशोधित की गई होगी, जिनसे ऐसी कुछ हानि होने की आशका स्पष्ट ही रही होगी।

आत्मकथा मे पारस्परिक कटुता, वैमनस्य आदि की बातो पर जो जरूरत से ज्यादा ज़ोर पड गया है तथा क्रान्तिकारी दल के जीवन का उज्ज्वल प्रकाशपूर्ण पक्ष यथेष्ट रूप मे नही उभर पाया, उसका कारण भली भाँति समझा जा सकता है। यह आत्मकथा जेल मे फांसी की कोठरी मे लिखी जा रही थी। सर्वविदित है कि फाँसी की सजा पाये कैदी को सबसे अलग एक अलहिदा कोठरी मे रखा जाता है, उसके ऊपर एक विशेष पहरेदार चौकी नियुक्त रहती है, जो उस पर बराबर चौबीसो घण्टे नजर रखती है। रोज सबेरे शाम नियमपूर्वक उसकी और उसकी कोठरी की तलाशी ली जाती है, तथा बीच-बीच मे अकस्मात् भी जेल के अधिकारियो द्वारा तलाशी ली जाती है। अतएव यह खतरा तो सदा ही था कि यह आत्मकथा कभी भी सरकार के हाथो मे पड सकती थी। इसलिए क्रान्तिकारी दल के सदस्यो और उससे सहानुभूति रखने वाले व्यक्तियो के नाम तो इसमे लिखे ही नही जा सकते थे, उनके कार्यों की ओर सकेत किया जाना भी उनके लिए खतरे से खाली नही था, और इस सब को उस समय प्रकाशित तो किसी भी भाँति नही किया जा सकता था। अत. मजबूरी तौर पर ही दल के जीवन की सुनहरी बातो को बिस्मिल जी अपने आत्मचरित मे नही दे सकते थे। श्री अशफाकुल्ला खाँ को फाँसी की सज़ा हो ही चुकी थी अतएव उनके सम्बन्ध मे बिस्मिल जी खुल कर लिख सकते थे और उसमें उन्होने अपनी सहृदयता का पूरा परिचय दिया ही है।

अस्तु, 'काकोरी के शहीद' मे यह आत्मकथा श्री गणेश शंकर विद्यार्थी की देखरेख मे छपी और इतिहास इस बात का साक्षी है कि इस पुस्तक के प्रकाशन के बाद गुप्त सशस्त्र क्रान्तिकारी आन्दोलन का बल बढा ही, कम नही हुआ। बिस्मिल जी का "दि हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन," श्री भगतसिह, चन्द्रशेखर आज़ाद आदि के नेतृत्व मे "दि हिन्दुस्तान सोशलिस्ट

रिपब्लिकन एसोसिएशन" या "आर्मी" के रूप मे पुनर्गठित हुआ और पहले से अधिक अच्छी तरह चला, यद्यपि उसमे भी ऐसे अविश्वास और कटुता की बाते हुई, और लाहौर षड्यन्त्र केस चलने पर दल मे पुन अप्रूवर और अन्य भाँति कमजोर लोग निकले, परन्तु उनमे से मृत्युंजयी अमर शहीद जितेन्द्रनाथ दास जैसे शक्तिशाली, भगतसिह जैसे स्नेही विश्वासी आदर्श वीर भी निकले। दल मे जो पारस्परिक विश्वास प्रेम और चारित्रिक दृढता की अभिव्यक्ति होती थी, वह अविश्वास कटुता और कमजोरी से कही अधिक थी और इसी के बल पर ऐसे दल चले और उन्होंने यशस्वी कार्य भी किए और जतीनदास, चन्द्रशेखर आज़ाद, भगतसिह, राजगुरु, सुखदेव, आदि जैसे आदर्श चरित्र देश के नौजवानो को मिले। देश को स्वतन्त्र कराने मे जिन लोगो ने सहर्ष आत्म-बलिदान किया है, उनको इस बलिदान के लिए प्रेरित करने मे और उसके लिए शक्ति प्रदान करने मे इन आदर्श चरित्रो का कितना हाथ है, इसे कौन नाप सकेगा ?

बिस्मिल जी की इस आत्मकथा और काकोरी के शहीद मे वर्णित अन्य देश भक्तों के त्याग और बलिदान के वर्णन ने व्यक्तिगत रूप मे मुझे कितना प्रभावित किया और मुझे कितना बल प्रदान किया, इसकी यहाँ चर्चा करना अनुचित न होगा। दल के जीवन मे अन्य और सभी की भाँति मुझे भी अविश्वास, कटुता, आदि का सामना करना पड़ा, मेरे सामने भी साथी अप्रूवर (इकबाली माफीशुदा सरकारी गवाह) बन कर अपनी चमडी बचाने और साथियो को फँसाने आए। मुझे भी यह बुरा, बहुत बुरा लगा। परन्तु इसकी तुलना मैं जो आत्म-बलिदान-पूर्ण स्नेह, विश्वास, सौहार्द मैं श्री चन्द्रशेखर आज़ाद, भगतसिह आदि साथियों से प्राप्त कर चुका था और उस समय भी कर रहा था तथा श्री रामप्रसाद बिस्मिल आदि पुराने शहीदो और जतीनदास आदि की शहादत से जो बल मुझे मिल रहा था, उसने मेरे मन मे किसी प्रकार की कटुता या निराशा नही उत्पन्न होने दी। इन्ही अप्रूवरो पर मैंने दल की आज्ञानुसार गोली चलाई, सो किसी वैयक्तिक कटुता की भावना से नही, वास्तव मे मेरे मन मे अपने इन साथियो मे कमजोरी आ जाने के प्रति दया मिश्रित खेद ही था। इन अप्रूवरो के विश्वासघात के प्रत्यक्ष अनुभव के बाद भी उन पर गोली चला कर फाँसी जाने की तैयारी का बल भी मुझे

बिस्मिल आदि शहीदो के चरित्र, साथियो की दृढता, आत्म-बलिदान-पूर्ण स्नेह, विश्वास आदि की अनुभूति से ही मिला था।

बिस्मिल जी की इस आत्मकथा का ऐतिहासिक मूल्य तो स्पष्ट ही है। इससे सशस्त्र गुप्त षड्यन्त्रात्मक स्वातन्त्र्य सगठनो के उत्थान, सचालन, विघटन, पुनर्गठन आदि पर यथार्थवादी प्रकाश पडता है। इसके सिवाय स्वातन्त्र्य के लिए देश के नौजवानो की छटपटाहट, उनके प्राणो के स्पन्दन की छटा इसमे देखी जा सकती है। प० रामप्रसाद बिस्मिल किसी विशिष्ठ सुख धनाढ्य परिवार मे उत्पन्न नही हुए थे। कोई बड़ी शिक्षा दीक्षा सम्पन्नता का आडम्बर भी उनके साथ सलग्न नही था। वे स्वाधीनता के लिए छटपटाती हुई आम जनता और उसके लिए वीरता से प्राणोत्सर्ग कर सकने की साध रखने वाले नौजवानो के सच्चे प्रतिनिधि कहे जा सकते हैं। वे एक सीधे साधे वीर देशभक्त थे, कोई प्रौढबुद्धि विचारक नही। देश के नौजवानो की आम राजनीतिक चेतना जैसे अनुभव से समाजवादी मार्ग की ओर विकसित होती जा रही थी, इसे बिस्मिल जी की इस आत्मकथा मे भी भली भाँति देखा जा सकता है। उन्होने अपनी फांसी की कोठरी मे यह सच्चे दिल से अनुभव किया कि जिस क्रान्तिकारी (आतकवादी) मार्ग पर वे स्वय और ये गुप्त षड्यन्त्रवादी सगठन चलते रहे हैं, उनसे कुछ विशेष लाभ नही होगा। यद्यपि इस तथ्य की ओर भी उन्होने दुर्लक्ष नही किया है कि इस मार्ग पर चल कर नौजवानो ने जो बलिदान किया है वह व्यर्थ नही हुआ और देश की आम राजनीतिक जाग्रति मे और स्वातन्त्र्य सघर्ष के विकास मे इन बलिदानो का महान् मूल्य है, फिर भी उन्होंने फाँसी के तख्ते से अपनी इस अनुभूनि को प्रकाशिन करते हुए अपने साथियो और देश के नौजवानो और समस्त स्वातन्त्र्य प्रेमियो को सामूहिक सगठनो, किसान-मजदूर आन्दोलनो मे तथा कांग्रेस मे कार्य करने के लिए कहा। यद्यपि ऐसे गुप्त सशस्त्र आतकवादी सगठन तुरन्त भी समाप्त नही हो गए, परन्तु ऐसे सगठनो मे काम करने वालो पर और आम सशस्त्र विद्रोहात्मक आन्दोलन पर इसका असर पडा ही, क्योकि यह अनुभृति केवल श्री बिस्मिल जी की ही अनुभूति नही थी, यह तो समय की आम अनुभूति भी थी। बिस्मिल जी ने लिखा है "भारत की भावी सन्तान तथा नवयुवक वृन्द क्रान्तिकारी (गुप्त सशस्त्र-भ०) सगठन करने की अपेक्षा जनता की प्रवृत्ति को देश सेवा की ओर लगाने का प्रयत्न करें,

श्रमजीवी तथा कृषको का सगठन करके उनको जमीदारो तथा रईसो (पूंजीपतियो-भ०) के अत्याचारो से बचावें। भारतवर्ष के रईस तथा जमीदार सरकार के पक्षपाती हैं। मुख्य-श्रेणी के लोग किसी न किसी प्रकार इन्हीं के आश्रित हैं।" बिस्मिल जी के यह सब लिखने के पहले ही उनके दल के अवशिष्ट लोगो मे से सर्व श्री शिव वर्मा, विजय कुमार सिनहा, सुरेन्द्रनाथ पाण्डे, ब्रह्मदत्त, आदि कानपुर के कार्यकर्त्ता गुप्त सशस्त्र क्रान्तिकारी सगठन मे काम करने के साथ ही साथ श्री गणेशशकर विद्यार्थी के नेतृत्व मे कानपुर मजदूर सभा में काम करने लगे थे (इसकी सूचना सम्भवत बिस्मिल जी को नही मिली थी) और पजाब मे नौजवान भारत सभा कायम हो चुकी थी, और उसका घोषणा पत्र भी प्रकाशित हो चुका था। इस सभा के कर्णधारो मे थे श्री भगतसिंह, भगवतीशरण वोहरा, सुखदेव, केदारनाथ सहगल, सोहनसिंह जोश आदि। और यह इसी प्रवृत्ति का परिणाम था कि बिस्मिल जी का सगठन "दि हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन" भगतसिंह, चन्द्रशेखर आजाद आदि के नेतृत्व मे "दि हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन" या "आर्मी" के रूप मे विकसित हुआ। नौजवान भारत सभा एक प्रकार से इसी का एक खुला पक्ष था, जो खुले आन्दोलन विद्यार्थी सगठन, मजदूर सगठन, किसान सगठन आदि की ओर बढा। वास्तव मे कांग्रेस के नीचे सन् १९३० और १९३२ के दो महान् जन-आन्दोलनो के अनुभव, मजदूर हडतालो, किसान सत्याग्रहो की शक्ति के अनुभव, तथा कांग्रेस मे समाजवादी दल के सगठन बन जाने तथा साम्यवादी दल के अधिक सक्रियता से राजनीतिक क्षेत्र मे आ जाने के बाद ही गुप्त षड्यन्त्रात्मक आतकवादी सगठनो की परिसमाप्ति हुई।

सब से बडी बात तो यह है कि यह "आत्मकथा" उस श्रद्धा और विश्वास और प्रेम का भव्य स्मारक है, जो आम साधारण जनता शहीद क्रान्तिकारियो के प्रति रखती रही। बिस्मिल जी फाँसी की कोठरी मे इस आत्मकथा को लिख सके, यह बात बिस्मिल जी के लिए जितने श्रेय की है उससे कहीं अधिक उन अनपढ या मामूली पढे-लिखे जेल वार्डरो के श्रेय की है, जिनके पहरे मे या सरक्षण मे यह लिखी गई। फांसी की सजा पाए हुए कैदी पर चौबीसो घण्टे पहरेदारो की नजर रहती है। कौन जानता है कितने पहरेदार बदले होगे और न जाने कितने पहरेदारो और जेल के अन्य अधिकारियो के

सहयोग से इस आत्मकथा का लिखा जाना सम्भव हुआ होगा। कितने लोगो ने इस सम्बन्ध मे जोखिम उठाई होगी, बिना किसी यश की आशा के, केवल शहीद क्रान्तिकारी देशभक्तो के प्रति अपनी स्वाभाविक श्रद्धा और प्रेम के कारण, जो वस्तुत स्वातन्त्र्य प्रेम का ही स्वरूप है। और उन बेचारो को आज भी कोई श्रेय, कोई यश नही मिला। हम उनका नाम भी नही जानते, जब कि स्वातन्त्र्य आन्दोलन मे दो तीन मास की कैद पाए हुए लोग फूल-मालाएँ पहने अपने फोटो बडे अभिमान से प्रदर्शित करते रहते हैं तथा एतदर्थ प्राप्त "राजनीतिक पीडित" होने के सार्टीफिकेट को प्रदर्शित करके आर्थिक लाभ भी उठाते रहते हैं। जिस जैक शहीद जूलियस फूचिक और फाँसी की कोठरी से लिख कर भेजे गये उसके नोट्स की चर्चा हम ऊपर कर चुके हैं उनको बाहर लाने वाले जैक पहरेदार ए० कोलिन्सकी का नाम कृतज्ञतापूर्वक जूलियस की पत्नी ने उक्त पुस्तक के ऊपर अपने नोट मे किया है। इसे हम अपनी लापरवाही कहे या कृतघ्नता कि हम आज स्वतन्त्र भारत मे उन जेल वार्डरो का नामोल्लेख भी नही कर पा रहे हैं, जिनको इस आत्मकथा के फाँसी की कोठरी मे लिखे जा सकने का और उसे बाहर आकर प्रकाशित हो सकने का अधिकाश श्रेय मिलना चाहिए।

अपने स्वातन्त्र्य के लिए प्राण होमने वाले शहीदो के प्रति स्वतन्त्र भारत की कृतज्ञता की भावना से यह आशा करना क्या कोई बडी बात होगी कि बिस्मिल जी की इस आत्मकथा की मूल हस्तलिखित प्रति को तलाश किया जाय और यदि वह मिल सके तो उसे राष्ट्रीय अभिलेखागार मे या किसी शहीद सग्रहालय मे सुरक्षित रखा जाय ?

नरसिंह राव की टोरिया
झाँसी

—भगवानदास माहौर

विषय-सूची

परिशिष्ट

निज जीवन की एक छटा

[एकादश वर्षीय क्रान्तिकारी जीवन]

●

क्या ही लज्जत है कि रग रग से यह आती है सदा,
दम न ले तलवार जब तक जान 'बिस्मिल' में रहे।

प्रथम खण्ड

आत्म-चरित्र

तोमरधार मे चम्बल नदी के किनारे पर दो ग्राम आवाद है, जो ग्वालियर राज्य मे वहुत ही प्रसिद्ध है, क्योकि इन ग्रामो के निवासी बड़े उद्दण्ड है । वे राज्य की सत्ता की कोई चिन्ता नही करते । जमीदारो का यह हाल है कि जिस साल उनके मन मे आता है राज्य को भूमि-कर देते है और जिस साल उनकी इच्छा होती है मालगुजारी देने से साफ इन्कार कर जाते है । यदि तहसीलदार या कोई और राज्य का अधिकारी आता है तो ये जमीदार बीहड मे चले जाते है और महीनो बीहडो मे ही पडे रहते है । उनके पशु भी वही रहते है और भोजनादि भी बीहडो मे ही होता है । घर पर कोई ऐसा मूल्यवान पदार्थ नही छोडते, जिसे नीलाम करके मालगुज़ारी वसूल की जा सके । एक ज़मीदार के सम्बन्ध मे कथा प्रचलित है कि मालगुजारी न देने के कारण ही उनको कुछ भूमि माफी मे मिल गई । पहले तो कई साल तक भागे रहे । एक बार धोखे से पकड लिए गए तो तहसील के अधिकारियो ने उन्हे बहुत सताया । कई दिन तक बिना खाना पानी बँधा रहने दिया । अन्त मे जलाने की धमकी दे पैरो पर सूखी घास डालकर आग लगवा

दी । किन्तु उन ज़मीदार महोदय ने भूमि-कर देना स्वीकार न किया और यही उत्तर दिया कि ग्वालियर महाराज के कोष मे मेरे कर न देने से ही घटी न पड जायगी । ससार क्या जानेगा कि अमुक व्यक्ति उद्दण्डता के कारण ही अपना समय व्यतीत करता है । राज्य को लिखा गया, जिस का परिणाम यह हुआ कि उतनी भूमि उन महाशय को माफी मे दे दी गई । इसी प्रकार एक समय इन ग्रामो के निवासियो को एक अद्भुत खेल सूझा । उन्होने महाराज के रिसाले के साठ ऊँट चुराकर बीहडो मे छिपा दिए । राज्य को लिखा गया, जिस पर राज्य की ओर से आज्ञा हुई कि दोनो ग्राम तोप लगाकर उडवा दिये जाये । न जाने किस प्रकार समझाने-बुझाने से वे ऊँट वापस किए गए और अधिकारियो को समझाया गया कि इतने बडे राज्य मे थोडे से वीर लोगो का निवास है, इनका विध्वस न करना ही उचित होगा । तव तोपे लौटाई गई और ग्राम उडाये जाने से बचे । ये लोग अब राज्य-निवासियो को तो अधिक नही सताते, किन्तु बहुधा अग्रेजी राज्य मे आकर उपद्रव कर जाते है और अमीरो के मकानो पर छापा मारकर रात-ही-रात बीहड मे दाखिल हो जाते है । बीहड मे पहुँच जाने पर पुलिस या फौज कोई भी उनका बाल बॉका नही कर सकती । ये दोनों ग्राम अग्रेजी राज्य की सीमा से लगभग पन्द्रह मील की दूरी पर चम्बल नदी के तट पर हैं । यही के एक प्रसिद्ध वश मे मेरे पितामह श्री नारायणलाल जी का जन्म हुआ था । वे कौटुम्बिक कलह और अपनी भाभी के असहनीय दुर्व्यवहार के कारण मजबूर हो अपनी जन्म-भूमि छोड इधर-उधर भटकते रहे । अन्त मे अपनी धर्मपत्नी और दो पुत्रों के साथ वे शाहजहाँपुर पहुँचे । आप के इन्ही

दो पुत्रो मे ज्येष्ठ पुत्र श्रीमुरलीधर जी मेरे पिता है । उस समय इनकी अवस्था आठ वर्ष और उनके छोटे पुत्र—मेरे चाचा—(श्री कल्याणमल) की उम्र छ वर्ष की थी । इस समय यहाँ दुर्भिक्ष का भयंकर प्रकोप था ।

दुर्दिन

अनेक प्रयत्न करने के पश्चात् शाहजहाँपुर मे एक अत्तार महोदय की दुकान पर श्रीयुत नारायणलाल जी को तीन रुपये मासिक वेतन की नौकरी मिली । तीन रुपये मासिक मे दुर्भिक्ष के समय चार प्राणियो का किस प्रकार निर्वाह हो सकता था ? दादी जी ने वहुत प्रयत्न किया कि अपने आप केवल एक समय आधे पेट भोजन कर के बच्चो का पेट पाला जाये, किन्तु फिर भी निर्वाह न हो सका । वाजरा, कुकनी, सामा ज्वार इत्यादि खा कर दिन काटने चाहे, किन्तु फिर भी गुजारा न हुआ तब आधा बथुआ, चना या कोई दूसरा साग, जो सबसे सस्ता हो उसको लेकर, सबसे सस्ता अनाज उसमें आधा मिलाकर थोडा-सा नमक डालकर उसे स्वयम् खाती, लड़को को चना या जौ कि रोटी देती और इसी प्रकार दादा जी भी समय व्यतीत करते थे । वडी कठिनता से आधे पेट खाकर दिन तो कट जाता, किन्तु पेट मे घोटूं दबाकर रात काटना कठिन हो जाता । यह तो भोजन की अवस्था थी, वस्त्र तथा रहने के स्थान का किराया कहाँ से आता ? दादी जी ने चाहा कि भले घरो मे कोई मजदूरी ही मिल जाये, किन्तु अनजान व्यक्ति का, जिस की भाषा भी अपने देश की भाषा से न मिलती हो, भले घरो मे सहसा कौन विश्वास कर सकता था ? कोई मजदूरी पर अपना अनाज भी

पीसने को न देता था ! डर था कि दुर्भिक्ष का समय है, खा लेगी। वहुत प्रयत्न करने के बाद दो एक महिलायें अपने घर पर अनाज पिसवाने पर राज़ी हुईं, किन्तु पुरानी काम करने वालियो को कैसे जवाब दे ? इसी प्रकार अनेकों अडचनो के बाद पाँच-सात सेर अनाज पीसने को मिल जाता, जिस की पिसाई उस समय एक पैसा प्रति पसेरी थी। बडी कठिनता से आधे पेट एक समय भोजन करके तीन चार घण्टो तक पीसकर एक पैसा या डेढ पैसा मिलता। फिर घर पर आकर बच्चो के लिए भोजन तैयार करना पडता । दो तीन वर्ष तक यही अवस्था रही । बहुधा दादा जी देश को लौट चलने का विचार प्रकट करते, किन्तु दादी जी का यही उत्तर होता कि जिन के कारण देश छुटा, धन-सामग्री सव नष्ट हुई और ये दिन देखने पडे अब उन्ही के पैरो मे सिर रखकर दासत्व स्वीकार करने से इसी प्रकार प्राण दे देना कही श्रेष्ठ है, ये दिन सदैव न रहेगे। सब प्रकार के सकट सहे, किन्तु दादी जी देश को लौटकर न गई।

चार-पाँच वर्ष मे जव कुछ सज्जन परिचित हो गए और जान लिया कि स्त्री भले घर की है, कुसमय पडने से दीन-दशा को प्राप्त हुई है, तव बहुत-सी महिलाये विश्वास करने लगी। दुर्भिक्ष भी दूर हो गया था । कभी-कभी किसी सज्जन के यहाँ से कुछ दान मिल जाया करता, कोई ब्राह्मण भोजन करा देते । इसी प्रकार समय व्यतीत होने लगा। कई महानुभावो ने, जिन के कोई सन्तान न थी और धनादि पर्याप्त था, दादी जी को अनेको प्रकार के प्रलोभन दिए कि वह अपना एक लडका उन्हे दे दें और जितना धन माँगे उनकी भेट किया जाय। किन्तु दादी जी आदर्श माता थी, उन्होने

इस प्रकार के प्रलोभन की किंचित मात्र भी परवाह न की और अपने बच्चो का किसी न किसी प्रकार पालन करती रही।

मेहनत-मजदूरी तथा ब्राह्मणवृत्ति द्वारा कुछ धन एकत्रित हुआ। कुछ महानुभावो के कहने से पिता जी के किसी पाठशाला मे शिक्षा पाने का प्रबन्ध कर दिया गया। श्री दादा जी ने भी कुछ प्रयत्न किया, उनका वेतन भी बढ गया और वे सात रुपये मासिक पाने लगे। इसके बाद उन्होने नौकरी छोड, पैसे तथा दुवन्नी, चवन्नी इत्यादि बेचने की दुकान की। पाँच-सात आने रोज पैदा होने लगे। जो दुर्दिन आये थे, प्रयत्न तथा साहस से दूर होने लगे। इसका सब श्रेय श्री दादी जी को ही है। जिस साहस तथा धैर्य से उन्होने काम लिया वह वास्तव मे किसी दैवी शक्ति की सहायता ही कही जायेगी। अन्यथा एक अशिक्षित ग्रामीण महिला की क्या सामर्थ्य है कि वह नितान्त अपरिचित स्थान मे जाकर मेहनत मजदूरी करके अपना तथा अपने बच्चो का पेट पालन करते हुए उनको शिक्षित बनाये और फिर ऐसी परिस्थितियो मे, जब कि उसने कभी अपने जीवन मे घर से बाहर पैर न रखा हो और जो ऐसे कट्टर देश की रहने वाली हो कि जहां पर प्रत्येक हिन्दू प्रथा का पूर्णतया पालन किया जाता हो, जहाँ के निवासी अपनी प्रथाओ की रक्षा के लिए प्राणो की किंचित मात्र भी चिन्ता न करते हो। किसी ब्राह्मण, क्षत्री या वैश्य की कुलबधू का क्या साहस, जो डेढ़ हाथ का घूंघट निकाले बिना एक घर से दूसरे घर चली जाये। शूद्र जाति की बधुओ के लिए भी यही नियम है कि वे रास्ते मे बिना घूंघट निकाले न जाये। शूद्रो का पहनावा ही अलग है, ताकि उन्हे देखकर ही दूर से पहिचान लिया जाये कि यह किसी नीच

पिता जी के गृह में एक पुत्र उत्पन्न हुआ, किन्तु वह मर गया। उसके एक साल बाद लेखक (श्री रामप्रसाद) ने श्री पिता जी के गृह मे ज्येष्ठ शुक्ल पक्ष ११ सम्वत् १९५४ विक्रमी को जन्म लिया। बड़े प्रयत्नो से मानता मानकर अनेको गडे, तावीज तथा कवचो द्वारा श्री दादी जी ने इस शरीर की रक्षा का प्रयत्न किया। स्यात् बालको का रोग गृह मे प्रवेश कर गया था। अतएव जन्म लेने के एक या दो मास पश्चात् ही मेरे शरीर की अवस्था भी पहले बालक जैसी होने लगी। किसी ने बताया कि सफेद खरगोश को मेरे शरीर पर से घुमाकर ज़मीन मे छोड दिया जाय, यदि बीमारी होगी तो खरगोश तुरन्त मर जायेगा। कहते है कि हुआ भी ऐसा ही। एक सफेद खरगोश मेरे शरीर पर से उतारकर जैसे ही जमीन पर छोडा गया, वैसे ही उसने तीन चार चक्कर काटे और मर गया। मेरे विचार मे किसी अश मे यह सम्भव भी है, क्योकि औषधि तीन प्रकार की होती है—(१) दैविक, (२) मानुषिक, (३) पैशाचिक। पैशाचिक औपधियो मे अनेक प्रकार के पशु या पक्षियो के माँस अथवा रुधिर का व्यवहार होता है, जिन का उपयोग वैद्यक के ग्रन्थो मे पाया जाता है। इनमे से एक प्रयोग वडा ही कौतुहलोत्पादक तथा आश्चर्यजनक यह है कि जिस बच्चे को जभोखे (सूखा) की बीमारी हो गई हो, यदि उसके सामने चिमगादड़ चीरकर लाया जाये तो एक दो मास का बालक चिमगादड को पकड़कर उसका खून चूस लेगा और वीमारी जाती रहेगी! यह बड़ी उपयोगी औषधि है और एक महात्मा की वतलाई हुई है।

जव मै सात वर्ष का हुआ तो पिता जो ने स्वय ही मुझे हिन्दी अक्षरो का वोध कराया और एक मौलवी साहव के मकतव मे उर्दू

पढने के लिए भेज दिया। मुझे भली-भाँति स्मरण है कि पिता जी अखाडे मे कुश्ती लडने जाते थे और अपने से वलिष्ठ तथा शरीर मे डेढ गुने पट्ठे को पटक देते थे । उसी के कुछ दिनो बाद पिता जी का एक बगाली (श्री चटर्जी) महाशय से प्रेम हो गया । चटर्जी महाशय की अग्रेजी दवा की दूकान थी। आप बड़े भारी नशाबाज थे। एक समय मे आध छटॉक चरस की चिलम उड़ाया करते थे। उन्ही की सगति मे पिता जी ने भी चरस पीना सीख लिया, जिसके कारण उनका शरीर नितान्त नष्ट हो गया। दस वर्ष मे ही सम्पूर्ण शरीर सूखकर हड्डियाँ निकल आई। चटर्जी महाशय सुरापान भी करने लगे । अतएव उनका कलेजा बढ गया और उसी से उनका शरीरात हो गया । मेरे बहुत कुछ समझाने पर पिता जी ने अपनी चरस पीने की आदत को छोडा, किन्तु बहुत दिनो के बाद।

मेरे बाद पाँच बहनो और तीन भाइयो का जन्म हुआ। दादी जी ने बहुत कहा कि कुल की प्रथा के अनुसार कन्याओ को मार डाला जाये, किन्तु माता जी ने इसका विरोध किया और कन्याओ के प्राणो की रक्षा की । मेरे कुल मे यह पहला ही समय था कि कन्याओ का पोपण हुआ । पर इन मे दो बहनो और भाइयो का देहान्त हो गया । शेष एक भाई, जो इस समय (१९२७ ई०) दस वर्ष का है और तीन बहने बची । माता जी के प्रयत्न से तीनो बहनो को अच्छी शिक्षा दी गई और उनके विवाह बड़ी धूमधाम से किए गए। इसके पूर्व हमारे कुल की कन्याये किसी को नही ब्याही गई, क्योकि वे जीवित ही नही रखी जाती थी।

दादा जी बड़े सरल प्रकृति के मनुष्य थे। जब तक आप जीवित रहे, पैसे बेचने का ही व्यवसाय करते रहे। आप को गाय पालने का

बहुत बडा शौक था । स्वयम् ग्वालियर जाकर बडी-बडी गाये खरीद कर लाया करते थे । वहाँ की गाये काफी दूध देती है । अच्छी गाय दस या पन्द्रह सेर दूध देती है । ये गाये बडी सीधी भी होती है । दूध दोहन करते समय उनकी टाँगे बाँधने की आवश्यकता नही होती और जब जिस का जी चाहे बिना बच्चे के दूध दोहन कर सकता है । बचपन मे मै बहुधा जाकर गाय के थन मे मुँह लगाकर दूध पिया करता था । वास्तव मे वहाँ की गाये दर्शनीय होती है ।

दादा जी मुझे खूब दूध पिलाया करते थे । आप को अट्ठारह गोटी (बघिया बग्घा) खेलने का बडा शौक था । सॉयकाल के समय नित्य शिव-मन्दिर मे जाकर दो घण्टे तक परमात्मा का भजन किया करते थे । आपका लगभग पचपन वर्ष की आयु मे स्वर्गारोहण हुआ ।

बाल्यकाल से ही पिता जी मेरी शिक्षा का अधिक ध्यान रखते थे और जरा-सी भूल करने पर बहुत पीटते थे । मुझे अब भी भली-भाँति स्मरण है कि जब मै नागरी के अक्षर लिखना सीख रहा था तो मुझे 'उ' लिखना न आया । मैने बहुत प्रयत्न किया । पर जब पिता जी कचहरी चले गए तो मै भी खेलने चला गया । पिता जी ने कचहरी से आकर मुझ से 'उ' लिखवाया । मैं न लिख सका । उन्हे मालूम हो गया कि मै खेलने चला गया था । इस पर उन्होने मुझे बन्दूक के लोहे के गज से इतना पीटा कि गज टेढा पड गया । मैं भागकर दादा जी के पास चला गया, तब बचा । मै छोटेपन से ही बहुत उद्दण्ड था । पिता जी के पर्याप्त शासन रखने पर भी बहुत उद्दण्डता करता था । एक समय किसी के बाग मे जाकर आड़ू के वृक्षो मे से सब आड़ू तोड़ डाले । माली पीछे दौड़ा, किन्तु मैं उसके

हाथ न आया । माली ने सब आड़ू पिता जी के सामने ला रखे। उस दिन पिता जी ने मुझे इतना पीटा कि मै दो दिन तक उठ न सका । इसी प्रकार खूब पिटता था, किन्तु उद्दण्डता अवश्य करता था । शायद उस बचपन की मार से ही यह शरीर बहुत कठोर तथा सहनशील बन गया ।

मेरी कुमारावस्था

जब मै उर्दू का चौथा दर्जा पास कर के पाँचवे मे आया उस समय मेरी अवस्था लगभग चौदह वर्ष की होगी । इसी बीच मुझे पिता जी की सन्दूक से रुपये-पैसे चुराने की आदत पड गई थी। इन पैसो से उपन्यास खरीदकर खूब पढता । पुस्तक विक्रेता महाशय पिता जी की जान-पहचान के थे । उन्होने पिता जी से मेरी शिकायत की । अब मेरी कुछ जॉच होने लगी । मैने उन महाशय के यहाँ से किताबे खरीदना ही छोड दिया । मुझ मे दो-एक खराब आदते भी पड गई । मै सिग्रेट पीने लगा । कभी-कभी भंग भी जमा लेता था । कुमारावस्था मे स्वतन्त्रतापूर्वक पैसे का हाथ मे आ जाने से और उर्दू के प्रेम-रसपूर्ण उपन्यासो तथा गजलो की पुस्तको ने आचरण पर भी अपना कुप्रभाव दिखाना आरम्भ कर दिया । घुन लगना आरम्भ ही हुआ था कि परमात्मा ने बड़ी सहायता की । मै एक रोज़ भंग पीकर पिता जी की सदूकची मे से रुपये निकालने गया । नशे की हालत मे होश ठीक न रहने के कारण सदूकची खटक गई । माता जी को सन्देह हुआ । उन्होने मुझे पकड लिया । चाभी पकड़ी गई । मेरे सन्दूक की तलाशी ली गई, बहुत से रुपये निकले और सारा भेद खुल गया । मेरी किताबो में अनेक उपन्यासादि पाए गए जो उसी समय फाड़ डाले गए ।

परमात्मा की कृपा से मेरी चोरी पकड़ ली गई, नही तो दो चार वर्ष मे न दीन का रहता न दुनिया का । इसके बाद भी मैने बहुत घाते लगाई, किन्तु पिता जी ने सदूकची का ताला बदल दिया था। मेरी कोई चाल न चल सकी। अब जब कभी मौका मिल जाता तो माता जी के रुपयो पर हाथ फेर देता था । इसी प्रकार की कुटेवो के कारण दो बार उर्दू मिडिल की परीक्षा मे उत्तीर्ण न हो सका। तब मैने अँग्रेजी पढने की इच्छा प्रकट की । पिता जी मुझे अंग्रेज़ी पढाना न चाहते थे और किसी व्यवसाय मे लगाना चाहते थे, किन्तु माता जी की कृपा से मै अँग्रजी पढने भेजा गया। दूसरे वर्ष जब मै उर्दू मिडिल की परीक्षा मे फेल हुआ उसी समय पडोस के देव-मन्दिर मे, जिस की दीवार मेरे मकान से मिली थी, एक पुजारी जी आ गए। आप बडे ही सच्चरित्र व्यक्ति थे । मै आपके पास उठने बैठने लगा।

मै मन्दिर मे जाने-आने लगा। कुछ पूजा-पाठ भी सीखने लगा। पुजारी जी के उपदेशो का बडा उत्तम प्रभाव हुआ । मै अपना अधिकतर समय स्तुतिपूजन तथा पढने मे व्यतीत करने लगा। पुजारी जी मुझे ब्रह्मचर्य पालन का खूब उपदेश देते थे । वह मेरे पथ-प्रदर्शक बने । मैने एक दूसरे सज्जन की देखा-देखी व्यायाम करना भी आरम्भ कर दिया । अब तो मुझे भक्ति-मार्ग मे कुछ आनन्द प्राप्त होने लगा और चार-पाँच महीने मे ही व्यायाम भी खूब करने लगा। मेरी सब बुरी आदते तथा कुभावनाये जाती रही। स्कूलो की छुट्टियाँ समाप्त होने पर मैने मिशन स्कूल के अंग्रेजी के पाँचवे दर्जे मे नाम लिखा लिया। इस समय तक मेरी और सब कुटेवे तो छूट गई थी, किन्तु सिग्रेट पीना न छूटता था । मै सिग्रेट

बहुत पीता था । एक दिन में पचास-साठ सिग्रेट पी डालता था ! मुझे बडा दु ख होता था कि मै इस जीवन मे सिग्रेट पीने की कुटेव को न छोड सकूँगा । स्कूल मे भरती होने के थोडे दिनों बाद ही एक सहपाठी श्रीयुत सुशीलचन्द्र सेन से कुछ विशेष स्नेह हो गया। उन्ही की दया के कारण मेरा सिग्रेट पीना भी छूट गया।

देव-मन्दिर मे स्तुति-पूजा करने की प्रवृत्ति को देखकर श्रीयुत मुन्शी इन्द्रजीत जी ने मुझे सन्ध्या करने का उपदेश दिया । आप उसी मन्दिर मे रहनेवाले किसी महाशय के पास आया करते थे। व्यायामादि करने के कारण मेरा शरीर बडा सुगठित हो गया था और रग निखर आया था। मैने जानना चाहा कि सन्ध्या क्या वस्तु है। मुन्शी जी ने आर्य-समाज सम्बन्धी कुछ उपदेश दिए । इसके बाद मैने सत्यार्थ-प्रकाश पढा। इससे तख्ता ही पलट गया। सत्यार्थ-प्रकाश के अध्ययन ने मेरे जीवन के इतिहास में एक नवीन पृष्ठ खोल दिया। मैने उस मे उल्लिखित ब्रह्मचर्य के कठिन नियमो का पालन करना आरम्भ कर दिया। मै एक कम्बल को तख्त पर बिछाकर सोता और प्रात काल चार बजे से ही शैया त्याग कर देता। स्नान सन्ध्यादि से निवृत्त हो व्यायाम करता, किन्तु मन की वृत्तियाँ ठीक न होती। मैने रात्रि के समय भोजन करना त्याग दिया । केवल थोडा-सा दूध ही रात को पीने लगा । सहसा ही बुरी आदतो को छोडा था, इस कारण कभी-कभी स्वप्न-दोष हो जाता। तब किसी सज्जन के कहने से मैने नमक खाना भी छोड दिया। केवल उबाल कर साग या दाल से एक समय भोजन करता । मिर्च खटाई तो छूता भी न था। इस प्रकार पाँच वर्ष तक बराबर नमक न खाया। नमक के न खाने से शरीर के सब दोष दूर हो गए और मेरा

स्वास्थ्य दर्शनीय हो गया । सब लोग मेरे स्वास्थ्य को आश्चर्य की दृष्टि से देखा करते ।

मै थोडे दिनो मे ही वडा कट्टर आर्य-समाजी हो गया । आर्य-समाज के अधिवेशन मे जाता-आता । सन्यासी-महात्माओ के उपदेशो को बडी श्रद्धा से सुनता । जब कोई सन्यासी आर्य-समाज मे आता तो उसकी हर प्रकार सेवा करता, क्योकि मेरी प्राणायाम सीखने की वड़ी उत्कट इच्छा थी । जिन सन्यासी का नाम सुनता शहर से तीन-चार मील भी उसकी सेवा के लिए जाता, फिर वह सन्यासी चाहे जिस मत का अनुयायी होता । जब मै अँग्रेजी के सातवे दर्जे मे था तव सनातनधर्मी पण्डित जगतप्रसाद जी शाहजहाँपुर पधारे। उन्होने आर्य-समाज का खण्डन करना प्रारम्भ किया । आर्य-समाजियो ने भी उनका विरोध किया और प० अखिलानन्द जी को बुलाकर शास्त्रार्थ कराया । शास्त्रार्थ संस्कृत मे हुआ । जनता पर अच्छा प्रभाव हुआ । मेरे कामो को देखकर मुहल्ले वालो ने पिता जी से मेरी शिकायत की । पिता जी ने मुझ से कहा कि आर्य-समाजी हार गए, अव तुम आर्य-समाज से अपना नाम कटा दो । मैने पिता जी से कहा कि आर्य-समाज के सिद्धान्त सार्वभौम है, उन्हे कौन हरा सकता है ? अनेक वाद-विवाद के पश्चात् पिता जी ज़िद्द पकड गए कि आर्य-समाज से त्यागपत्र न दोगे तो मै तुझे रात मे सोते समय मार दूंगा । या तो आर्य-समाज से त्यागपत्र दे दे, या घर छोड दे । मैने भी विचारा कि पिता जी का क्रोध यदि अधिक बढ गया और उन्होने मुझ पर कोई वस्तु ऐसी दे पटकी कि जिससे बुरा परिणाम हुआ तो अच्छा न होगा। अतएव घर त्याग देना ही उचित है । मै केवल एक कमीज पहने

खडा था और पाजामा उतारकर धोती पहन रहा था । पाजामे के नीचे लंगोट बँधा था । पिता जी ने हाथ से धोती छीन ली और कहा, घर से निकल । मुझे भी क्रोध आ गया । मै पिता जी के पैर छूकर गृहत्याग कर चला गया । कहाँ जाऊँ कुछ समझ मे न आया । शहर मे किसी से जान-पहचान भी न थी, जहाँ छिप रहता । मै जंगल की ओर चला गया । एक रात तथा एक दिन बाग में पेड पर बैठा रहा । भूख लगने पर खेतो मे से हरे चने तोड़कर खाए, नदी में स्नान किया और जलपान किया । दूसरे दिन सन्ध्या समय पं० अखिलानन्द जी का व्याख्यान आर्य-समाज मन्दिर मे था । मै आर्य-समाज मन्दिर मे गया । एक पेड के नीचे एकान्त मे खडा व्याख्यान सुन रहा था कि पिता जी दो मनुष्यो को लिए हुए आ पहुँचे और मै पकड लिया गया । वह उसी समय पकडकर स्कूल के हैडमास्टर के पास ले गए । हैडमास्टर साहब ईसाई थे । मैने उन्हे सब वृत्तान्त कह सुनाया । उन्होने पिता जी को ही समझाया कि समझदार लडके को मारना-पीटना ठीक नही । मुझे भी बहुत-कुछ उपदेश दिया । उस दिन से पिता जी ने कभी भी मुझ पर हाथ नही उठाया, क्योकि मेरे घर से निकल जाने पर घर मे बडा क्षोभ रहा । एक रात एक दिन किसी ने भोजन नही किया, सब बड़े दुखी हुए कि अकेला पुत्र न जाने नदी मे डूब गया या रेल से कट गया ! पिता जी के हृदय को भी बड़ा भारी धक्का पहुँचा । उस दिन से वे मेरी प्रत्येक बात सहन कर लेते थे, अधिक विरोध न करते थे । मै पढने मे भी बड़ा प्रयत्न करता था और अपने क्लास मे प्रथम उत्तीर्ण होता था । यह अवस्था आठवे दर्जे तक रही । जब मै आठवे दर्जे मे था, उसी समय स्वामी श्री सोमदेव जी सरस्वती आर्य-समाज शाहजहाँपुर मे पधारे ।

उनके व्याख्यानों का जनता पर बडा अच्छा प्रभाव हुआ । कुछ सज्जनो के अनुरोध से स्वामी जी कुछ दिनो के लिए शाहजहाँपुर आर्य-समाज मन्दिर मे ठहर गए । आप की तवियत भी कुछ खराब थी, इस कारण शाहजहाँपुर का जलवायु लाभदायक देखकर आप वहाँ ठहरे थे । मै आपके पास जाया-आया करता था । प्राणपण से मैने स्वामी जी महाराज की सेवा की और इसी सेवा के परिणामस्वरूप मेरे जीवन मे नवीन परिवर्तन हो गया । मै रात को दो-तीन बजे तक और दिन भर आपकी सेवा-सुश्रूषा मे उपस्थित रहता । अनेको प्रकार की औषधियो का प्रयोग किया । कतिपय सज्जनो ने वडी सहानुभूति दिखलाई, किन्तु रोग का शमन न हो सका । आप मुझे अनेको प्रकार के उपदेश दिया करते थे । उन उपदेशो को मै श्रवण कर कार्य रूप मे परिणत करने का पूरा प्रयत्न करता । वास्तव मे आप मेरे गुरुदेव तथा पथ-प्रदर्शक थे । आपकी शिक्षाओ ने ही मेरे जीवन मे आत्मिक-बल का सचार किया जिन के सम्वन्ध मे मै पृथक वर्णन करूँगा ।

कुछ नवयुवको ने मिलकर आर्य-समाज मन्दिर मे आर्य कुमार सभा खोली थी, जिसके साप्ताहिक अधिवेशन प्रत्येक शुक्रवार को हुआ करते थे । वही पर धार्मिक पुस्तकों का पठन, विषय विशेप पर निवन्ध लेखन और पठन तथा वाद-विवाद होता था । कुमार सभा से ही मैने जनता के सम्मुख बोलने का अभ्यास किया । बहुधा कुमार सभा के नवयुवक मिलकर शहर के मेलो मे प्रचारार्थ जाय करते थे । वाज़ारो मे व्याख्यान देकर आर्य-समाज के सिद्धान्तों क प्रचार करते थे । ऐसा करते-करते मुसलमानो से मुवाहसा हों लगा । अतएव पुलिस ने झगड़े का भय देखकर वाज़ारों मे व्याख्या

देना बन्द करा दिया । आर्य-समाज के सदस्यो ने कुमार-सभा के प्रयत्न को देखकर उस पर अपना शासन जमाना चाहा, किन्तु कुमार किसी का अनुचित शासन कब मानने वाले थे ! आर्य-समाज के मन्दिर मे ताला डाल दिया गया कि कुमार-सभा वाले आर्य-समाज मन्दिर मे अधिवेशन न करे । यह भी कहा गया कि यदि वे वहाँ अधिवेशन करेगे, तो पुलिस को लाकर उन्हे मन्दिर से निकलवा दिया जायगा । कई महीनो तक हम लोग मैदान मे अपनी सभा के अधिवेशन करते रहे, किन्तु बालक ही तो थे, कब तक इस प्रकार कार्य चला सकते थे ? कुमार-सभा टूट गई । तब आर्य-समाजियो को शान्ति हुई ! कुमार-सभा ने अपने शहर मे तो नाम पाया ही था । जब लखनऊ मे कॉग्रेस हुई तो भारतवर्षीय कुमार सम्मेलन का भी वार्षिक अधिवेशन वहाँ हुआ । उस अवसर पर सबसे अधिक पारितोषिक लाहौर और शाहजहाँपुर की कुमार सभाओ ने पाए थे, जिनकी प्रशसा समाचार-पत्रो मे प्रकाशित हुई थी । उन्ही दिनों मिशन स्कूल के एक विद्यार्थी से मेरा परिचय हुआ । वे कभी कभी कुमार-सभा मे आ जाया करते थे । मेरे भाषण का उन पर अधिक प्रभाव हुआ । वैसे तो वे मेरे मकान के निकट ही रहते थे, किन्तु आपस मे कोई मेल न था । बैठने-उठने से आपस मे प्रेम बढ गया । आप एक ग्राम के निवासी थे । जिस ग्राम मे आपका घर था वह ग्राम बडा प्रसिद्ध है । वहाँ का प्रत्येक निवासी अपने घर मे बिना लाइसेन्स अस्त्र-शस्त्र रखता है । बहुत से लोगो के यहाँ बन्दूक तथा तमचे भी रहते है, जो ग्राम मे ही बन जाते है । ये सब टोपीदार होते हैं । उक्त महाशय के पास भी एक नाली का छोटा-सा पिस्तौल था, जिसे वह अपने साथ शहर मे

उनके व्याख्यानो का जनता पर बडा अच्छा प्रभाव हुआ । कुछ सज्जनो के अनुरोध से स्वामी जी कुछ दिनो के लिए शाहजहाँपुर आर्य-समाज मन्दिर मे ठहर गए । आप की तबियत भी कुछ खराब थी, इस कारण शाहजहाँपुर का जलवायु लाभदायक देखकर आप वहाँ ठहरे थे । मै आपके पास जाया-आया करता था । प्राणपण से मैने स्वामी जी महाराज की सेवा की और इसी सेवा के परिणामस्वरूप मेरे जीवन मे नवीन परिवर्तन हो गया । मै रात को दो-तीन बजे तक और दिन भर आपकी सेवा-सुश्रूषा मे उपस्थित रहता । अनेको प्रकार की औषधियो का प्रयोग किया । कतिपय सज्जनो ने बडी सहानुभूति दिखलाई, किन्तु रोग का शमन न हो सका । आप मुझे अनेको प्रकार के उपदेश दिया करते थे । उन उपदेशो को मै श्रवण कर कार्य रूप मे परिणत करने का पूरा प्रयत्न करता । वास्तव मे आप मेरे गुरुदेव तथा पथ-प्रदर्शक थे । आपकी शिक्षाओ ने ही मेरे जीवन मे आत्मिक-बल का सचार किया जिन के सम्बन्ध मे मै पृथक वर्णन करूँगा ।

कुछ नवयुवको ने मिलकर आर्य-समाज मन्दिर मे आर्य कुमार सभा खोली थी, जिसके साप्ताहिक अधिवेशन प्रत्येक शुक्रवार को हुआ करते थे । वही पर धार्मिक पुस्तको का पठन, विषय विशेष पर निबन्ध लेखन और पठन तथा वाद-विवाद होता था । कुमार सभा से ही मैने जनता के सम्मुख बोलने का अभ्यास किया । बहुधा कुमार सभा के नवयुवक मिलकर शहर के मेलो मे प्रचारार्थ जाया करते थे । बाजारो मे व्याख्यान देकर आर्य-समाज के सिद्धान्तो का प्रचार करते थे । ऐसा करते-करते मुसलमानो से मुबाहसा होने लगा । अतएव पुलिस ने झगड़े का भय देखकर बाज़ारो मे व्याख्यान

देना बन्द करा दिया । आर्य-समाज के सदस्यो ने कुमार-सभा के प्रयत्न को देखकर उस पर अपना शासन जमाना चाहा, किन्तु कुमार किसी का अनुचित शासन कब मानने वाले थे ! आर्य-समाज के मन्दिर मे ताला डाल दिया गया कि कुमार-सभा वाले आर्य-समाज मन्दिर मे अधिवेशन न करे । यह भी कहा गया कि यदि वे वहाँ अधिवेशन करेंगे, तो पुलिस को लाकर उन्हे मन्दिर से निकलवा दिया जायगा । कई महीनो तक हम लोग मैदान मे अपनी सभा के अधिवेशन करते रहे, किन्तु बालक ही तो थे, कब तक इस प्रकार कार्य चला सकते थे ? कुमार-सभा टूट गई । तब आर्य-समाजियो को शान्ति हुई ! कुमार-सभा ने अपने शहर मे तो नाम पाया ही था । जब लखनऊ मे कॉंग्रेस हुई तो भारतवर्षीय कुमार सम्मेलन का भी वार्पिक अधिवेशन वहाँ हुआ । उस अवसर पर सबसे अधिक पारितोपिक लाहौर और शाहजहाँपुर की कुमार सभाओ ने पाए थे, जिनकी प्रशसा समाचार-पत्रो मे प्रकाशित हुई थी । उन्ही दिनो मिशन स्कूल के एक विद्यार्थी से मेरा परिचय हुआ । वे कभी कभी कुमार-सभा मे आ जाया करते थे । मेरे भाषण का उन पर अधिक प्रभाव हुआ । वैसे तो वे मेरे मकान के निकट ही रहते थे, किन्तु आपस मे कोई मेल न था । बैठने-उठने से आपस मे प्रेम बढ गया । आप एक ग्राम के निवासी थे । जिस ग्राम मे आपका घर था वह ग्राम बडा प्रसिद्ध है । वहाँ का प्रत्येक निवासी अपने घर में बिना लाइसेन्स अस्त्र-शस्त्र रखता है । बहुत से लोगो के यहाँ बन्दूक तथा तमचे भी रहते है, जो ग्राम मे ही बन जाते है । ये सब टोपीदार होते है । उक्त महाशय के पास भी एक नाली का छोटा-सा पिस्तौल था, जिसे वह अपने साथ शहर मे

महाशय ने मुझे ठग लिया और ७५ रुपये मे टोपीदार पाँच फायर करने वाला एक रिवाल्वर दिया । रियासत की बनी हुई बारूद और थोड़ी-सी टोपियाँ दे दी । मैं इसी को लेकर बड़ा प्रसन्न हुआ । सीधा शाहजहाँपुर पहुँचा । रिवाल्वर को भरकर चलाया तो गोली केवल पन्द्रह या बीस गज पर ही गिरी, क्योंकि बारूद अच्छी न थी । मुझे बडा खेद हुआ । माता जी भी जब लौटकर शाहजहाँपुर आई तो उन्होने मुझ से पूछा कि क्या लाये ? मैने कुछ कहकर टाल दिया । रुपये सब खर्च हो गए । शायद एक गिन्नी बची थी, सो मैने माता जी को लौटा दी । मुझे जब किसी बात के लिए धन की आवश्यकता होती तो मै माता जी से कहता और वह मेरी मॉग पूरी कर देती थी । मेरा स्कूल घर से एक मील दूर था । मैने माता जी से प्रार्थना की कि मुझे साइकिल ले दे । उन्होने लगभग एक सौ रुपये दिए । मैने साइकिल खरीद ली । उस समय मै अग्रेजी के नवे दर्जे मे आ गया था । किसी धार्मिक या देश सम्बन्धी पुस्तक पढने की इच्छा होती तो माता जी ही से दाम ले जाता । लखनऊ काँग्रेस जाने के लिए मेरी बडी इच्छा थी । दादी जी तथा पिता जी तो बहुत विरोध करते रहे, किन्तु माता जी ने मुझे खर्च दे ही दिया । उसी समय शाहजहॉपुर मे सेवा-समिति का आरम्भ हुआ था । मै बडे उत्साह के साथ सेवा-समिति मे सहयोग देता था । पिता जी तथा दादी जी को मेरे इस प्रकार के कार्य अच्छे न लगते थे, किन्तु माता जी मेरा उत्साह भग न होने देती थी, जिसके कारण उन्हें बहुधा पिता जी की डाट-फटकार तथा दण्ड भी सहन करना पडता था । वास्तव मे, मेरी माता जी स्वर्गीय देवी है । मुझ में जो कुछ जीवन तथा साहस आया, वह मेरी माता जी तथा गुरुदेव श्री

सोमदेव जी की कृपाओं का ही परिणाम है। दादी जी तथा पिता जी मेरे विवाह के लिए बहुत अनुरोध करते, किन्तु माता जी यही कहती कि शिक्षा पा चुकने के बाद ही विवाह करना उचित होगा। माता जी के प्रोत्साहन तथा सद्व्यवहार ने मेरे जीवन मे वह दृढता उत्पन्न की कि किसी आपत्ति तथा सकट के आने पर भी मैने अपने संकल्प को न त्यागा।

मेरी माँ

ग्यारह वर्ष की उम्र मे माता जी विवाह कर शाहजहाँपुर आई थी। उस समय आप नितान्त अशिक्षित एक ग्रामीण कन्या के सदृश थी। शाहजहाँपुर आने के थोडे दिनो बाद श्री दादी जी ने अपनी छोटी बहन को बुला लिया। उन्होने माता जी को गृह-कार्य की शिक्षा दी। थोडे ही दिनो मे माता जी ने घर के सब काम-काज को समझ लिया और भोजनादि का ठीक ठीक प्रबन्ध करने लगी। मेरे जन्म होने के पाँच या सात वर्ष बाद आपने हिन्दी पढना आरम्भ किया। पढने का शौक आपको खुद ही पैदा हुआ था। मुहल्ले की सखी-सहेली जो घर पर आ जाती थी, उन्ही मे जो कोई शिक्षित थी, माता जी उनसे अक्षर बोध करती। इस प्रकार, घर का सब काम कर चुकने के बाद जो कुछ समय मिल जाता, उसमे पढ़ना-लिखना करती। परिश्रम के फल से थोडे दिनो मे ही वे देवनागरी पुस्तको का अवलोकन करने लगी। मेरी बहनो को छोटी आयु मे, माता जी ही उन्हें शिक्षा दिया करती थी। जब से मैने आर्य-समाज मे प्रवेश किया, तब से माता जी से खूब वार्तालाप होता। उस समय की अपेक्षा अब आपके विचार भी कुछ उदार हो गये है। यदि मुझे

ऐसी माता न मिलती, तो मै भी अति साधारण मनुष्यों की भाँति ससार-चक्र मे फँसकर जीवन निर्वाह करता। शिक्षादि के अतिरिक्त क्रान्तिकारी जीवन मे भी आपने मेरी वैसे ही सहायता की है, जैसी मेजिनी को उनकी माता ने की थी। यथासमय मै उन सारी बातो का उल्लेख करूँगा। माता जी का सबसे बड़ा आदेश मेरे लिए यही था कि किसी की प्राण-हानि न हो। उनका कहना था कि अपने शत्रु को भी कभी प्राण-दण्ड न देना। आपके इस आदेश की पूर्ति करने के लिए मुझे मजबूरन दो एक बार अपनी प्रतिज्ञा भग भी करनी पडी थी।

जन्मदात्री जननी, इस जीवन मे तो तुम्हारा ऋण-परिशोध करने के प्रयत्न करने का भी अवसर न मिला। इस जन्म मे तो क्या यदि अनेक जन्मो मे भी सारे जीवन प्रयत्न करूँ तो भी तुमसे उऋण नही हो सकता। जिस प्रेम तथा दृढता के साथ तुमने इस तुच्छ जीवन का सुधार किया है, वह अवर्णनीय है। मुझे जीवन की प्रत्येक घटना का स्मरण है कि तुमने किस प्रकार अपनी दैवी वाणी का उपदेश करके मेरा सुधार किया है। तुम्हारी दया से ही मै देश-सेवा मे सलग्न हो सका। धार्मिक जीवन मे भी तुम्हारे ही प्रोत्साहन ने सहायता दी। जो कुछ शिक्षा मैने ग्रहण की उसका भी श्रेय तुम्ही को है। जिस मनोहर रूप से तुम मुझे उपदेश करती थी, उसका स्मरण कर तुम्हारी मगलमयी मूर्ति का ध्यान आ जाता है और मस्तक नत हो जाता है। तुम्हे यदि मुझे ताडना भी देनी हुई, तो बडे स्नेह से हर एक बात को समझा दिया। यदि मैने धृष्टतापूर्ण उत्तर दिया तब तुमने प्रेम भरे शब्दो मे यही कहा कि तुम्हे जो अच्छा लगे, वह करो, किन्तु ऐसा करना ठीक नही, इसका परिणाम अच्छा न होगा।

जीवनदात्री ! तुमने इस शरीर को जन्म देकर केवल पालन-पोषण ही नही किया किन्तु आत्मिक, धार्मिक तथा सामाजिक उन्नति में तुम्ही मेरी सदैव सहायक रही। जन्म-जन्मान्तर परमात्मा ऐसी ही माता दे।

महान-से-महान सकट मे भी तुमने मुझे अधीर न होने दिया। सदैव अपनी प्रेम भरी वाणी को सुनाते हुए मुझे सान्त्वना देती रही। तुम्हारी दया की छाया मे मैने अपने जीवन भर मे कोई कष्ट अनुभव न किया। इस ससार मे मेरी किसी भी भोग विलास तथा ऐश्वर्य की इच्छा नही। केवल एक तृष्णा है, वह यह कि एक बार श्रद्धापूर्वक तुम्हारे चरणो की सेवा करके अपने जीवन को सफल बना लेता। किन्तु यह इच्छा पूर्ण होती नही दिखाई देती और तुम्हे मेरी मृत्यु का दुख-सम्वाद सुनाया जायगा। माँ, मुझे विश्वास है कि तुम यह समझ कर धैर्य धारण करोगी कि तुम्हारा पुत्र माताओ की माता—भारत माता की सेवा मे अपने जीवन को बलि-वेदी की भेट कर गया और उसने तुम्हारी कुक्ष को कलकित न किया, अपनी प्रतिज्ञा मे दृढ रहा। जब स्वाधीन भारत का इतिहास लिखा जावेगा, तो उसके किसी पृष्ठ पर उज्ज्वल अक्षरो मे तुम्हारा भी नाम लिखा जायगा। गुरु गोविन्दसिह जी की धर्म-पत्नी ने जब अपने पुत्रो की मृत्यु का सम्वाद सुना था, तो बहुत हर्षित हुई थी और गुरु के नाम पर धर्म-रक्षार्थ अपने पुत्रो के बलिदान पर मिठाई बाँटी थी। जन्मदात्री ! वर दो कि अन्तिम समय भी मेरा हृदय किसी प्रकार विचलित न हो और तुम्हारे चरण कमलो को प्रणाम कर मै परमात्मा का स्मरण करता हुआ शरीर त्याग करूँ।

मेरे गुरुदेव

माता जी के अतिरिक्त जो कुछ जीवन तथा शिक्षा मैने प्राप्त की वह पूज्यपाद श्री १०८ स्वामी सोमदेव जी की कृपा का परिणाम है। आपका नाम श्रीयुत ब्रजलाल चौपडा था। पजाब के लाहौर शहर मे आपका जन्म हुआ था। आपका कुटुम्ब प्रसिद्ध था, क्योकि आपके दादा महाराजा रणजीतसिह के मन्त्रियो मे से एक थे। आपके जन्म के कुछ समय पश्चात् आपकी माता का देहान्त हो गया था। आपको दादी ने ही आपका पालन-पोषण किया था। आप अपने पिता की अकेली सन्तान थे। जब आप बढे तो चाचियो ने दो तीन बार आपको जहर देकर मार देने का प्रयत्न किया, ताकि उनके लडको को ही जायदाद का अधिकार मिल जाय। आपके चाचा आप पर बडा स्नेह करते थे और शिक्षादि की ओर विशेष ध्यान रखते थे। अपने चचेरे भाइयो के साथ साथ आप भी अग्रेजी स्कूल मे पढते थे। जब अपने एन्ट्रेन्स की परीक्षा दी तो परीक्षा-फल प्रकाशित होने पर आप यूनिवर्सिटी मे प्रथम आये और चचा के लड़के फेल हो गये। घर मे बडा शोक मनाया गया। दिखाने के लिए भोजन तक नही बना। आपकी प्रशंसा तो दूर, किसी ने उस दिन भोजन करने को भी न पूछा और बडी उपेक्षा की दृष्टि से देखा। आपका हृदय पहले से ही घायल था, इस घटना से आपके जीवन को और भी बडा आघात पहुँचा। चाचा जी के कहने-सुनने पर कालेज मे नाम लिखा तो लिया, किन्तु बडे उदासीन रहने लगे। आपके हृदय मे दया बहुत थी। बहुधा अपनी किताबे तथा कपडे दूसरे सहपाठियो को बॉट दिया करते थे। नये कपडे बॉट कर पुराने कपडे स्वय पहना

करते थे। एक दो बार चाचा जी से दूसरे लोगो ने कहा कि ब्रजलाल को कपडे भी आप नही बनवा देते, जो वह पुराने फटे कपडे पहने फिरते है। चाचा जी को बडा आश्चर्य हुआ क्योकि उन्होने कई जोडे कपडे थोडे दिनो पहले ही बनवाये थे । आपके सन्दूकों की तलाशी ली गई। उनमे दो चार जोडी पुराने कपड़े निकले, तब चाचा जी ने पूछा तो मालूम हुआ कि वे नये कपडे निर्धन विद्यार्थियो को बाँट दिया करते है। चाचा जी ने कहा कि जब कपड़े बाँटने की इच्छा हो कह दिया करो, तो हम विद्यार्थियो को कपडे बनवा दिया करेगे, अपने कपडे न बाँटा करो। वे बहुधा निर्धन विद्यार्थियो को अपने घर पर ही भोजन कराया करते थे। चाचियो तथा चचाजात भाइयो के व्यवहार से आप को बडा क्लेश होता था। इसी कारण से आपने विवाह न किया। घरेलू दुर्व्यवहार से दुखित होकर आपने घर त्याग देने का निश्चय कर लिया और एक रात को जब सब सो रहे थे, चुपचाप उठकर घर से निकल गये। कुछ भी सामान साथ मे न लिया। बहुत दिनो तक इधर-उधर भटकते रहे। भटकते भटकते आप हरिद्वार पहुँचे। वहाँ एक सिद्ध योगी से भेंट हुई। श्री ब्रजलाल जी को जिस वस्तु की इच्छा थी, वह प्राप्त हो गई। उसी स्थान पर रहकर श्री ब्रजलाल जी ने योग विद्या की पूर्ण शिक्षा पाई। योगिराज की कृपा से आप अट्ठारह बीस घण्टे की समाधि लगा लेने लगे। कई वर्ष तक आप वहाँ रहे। इस समय आपको योग का इतना अभ्यास हो गया था कि अपने शरीर को वे इतना हल्का कर लेते थे कि पानी पर पृथ्वी के समान चले जाते थे। अब आप को देश भ्रमण तथा अध्ययन करने की इच्छा हुई। अनेक स्थानो मे भ्रमण करते हुए अध्ययन करते रहे। जर्मनी तथा अमेरिका से

बहुत-सी पुस्तके मँगाई, जो शास्त्रो के सम्बन्ध मे थी। जब लाला लाजपतराय को देश निर्वासन का दण्ड मिला था, उस समय आप लाहौर मे थे। वहाँ उन्होने एक समाचार-पत्र की सम्पादकी के लिए डिक्लेरेशन दाखिल किया। डिप्टी कमिश्नर उस समय किसी के भी समाचार-पत्र के डिक्लेरेशन को स्वीकार न करता था। जब आप से भेट हुई, तो वह बडा प्रभावित हुआ और उसने डिक्लेरेशन मजूर कर लिया। अखबार का पहला ही अग्रलेख "अग्रेजो को चेतावनी" के नाम से निकाला। लेख इतना उत्तेजनापूर्ण था कि थोडी देर मे ही समाचार-पत्र की सब प्रतियाँ बिक गई और जनता के अनुरोध पर उसी अक का दूसरा सस्करण प्रकाशित करना पडा। डिप्टी कमिश्नर के पास रिपोर्ट हुई। उसने आपको दर्शनार्थ बुलाया। वह बड़ा क्रुद्ध था। लेख को पढकर काँपता, और क्रोध मे आकर मेज पर हाथ दे मारता था। किन्तु अतिम शब्दो को पढकर चुप हो जाता। उस लेख के कुछ शब्द यो थे कि 'यदि अग्रेज अब भी न समझेगे तो वह दिन दूर नही कि सन् '५७ के दृश्य फिर दिखाई दे और अग्रेजो के बच्चो का कतल किया जाय, उनकी रमरिगयो की बेइज्जती हो, इत्यादि। किन्तु यह सब स्वप्न है।' 'यह सब स्वप्न है' इन्ही शब्दो को पढकर डिप्टी कमिश्नर कहता कि हम तुम्हारा कुछ नही कर सकते।

स्वामी सोमदेव भ्रमरण करते हुए बम्बई पहुँचे। वहाँ पर आपके उपदेशो को सुनकर जनता पर बड़ा प्रभाव पडा। एक व्यक्ति, जो श्रीयुत अबुलकलाम आजाद के बडे भाई थे, आपसे व्याख्यान सुनकर मोहित हो गये। वह आपको अपने घर लिवा ले गये। इस समय

तक आप गेरुआ कपड़ा न पहनते थे। केवल एक लुगी और कुरता पहनते थे और साफा बाँधते थे। श्रीयुत अबुलकलाम आजाद के पूर्वज अरब के निवासी थे। आपके पिता के बम्बई मे बहुत से मुरीद थे और कथा की तरह कुछ धार्मिक ग्रन्थ पढ़ने पर हजारो रुपये चढावे मे आया करते थे। वह सज्जन इतने मोहित हो गये कि उन्होने धार्मिक कथाओ का पाठ करने के लिए जाना ही छोड दिया ! वह दिन रात आपके पास ही बैठे रहते। जब आप उनसे कही जाने को कहते तो वह रोने लगते और कहते कि मै तो आपके आत्मिक ज्ञान के उपदेशो पर मोहित हूँ। मुझे संसार मे किसी वस्तु की भी इच्छा नही। आपने एक दिन नाराज होकर उनके धीरे से चपत मार दी जिससे वह दिन भर रोते रहे। उनको घर वालो तथा शिष्यो ने बहुत समझाया किन्तु वह धार्मिक कथा कहने न जाते। यह देखकर उनके मुरीदों को बडा क्रोध आया कि हमारे धर्म गुरु एक काफिर के चक्कर मे फँस गये है। एक सन्ध्या को स्वामी जी अकेले समुद्र के तट पर भ्रमरण करने गये थे कि कई मुरीद मकान पर बन्दूक लेकर स्वामी जी को मार डालने के लिए आये। यह समाचार जानकर उन्होने स्वामी जी के प्राणों का भय देख स्वामी जी से बम्बई छोड देने की प्रार्थना की। प्रात काल एक स्टेशन पर स्वामी जी को तार मिला कि आपके प्रेमी श्रीयुत अबुलकलाम आज़ाद के भाई साहब ने आत्महत्या कर ली ! तार पाकर आपको बडा क्लेश हुआ। जिस समय आपको इन बातो का स्मरण हो आता था तो बड़े दु खी होते थे। एक सन्ध्या के समय मै आपके निकट बैठा हुआ था, अँधेरा काफी हो गया था। स्वामी जी ने बडी गहरी ठंडी साँस ली। मैने चेहरे की ओर देखा तो आँखों से आँसू बह रहे

थे । मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ । मैने कई घण्टे प्रार्थना की तब आपने उपरोक्त विवरण सुनाया ।

अंग्रेजी की योग्यता आपकी बडी उच्च कोटि की थी । आपका शास्त्र विषयक ज्ञान बड़ा गम्भीर था । आप बड़े निर्भीक वक्ता थे । आपकी योग्यता को देखकर एक वार मद्रास की कॉंग्रेस कमेटी ने अखिल भारतवर्षीय कॉंग्रेस का प्रतिनिधि चुनकर भेजा था। आगरा की आर्यमित्र सभा के वार्षिकोत्सव पर आपके व्याख्यानो को श्रवण कर राजा महेन्द्रप्रताप जी बडे मुग्ध हुए थे । राजा साहब ने आपके पैर छुए और आपको अपनी कोठी पर लिवा ले गये । उस समय से राजा साहब बहुधा आपके उपदेश सुना करते और आपको अपना गुरु मानते थे। इतना साफ निर्भीक बोलने वाला मैंने आज तक नही देखा। सन् १९१३ ई० मे मैने आपका पहला व्याख्यान शाहजहाँ-पुर मे सुना था । आर्य-समाज के वार्षिकोत्सव पर आप पधारे थे । उस समय आप बरेली मे निवास करते थे । आपका शरीर बहुत ही कृश था, क्योकि आपको एक अजीब रोग हो गया था । आप जब शौच जाते थे तब आपके खून गिरता था । कभी दो छटॉक, कभी चार छटॉंक और कभी कभी तो एक सेर तक खून गिर जाता था । बवासीर आपको नही थी । ऐसा कहते थे कि किसी प्रकार योग की क्रिया विगड जाने से पेट की आँत मे कुछ विकार उत्पन्न हो गया। आँत सड़ गई । पेट चिरवाकर आँत कटवानी पडी और तभी से यह रोग हो गया था । बडे बडे वैद्य डाक्टरों की औषधि की किन्तु कुछ लाभ न हुआ । इतने कमजोर होने पर भी जब व्याख्यान देते तब इतने जोर से बोलते कि तीन चार फरलाँग से आपका व्याख्यान साफ सुनाई देता था। दो तीन वर्ष तक आपको हर साल आर्य-समाज

के वार्षिकोत्सव पर बुलाया जाता। सन् १९१५ ई० मे कतिपय सज्जनो की प्रार्थना पर आप आर्य-समाज मन्दिर शाहजहाँपुर मे ही निवास करने लगे। इसी समय से मैने आपकी सेवा-सुश्रूषा मे समय व्यतीत करना आरम्भ कर दिया।

स्वामी जी मुझे धार्मिक तथा राजनैतिक उपदेश देते थे और इस प्रकार की पुस्तके पढने का भी आदेश करते थे। राजनीति मे भी आपका ज्ञान उच्च कोटि का था। लाला हरदयाल से आपसे बहुत परामर्श होता था। एक बार महात्मा मुन्शीराम जी (स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द जी) को आपने पुलिस के प्रकोप से बचाया। आचार्य रामदेव जी तथा श्रीयुत कृष्ण जी से आपका बडा स्नेह था। राजनीति मे आप मुझसे अधिक खुलते न थे। आप मुझसे बहुधा कहा करते थे कि एन्ट्रेन्स पास कर लेने के बाद यूरोप यात्रा अवश्य करना। इटली जाकर महात्मा मेजिनी की जन्मभूमि के दर्शन अवश्य करना। सन् १९१६ ई० मे लाहौर षड्यन्त्र का मामला चला। मै समाचार-पत्रों मे उसका सब वृत्तान्त बड़े चाव से पढा करता था। श्रीयुत भाई परमानन्द जी मे मेरी बडी श्रद्धा थी, क्योकि उनकी लिखी हुई 'तवारीख हिन्द' पढकर मेरे हृदय पर बड़ा प्रभाव पडा था। लाहौर षड्यन्त्र का फैसला अखबारो मे छपा। भाई परमानन्द जी को फाँसी की सजा पढकर मेरे शरीर मे आग लग गई। मैने विचारा कि अग्रेज बडे अत्याचारी है, इनके राज्य मे न्याय नही, जो इतने बडे महानुभाव को फाँसी की सजा का हुक्म दे दिया। मैने प्रतिज्ञा की कि इसका बदला अवश्य लूंगा। जीवन भर अंग्रेजी राज्य को विध्वस करने का प्रयत्न करता रहूँगा। इस प्रकार की प्रतिज्ञा कर चुकने के पश्चात् मै स्वामी जी के पास आया। सब

समाचार सुनाये और अखबार दिया। अखबार पढ़कर स्वामी जी भी बड़े दुखित हुए। तब मैंने अपनी प्रतिज्ञा के सम्बन्ध मे कहा। स्वामी जी कहने लगे कि प्रतिज्ञा करना सहल है, किन्तु उस पर दृढ रहना कठिन है। मैंने स्वामी जी को प्रणाम कर उत्तर दिया कि यदि श्रीचरणों की कृपा बनी रहेगी तो प्रतिज्ञा पूर्ति मे किसी प्रकार की त्रुटि न करूँगा। उस दिन से स्वामी जी कुछ-कुछ खुले। वे बहुत-सी बाते बताया करते थे। उसी दिन से मेरे क्रान्तिकारी जीवन का सूत्रपात हुआ। यद्यपि आप आर्य-समाज के सिद्धान्तो को सर्वप्रकारेण मानते थे किन्तु परमहस रामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ तथा महात्मा कबीरदास के उपदेशो का वर्णन प्राय किया करते थे।

धार्मिक तथा आत्मिक जीवन मे जो दृढता मुझमे उत्पन्न हुई, वह स्वामी जी महाराज के सदुपदेशो का ही परिणाम है। आपकी दया से ही मै ब्रह्मचर्य पालन मे सफल हुआ। आपने मेरे भविष्य जीवन के सम्बन्ध मे जो जो बाते कही थी, वे अक्षरश सत्य हुई। आप कहा करते थे कि दुख है कि यह शरीर न रहेगा और तेरे जीवन मे बडी विचित्र विचित्र समस्यायें आयेगी, जिनको सुलझाने वाला कोई न मिलेगा। यदि यह शरीर नष्ट न हुआ, जो असम्भव है, तो तेरा जीवन भी संसार मे एक आदर्श जीवन होगा। मेरा दुर्भाग्य था कि जब आपके अन्तिम दिन बहुत निकट आ गये, तब आपने मुझे योगाभ्यास सम्बन्धी कुछ क्रियाएँ बताने की इच्छा प्रकट की, किन्तु आप इतने दुर्बल हो गए थे कि जरा-सा परिश्रम करने या दस बीस कदम चलने पर ही आपको बेहोशी आ जाती थी! आप फिर कभी इसी योग्य न हो सके कि कुछ देर बैठकर कुछ

क्रियायें मुझे बता सकते । आपने कहा था, मेरा योग भ्रष्ट हो गया। प्रयत्न करूँगा, मरण समय पास रहना, मुझसे पूछ लेना कि मै कहॉ जन्म लूंगा । सम्भव है कि मै बता सकूं। नित्य-प्रति सेर आध सेर खून गिर जाने पर भी आप कभी भी क्षुब्ध न होते थे। आपकी आवाज़ भी कभी कमजोर न हुई। जैसे अद्वितीय आप वक्ता थे, वैसे ही आप लेखक भी थे। आपके कुछ लेख तथा पुस्तके आपके एक भक्त के पास थी, जो यो ही नष्ट हो गईं। कुछ लेख तथा पुस्तके श्री स्वामी अनुभवानन्द जी शान्त ले गये थे। कुछ लेख आपने प्रकाशित भी कराये थे। लगभग ४८ वर्ष की उम्र मे आपने इहलोक त्याग किया। इस स्थान पर मै महात्मा कबीरदास के कुछ अमृत वचनो का उल्लेख करता हूँ, जो मुझे बडे प्रिय तथा शिक्षाप्रद मालूम हुए—

'कबिरा' शरीर सराय है भाडा देके बस।
जब भठियारी खुश रहे तब जीवन का रस ॥१॥

'कबिरा' क्षुधा है कूकरी करत भजन में भंग।
याको टुकरा डारि कें सुमिरन करो निशंक ॥२॥

नींद निसानी मीच की उट्ठ 'कबीरा' जाग।
और रसायन त्याग के नाम रसायन चाख ॥३॥

चलना है रहना नहीं चलना बिसवें बीस।
'कबिरा' ऐसे सुहाग पर कौन बँधावे सीस ॥४॥

अपने अपने चोर को सब कोई डारे मारि।
मेरा चोर जो मोंहि मिले सर्बस डारूँ वारि ॥५॥

कहे सुने की है नहीं देखा देखी बात।
दूल्हा दुल्हिन मिलि गये सूनी परी बरात ॥६॥

समाचार सुनाये और अखबार दिया। अखबार पढकर स्वामी जी भी बडे दुखित हुए। तब मैने अपनी प्रतिज्ञा के सम्बन्ध मे कहा। स्वामी जी कहने लगे कि प्रतिज्ञा करना सहल है, किन्तु उस पर दृढ रहना कठिन है। मैने स्वामी जी को प्रणाम कर उत्तर दिया कि यदि श्रीचरणो की कृपा बनी रहेगी तो प्रतिज्ञा पूर्ति मे किसी प्रकार की त्रुटि न करूँगा। उस दिन से स्वामी जी कुछ-कुछ खुले। वे बहुत-सी बाते बताया करते थे। उसी दिन से मेरे क्रान्तिकारी जीवन का सूत्रपात हुआ। यद्यपि आप आर्य-समाज के सिद्धान्तो को सर्वप्रकारेण मानते थे किन्तु परमहस रामकृष्ण, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी रामतीर्थ तथा महात्मा कबीरदास के उपदेशो का वर्णन प्राय: किया करते थे।

धार्मिक तथा आत्मिक जीवन मे जो दृढता मुझमे उत्पन्न हुई, वह स्वामी जी महाराज के सदुपदेशो का ही परिणाम है। आपकी दया से ही मै ब्रह्मचर्य पालन मे सफल हुआ। आपने मेरे भविष्य जीवन के सम्बन्ध मे जो जो बाते कही थी, वे अक्षरश: सत्य हुईं। आप कहा करते थे कि दुख है कि यह शरीर न रहेगा और तेरे जीवन मे बड़ी विचित्र विचित्र समस्यायें आयेगी, जिनको सुलझाने वाला कोई न मिलेगा। यदि यह शरीर नष्ट न हुआ, जो असम्भव है, तो तेरा जीवन भी संसार मे एक आदर्श जीवन होगा। मेरा दुर्भाग्य था कि जब आपके अन्तिम दिन बहुत निकट आ गये, तब आपने मुझे योगाभ्यास सम्बन्धी कुछ क्रियाएँ बताने की इच्छा प्रकट की, किन्तु आप इतने दुर्बल हो गए थे कि जरा-सा परिश्रम करने या दस बीस कदम चलने पर ही आपको बेहोशी आ जाती थी! आप फिर कभी इसी योग्य न हो सके कि कुछ देर बैठकर कुछ

क्रियाये मुझे बता सकते। आपने कहा था, मेरा योग भ्रष्ट हो गया। प्रयत्न करूँगा, मरण समय पास रहना, मुझसे पूछ लेना कि मै कहाँ जन्म लूँगा। सम्भव है कि मै बता सकूं। नित्य-प्रति सेर आध सेर खून गिर जाने पर भी आप कभी भी क्षुब्ध न होते थे। आपकी आवाज़ भी कभी कमजोर न हुई। जैसे अद्वितीय आप वक्ता थे, वैसे ही आप लेखक भी थे। आपके कुछ लेख तथा पुस्तके आपके एक भक्त के पास थी, जो यो ही नष्ट हो गईं। कुछ लेख तथा पुस्तके श्री स्वामी अनुभवानन्द जी शान्त ले गये थे। कुछ लेख आपने प्रकाशित भी कराये थे। लगभग ४८ वर्ष की उम्र मे आपने इहलोक त्याग किया। इस स्थान पर मै महात्मा कबीरदास के कुछ अमृत वचनो का उल्लेख करता हूँ, जो मुझे बडे प्रिय तथा शिक्षाप्रद मालूम हुए—

'कबिरा' शरीर सराय है भाड़ा देके बस।
जब भठियारी खुश रहै तब जीवन का रस ॥१॥

'कबिरा' क्षुधा है कूकरी करत भजन में भंग।
याको टुकरा डारि कें सुमिरन करो निशंक ॥२॥

नींद निसानी मीच की उठु 'कबीरा' जाग।
और रसायन त्याग के नाम रसायन चाख ॥३॥

चलना है रहना नहीं चलना बिसवें बीस।
'कबिरा' ऐसे सुहाग पर कौन बँधावे सीस ॥४॥

अपने अपने चोर को सब कोई डारे मारि।
मेरा चोर जो मोहि मिले सर्वस डारूँ वारि ॥५॥

कहे सुने की है नहीं देखा देखी बात।
दूल्हा दुल्हिन मिलि गये सूनी परी बरात ॥६॥

नैनन की करि कोठरी पुतरी पलँग बिछाय।
पलकन की चिक डारि कें पीतम लेहु रिझाय ।।७।।

प्रेम पियाला जो पिये सीस दच्छिना देय।
लोभी सीस न दे सके, नाम प्रेम का लेय ।।८।।

सीस उतारे भुंइ धरै, तापे राखै पाँव।
दास 'कबिरा' यूं कहै ऐसा होय तो आव ।।९।।

निन्दक नियरे राखिये आंगन कुटी छवाय।
बिन पानी साबुन बिना उज्ज्वल करे सुभाय ।।१०।।

ब्रह्मचर्य व्रत पालन

वर्तमान समय में इस देश की कुछ ऐसी दुर्दशा हो रही है कि जितने धनी तथा गण्य-मान्य व्यक्ति है उनमे ६६ प्रतिशत ऐसे हैं जो अपनी सन्तान रूपी अमूल्य धन-राशि को अपने नौकर तथा नौकरानियो के हाथ मे सौप देते है। उनकी जैसी इच्छा हो, वे उन्हे बनावे ! मध्यम श्रेणी के व्यक्ति भी अपने व्यवसाय तथा नौकरी इत्यादि मे फँसे रहने के कारण सन्तान की ओर अधिक ध्यान नही दे सकते। सस्ता काम चलाऊ नौकर या नौकरानी रखते है और उन्ही पर बाल-बच्चो का भार सौप देते है, ये नौकर बच्चो को नष्ट करते है। यदि कुछ भगवान की दया हो गई, और बच्चे नौकर नौकरानियो के हाथ से बच गये तो मुहल्ले की गदगी से बचना बडा कठिन है। बाकी रहे सहे स्कूल मे पहुँचकर पारंगत हो जाते हैं। कालेज पहुँचते पहुँचते आजकल के नवयुवको के सोलहो सस्कार हो जाते है। कालेज में पहुँचकर ये लोग समाचार पत्रो में दिये हुए औषधियो के विज्ञापन देख देख कर दवाइयो को मँगा मँगा कर धन नष्ट करना आरम्भ करते है। ६८ प्रतिशत की आँखे खराब हो

जाती है। कुछ को शारीरिक दुर्बलता तथा कुछ को फैशन के विचार से ऐनक लगाने की बुरी आदत पड जाती है। सौन्दर्योपासना तो उनकी रग रग मे कूट कूट कर भर जाती है। शायद ही कोई विद्यार्थी ऐसा हो जिसकी प्रेम-कथाये प्रचलित न हो। ऐसी अजीब अजीव बाते सुनने मे आती है कि जिनका उल्लेख करने से भी ग्लानि होती है। यदि कोई विद्यार्थी सच्चरित्र बनने का प्रयत्न भी करता है और स्कूल या कालेज जीवन मे उसे कुछ अच्छी शिक्षा भी मिल जाती है, तो परिस्थितियाँ, जिनमे उसे निर्वाह करना पडता है, उसे सुधरने नही देती। वे विचारते है कि थोडा-सा इस जीवन का आनन्द ले ले, यदि कुछ खराबी पैदा हो गई तो दवाई खाकर या पौष्टिक पदार्थो का सेवन करके दूर कर लेगे। यह उनकी बडी भारी भूल है। अग्रेजी की कहावत है "Only for once and for ever" तात्पर्य यह है कि यदि एक समय कोई बात पैदा हुई, मानो सदा के लिए रास्ता खुल गया। दवाइयाँ कोई लाभ नही पहुँचाती। अण्डो का जूस, मछली के तेल, माँस आदि पदार्थ भी व्यर्थ सिद्ध होते है। सबसे आवश्यक बात चरित्र सुधारना ही होती है। विद्यार्थियो तथा उनसे अध्यापको को उचित है कि वे देश की दुर्दशा पर दया करके अपने चरित्र को सुधारने का प्रयत्न करे। ससार मे ब्रह्मचर्य ही सारी शक्तियो का मूल है। बिना ब्रह्मचर्य व्रत पालन किये मनुष्य जीवन नितान्त शुष्क तथा नीरस प्रतीत होता है। विद्या बल तथा बुद्धि सब ब्रह्मचर्य के प्रताप से ही प्राप्त होते है। संसार मे जितने वडे आदमी हुए है, उनमे से अधिकतर ब्रह्मचर्य व्रत के प्रताप से ही बड़े बने और सैकड़ो हज़ारो वर्ष बाद भी उनका यश गान करके मनुष्य अपने आपको कृतार्थ करते है। ब्रह्मचर्य की महिमा यदि जानना हो

तो परशुराम, राम, लक्ष्मण, कृष्ण, भीष्म, ईसा, मेजिनी, बदा, रामकृष्ण, दयानन्द तथा राममूर्ति की जीवनियो का अध्ययन करो।

जिन विद्यार्थियों को बाल्यवस्था मे किसी कुटेव की बान पड जाती है, या जो बुरी सगत मे पडकर अपना आचरण बिगाड लेते है और फिर अच्छी शिक्षा पाने पर आचरण सुधारने का प्रयत्न करते है, परन्तु सफल मनोरथ नही होते, उन्हे भी निराश न होना चाहिए। मनुष्य जीवन अभ्यासो का एक समूह है। मनुष्य के मन मे भिन्न-भिन्न प्रकार के अनेक विचार तथा भाव उत्पन्न होते रहते है। उनमे से जो उसे रुचिकर होते है, वे प्रथम कार्य रूप मे परिणत होते है। क्रिया के बार बार होने से उसमे से ऐच्छिक भाव निकल जाता है और उसमे तात्कालिक प्रेरणा उत्पन्न हो जाती है। इन तात्कालिक प्रेरक क्रियाओ को, जो पुनरावृत्ति का फल है, 'अभ्यास' कहते है। मानवी चरित्र इन्ही अभ्यासो द्वारा बनता है। अभ्यास से तात्पर्य आदत, स्वभाव, बान है। अभ्यास अच्छे और बुरे दोनो प्रकार के होते है। यदि हमारे मन मे निरन्तर अच्छे विचार उत्पन्न हो, तो उनका फल अच्छे अभ्यास होगे, और यदि मन बुरे विचारो मे लिप्त रहे, तो निश्चयरूपेण अभ्यास बुरे होगे। मन इच्छाओ का केन्द्र है। उन्ही की पूर्ति के लिए मनुष्य को प्रयत्न करना पडता है। अभ्यासो के बनने मे पैतृक सस्कार, अर्थात माता-पिता के अभ्यासों के अनुसार अनुकरण ही बच्चो के अभ्यास का सहायक होता है। दूसरे, जैसी परिस्थितियो मे निवास होता हैं, वैसे ही अभ्यास भी पडते है। तीसरे, प्रयत्न से भी अभ्यासों का निर्माण होता है। यह शक्ति इतनी प्रबल हो सकती है कि इसके द्वारा मनुष्य पैतृक सस्कार तथा परिस्थितियो को भी जीत सकता है। हमारे

जीवन का प्रत्येक कार्य अभ्यासो के अधीन है। यदि अभ्यासों द्वारा हमे कार्य में सुगमता न होती, तो हमारा जीवन बड़ा दुखमय प्रतीत होता। लिखने का अभ्यास, वस्त्र पहनना, पठन-पाठन इत्यादि इसके प्रत्यक्ष उदाहरण है। यदि हमे प्रारम्भिक समय की भाँति सदैव सावधानी से काम लेना हो, तो कितनी कठिनता प्रतीत हो। इसी प्रकार बालक का खडा होना और चलना भी है कि उस समय वह कितना कष्ट अनुभव करता है, किन्तु एक मनुष्य मीलो चला जाता है। बहुत लोग तो चलते चलते नीद भी ले लेते है। जैसे जेल मे बाहरी दीवार पर घडी मे चाबी लगाने वाले, जिन्हे बराबर छ घण्टे चलना होता है, वे बहुधा चलते चलते सो लिया करते है।

मानसिक भावो को शुद्ध रखते हुए अन्तकरण को उच्च विचारो मे बलपूर्वक सलग्न करने का अभ्यास करने से अवश्य सफलता होगी। प्रत्येक विद्यार्थी या नवयुवक को, जो कि ब्रह्मचर्य-व्रत के पालन की इच्छा रखता है, उचित है कि अपनी दिनचर्या अवश्य निश्चित करे। खान पानादि का विशेष ध्यान रखे। महात्माओं के जीवन चरित्र तथा चरित्र-सगठन सम्बन्धी पुस्तको का अवलोकन करे। प्रेमालाप तथा उपन्यासो मे समय नष्ट न करे। खाली समय अकेला न बैठे। जिस समय कोई बुरे विचार उत्पन्न हो तुरन्त शीतल जल पान कर घूमने लगे, या किसी अपने से बडे के पास जाकर बातचीत करने लगे। अश्लील (इश्क भरी) गजलों, शेरो तथा गानो को न पढे और न सुने। स्त्रियों के दर्शन से बचता रहे। माता तथा बहिन से भी एकान्त मे न मिले। सुन्दर सहपाठियो या अन्य विद्यार्थियो से स्पर्श तथा आलिगन की भी आदत न डाले।

विद्यार्थी प्रातःकाल सूर्य उदय होने से एक घण्टा पहले शैया त्याग कर शौचादि से निवृत्त हो व्यायाम करे, या वायु-सेवनार्थ बाहर मैदान मे जावे। सूर्य उदय होने मे पाँच दस मिनट पूर्व स्नान से निवृत्त होकर यथा विश्वास परमात्मा का ध्यान करे। सदैव कुए के ताज़े जल से स्नान करे। यदि कुए का जल प्राप्त न हो तो जाडो मे जल को थोडा-सा गुनगुना करले और गर्मियो मे शीतल जल से स्नान करे। स्नान करने के पश्चात् एक खुरखुरे तौलिया या अंगोछे से शरीर खूब मले। उपासना के पश्चात् थोडा-सा जल-पान करे। कोई फल, शुष्क मेवा दुग्ध अथवा सबसे उत्तम यह है कि गेहूँ का दलिया रधवा कर यथा रुचि मीठा या नमक डालकर खावे। फिर अध्ययन करे और दस बजे से ग्यारह बजे के मध्य मे भोजन कर लेवे। भोजनो मे माँस, मछली, चरपरे, खट्टे, गरिष्ट, बासी, तथा उत्तेजक पदार्थों का त्याग करे। प्याज, लहसुन, लाल मिर्च, आम की खटाई और अधिक मसालेदार भोजन कभी न खावे। सात्विक भोजन करे। शुष्क भोजनो का भी त्याग करे। जहाँ तक हो सके सब्जी अर्थात् साग अधिक खावे। भोजन खूब चबा चबा कर करे। अधिक गरम या अधिक ठंठा भोजन भी वर्जित है। स्कूल अथवा कालेज से आकर थोड़ा-सा आराम करके एक घण्टा लिखने का काम करके खेलने के लिए जावे। मैदान मे थोडा-सा घूमे भी। घूमने के लिए चौक बाजार की गन्दी हवा मे जाना ठीक नही। स्वच्छ वायु का सेवन करे। सध्या समय भी शौच अवश्य जावे। थोड़ा-सा ध्यान करके हल्का-सा भोजन कर ले। यदि हो सके तो रात्रि के समय केवल दुग्ध पीने का अभ्यास डाले या फल खा लिया करे। स्वप्न दोषादिक व्याधियाँ केवल पेट के भारी होने से ही होती है। जिस

दिन भोजन भली-भाँति नही पचता, उसी दिन विकार हो जाता है, या मानसिक भावनाओ की अशुद्धता से निद्रा ठीक न आकर स्वप्नावस्था मे वीर्यपात हो जाता है। रात्रि के समय साढे दस बजे तक पठन-पाठन करे, पुन सो जावे। सोना सदैव खुली हवा मे चाहिए। बहुत मुलायम चिकने बिस्तर पर न सोवे। जहाँ तक हो सके, लकडी के तख्त पर कम्बल या गाढे की चद्दर बिछाकर सोवे। अधिक पाठ करना हो तो साढे नौ या दस बजे सो जावे। प्रातःकाल ३½ या ४ बजे उठकर कुल्ला करके शीतल जल पान करे और शौच से निवृत्त हो पठन-पाठन करे। सूर्योदय के निकट फिर नित्य की भाँति व्यायाम या भ्रमण करे। सब व्यायामो मे दण्ड बैठक सर्वोत्तम है। जहाँ जी चाहा, व्यायाम कर लिया। यदि हो सके तो प्रोफेसर राममूर्ति की विधि से दण्ड तथा बैठक करे। प्रोफेसर साहब की रीति विद्यार्थियों के लिए बडी लाभदायक है। थोडे समय मे ही पर्याप्त परिश्रम हो जाता है। दण्ड बैठक के अलावा शीर्षासन और पद्मासन का भी अभ्यास करना चाहिए और अपने कमरे मे वीरो और महात्माओ के चित्र रखने चाहिए।

द्वितीय खण्ड

स्वदेश-प्रेम

पूज्यपाद श्री स्वामी सोमदेव का देहान्त हो जाने के पश्चात् जब से अँग्रेजी के नवे दर्जे मे आया, कुछ स्वदेश सम्बन्धी पुस्तको का अवलोकन आरम्भ हुआ। शाहजहाँपुर मे सेवा-समिति की नीव प० श्रीराम बाजपेयी जी ने डाली, उस मे भी बडे उत्साह से कार्य किया। दूसरो की सेवा का भाव हृदय मे उदय हुआ। कुछ समझ मे आने लगा कि वास्तव मे देशवासी बडे दु खी है। उसी वर्ष मेरे पड़ौसी तथा मित्र जिनसे मेरा स्नेह अधिक था, एन्ट्रेन्स की परीक्षा पास करके कालेज मे शिक्षा पाने को चले गये। कालेज के स्वतन्त्र वायु मे उनके हृदय मे भी स्वदेश के भाव उत्पन्न हुए। उसी साल लखनऊ मे अखिल भारतवर्षीय काँग्रेस का उत्सव हुआ। मै भी उसमे सम्मिलित हुआ। कतिपय सज्जनो से भेट हुई। देश-दशा का कुछ अनुमान हुआ, और निश्चय हुआ कि देश के लिए कोई विशेष कार्य किया जावे। देश मे जो कुछ हो रहा है उसकी उत्तरदायी सरकार ही है। भारतवासियो के दुख तथा दुर्दशा की जिम्मेदारी गवर्मेन्ट पर ही है, अतएव सरकार को पलटने का प्रयत्न करना चाहिए। मैने भी इस प्रकार के विचारो मे योग दिया। काँग्रेस मे महात्मा तिलक के पधारने की खबर थी, इस कारण से गरम दल

के अधिक व्यक्ति आये हुए थे। काँग्रेस के सभापति का स्वागत बडी धूमधाम से हुआ था। उसके दूसरे दिन लोकमान्य बाल गगाधर तिलक की स्पेशल गाडी आने का समाचार मिला। लखनऊ स्टेशन पर बहुत बडा जमाव था। स्वागत कारिणी समिति के सदस्यो से मालूम हुआ कि लोकमान्य का स्वागत केवल स्टेशन पर ही किया जायगा, और शहर मे सवारी न निकाली जायगी। जिसका कारण यह था कि स्वागत कारिणी समिति के प्रधान प० जगत नारायण जी थे। अन्य गण्यमान सदस्यो मे प० गोकरणनाथ जी तथा अन्य उदार दल वालो (माडरेटो) की सख्या अधिक थी। माडरेटो को भय था कि यदि लोकमान्य की सवारी शहर मे निकाली गई, तो काँग्रेस के प्रधान से भी अधिक सम्मान होगा, जिसे वे उचित न समझते थे। अत उन सबने प्रबन्ध किया कि जैसे ही लोकमान्य पधारे, उन्हे मोटर मे बिठाकर शहर के बाहर-बाहर निकाल ले जावे। इन सब बातो को सुनकर नवयुवको को बडा खेद हुआ। कालेज के एक एम० ए० के विद्यार्थी ने इस प्रबन्ध का विरोध करते हुए कहा कि लोकमान्य का स्वागत अवश्य होना चाहिए। मैने भी इस विद्यार्थी के कथन मे सहयोग दिया। इसी प्रकार कई नवयुवको ने निश्चय किया कि, जैसे ही लोकमान्य स्पेशल से उतरे उन्हे घेर कर गाडी मे बिठा लिया जाय, और सवारी निकाली जाय। स्पेशल आने पर लोकमान्य सबसे पहले उतरे। स्वागत कारिणी के सदस्यो ने काँग्रेस के स्वय-सेवको का घेरा बनाकर लोकमान्य को मोटर मे जा बिठाया। मै तथा एक एम० ए० का विद्यार्थी मोटर के आगे लेट गये। सब कुछ समझाया गया, मगर किसी की एक न सुनी। हम लोगो की देखा-देखी और कई नवयुवक भी मोटर के सामने आकर

बैठ गये। उस समय मेरे उत्साह का यह हाल था कि मुँह से बात न निकलती थी, केवल रोता था और कहता था, 'मोटर मेरे ऊपर से निकाल ले जाओ।' स्वागत कारिणी के सदस्यो से कांग्रेस के प्रधान को ले जाने वाली गाडी माँगी, उन्होने देना स्वीकार न किया। एक नवयुवक ने मोटर का टायर काट दिया। लोकमान्य जी बहुत कुछ समझाते किन्तु वहाँ सुनता कौन? एक किराये की गाडी से घोडे खोलकर लोकमान्य के पैरों पर शिर रख आपको उसमे बिठाया, और सबने मिलकर हाथो से गाड़ी खीचना शुरू की। इस प्रकार लोकमान्य का इस धूमधाम से स्वागत हुआ कि किसी नेता की उतने जोरों से सवारी न निकाली गई। लोगो के उत्साह का यह हाल था कि कहते थे कि एक बार गाडी मे हाथ लगा लेने दो, जीवन सफल हो जाय। लोकमान्य पर फूलो की जो वर्षा की जाती थी, उसमे से जो फूल नीचे गिर जाते थे उसे उठाकर लोग पल्ले मे बाँध लेते थे। जिस स्थान पर लोकमान्य के पैर पडते, वहाँ की धूल सबके मत्थो पर दिखाई देती। कोई उस धूल को भी अपने रूमाल मे बाँध लेते थे। इस स्वागत से माडरेटों की बडो भद्द हुई।

क्रान्तिकारी आन्दोलन

कांग्रेस के अवसर पर लखनऊ मे ही मालूम हुआ कि एक गुप्त समिति है, जिसका मुख्य उद्देश्य क्रान्तिकारी आन्दोलन मे भाग लेना है। यही से क्रान्तिकारी गुप्त ससिति की चर्चा सुनकर कुछ समय बाद मै भी क्रान्तिकारी समिति के कार्य मे योग देने लगा। अपने एक मित्र द्वारा क्रान्तिकारी समिति का सदस्य हो गया। थोडे ही दिन मे मै कार्यकारिणी का सदस्य बना लिया गया।

समिति मे धन की बहुत कमी थी, उधर हथियारों की भी जरूरत थी। जब घर वापस आया, तब विचार हुआ कि एक पुस्तक प्रकाशित की जाय और उसमे जो लाभ हो उससे हथियार खरीदे जावे। पुस्तक प्रकाशित कराने के लिए धन कहाँ से आवे? विचार करते करते मुझे एक चाल सूझी। मैंने अपनी माता जी से कहा कि मै कुछ रोजगार करना चाहता हूँ उसमे अच्छा लाभ होगा। यदि रुपये दे सके तो बड़ा अच्छा हो। उन्होने २००) दिये। 'अमेरिका को स्वाधीनता कैसे मिली' नामक पुस्तक लिखी जा चुकी थी। प्रकाशित होने का प्रबन्ध हो गया। थोडे रुपये की जरूरत और पडी, मैने माता जी से २००) और लिये। पुस्तक की बिक्री हो जाने पर माता जी के रुपये पहले चुका दिये। लगभग २००) और भी बचे। पुस्तके अभी बिकने के लिए बहुत बाकी थी। उसी समय 'देशवासियो के नाम सन्देश' नामक एक पर्चा छपवाया गया, क्योकि प० गेंदालाल जी, ब्रह्मचारी जी के दल सहित ग्वालियर मे गिरफ्तार हो गये थे। अब सब विद्यार्थियो ने अधिक उत्साह के साथ काम करने की प्रतिज्ञा की। पर्चे कई ज़िलो मे लगाये गए, और बाँटे भी गए। पर्चे तथा 'अमेरिका को स्वाधीनता कैसे मिली' दोनो सयुक्त प्रान्त की सरकार ने ज़ब्त कर लिये।

हथियारों की खरीद

अधिकतर लोगो का विचार है कि देशी राज्यो में हथियार (रिवाल्वर, पिस्तौल, तथा राइफले इत्यादि) सब कोई रखता है, और बन्दूक इत्यादि पर लाइसेन्स नही होता। अतएव इस प्रकार के अस्त्र बड़ी सुगमता से प्राप्त हो सकते है। देशी राज्यों में

हथियारों पर कोई लाइसेन्स नही, यह बात बिल्कुल ठीक है, और हर एक को बन्दूक इत्यादि रखने की आजादी भी है। किन्तु कारतूसी हथियार बहुत कम लोगो के पास रहते है, जिसका कारण यह है कि कारतूस या विलायती बारूद खरीदने पर पुलिस मे सूचना देनी होती है। राज्य मे तो कोई ऐसी दूकान नही होती, जिस पर कारतूस या कारतूसी हथियार मिल सके। यहाँ तक कि विलायती बारूद और बन्दूक की टोपी भी नही मिलती, क्योकि ये सब चीजे बाहर से मँगानी पडती है। जितनी चीजे इस प्रकार की बाहर से मँगाई जाती हैं, उनके लिए रेजिडेन्ट (गवर्नमेण्ट का प्रतिनिधि जो रियासतो मे रहता है) की आज्ञा लेनी पडती है। बिना रेजिडेण्ट की मजूरी के हथियारो सम्बन्धी कोई चीज बाहर से रियासत मे नही आ सकती। इस कारण इस खटखट से बचने के लिए रियासत मे ही टोपीदार बन्दूके बनती है, और देशी बारूद भी वही के लोग शोरा, गन्धक तथा कोयला मिलाकर बना लेते है। बन्दूक की टोपी चुरा छिपाकर मँगा लेते है। नही तो टोपी के स्थान पर भी मनसल और पुटास अलग अलग पीसकर दोनो को मिलाकर उसी से काम चलाते हैं। हथियार रखने की आजादी होने पर भी ग्रामो मे किसी एक-दो धनी या जमीदार के यहाँ टोपीदार बन्दूक या टोपीदार छोटे पिस्तौल होते है, जिनमे ये लोग रियासत की बनी हुई बारूद काम मे लाते है। यह बारूद बरसात मे सील खा जाती है और काम नही देती। एक बार मै अकेला रिवाल्वर खरीदने गया। उस समय समझता था कि हथियारो की दूकान होगी, सीधे जाकर दाम देगे और रिवाल्वर लेकर चले आवेगे। प्रत्येक दूकान देखी, कही किसी पर बन्दूक इत्यादि का विज्ञापन या कोई दूसरा निशान न पाया।

फिर एक ताँगे पर सवार होकर सब शहर घूमा। ताँगे वाले ने पूछा कि क्या चाहिए। मैने उससे डरते डरते अपना उद्देश्य कहा। उसी ने दो तीन दिन घूम फिर कर एक टोपीदार रिवाल्वर खरिदवा दिया और देशी बनी हुई बारूद एक दूकान से दिला दी। मैं कुछ जानता तो था नही, एकदम दो सेर बारूद खरीदी। जो घर पर सन्दूक मे रखे रखे बरसात मे सील खाकर पानी हो गई। मुझे बडा दु ख हुआ। दूसरी बार जब मै क्रान्तिकारी समिति का सदस्य हो चुका था, तब दूसरे सहयोगियो की सम्मति से दो सौ रुपया लेकर हथियार खरीदने गया। इस बार मैने बहुत प्रयत्न किया तो एक कबाडी की सी दूकान पर कुछ तलवारे, खजर, कटार तथा दो चार टोपीदार बन्दूके रक्खी देखी। मैने बड़ा साहस करके उससे पूछा कि क्या आप ये चीज़े बेचते है, उसने जब हाँ मे उत्तर दिया तो मैने दो-चार चीजे देखी। दाम पूछे। इसी प्रकार वार्तालाप करके पूछा कि क्या आप कारतूसी हथियार नही बेचते या और कही नही विकते ? तब उसने सब विवरण सुनाया। उस समय उसके पास टोपीदार एक नली के छोटे छोटे दो पिस्तौल थे। मैने वे दोनों खरीद लिए। एक कटार भी खरीदी। उसने वादा किया कि यदि आप फिर आवे तो कुछ कारतूसी हथियार जुटाने का प्रयत्न किया जावे। लालच बुरी बला है, इस कहावत के अनुसार तथा इसलिए भी कि हम लोगों को कोई दूसरा ऐसा ज़रिया भी न था, जहाँ से हथियार मिल सकते, मै कुछ दिनो बाद फिर गया। इस समय उसी ने एक बडा सुन्दर कारतूसी रिवाल्वर दिया। कुछ पुराने कारतूस दिये। रिवाल्वर था तो पुराना, किन्तु बडा ही उत्तम था। दाम उसके नये के बराबर देने पड़े। अब उसे विश्वास हो गया

कि यह हथियारो के खरीदार है। उसने प्राणपण से चेष्टा की ओर कई रिवाल्वर तथा दो तीन राइफले जुटाई। उसे भी अच्छा लाभ हो जाता था। प्रत्येक वस्तु पर वह बीस तीस रुपये मुनाफा ले लेता था। बाज बाज चीज पर दूना नफा खा लेता था। इसके वाद हमारी सस्था के दो तीन सदस्य मिलकर गये। दूकानदार ने भी हमारी उत्कट इच्छा को देखकर इधर-उधर से पुराने हथियारो को खरीद करके, उनकी मरम्मत की, और नया सा करके हमारे हाथ वेचना शुरू किया। खूब ठगा। हम लोग कुछ जानते थे नही। इस प्रकार अभ्यास करने से कुछ नया पुराना समझने लगे। एक दूसरे सिक्लीगर से भेट हुई। वह स्वयं कुछ नही जानता था, -किन्तु उसने वचन दिया कि वह कुछ रईसो से हमारी भेट करा देगा। उसने एक रईस से मुलाकात कराई जिनके पास एक रिवाल्वर था। रिवाल्वर खरीदने की हमने इच्छा प्रकट की। उन महाशय ने उस रिवाल्वर के डेढ सौ रुपये माँगे। रिवाल्वर नया था। वडे कहने-सुनने पर सौ कारतूस उन्होने दिये और १५५) लिये। १५०) उन्होने स्वय लिए ५) सिक्लीगर को कमीशन के तौर पर देने पड़े। रिवाल्वर चमकता हुआ नया था, समझे अधिक दामो का होगा। खरीद लिया। विचार हुआ कि इस प्रकार ठगे जाने से काम न चलेगा। किसी प्रकार कुछ जानने का प्रयत्न किया जावे। वडी कोशिश के बाद कलकत्ता, वम्बई से वन्दूक विक्रेताओ की लिस्टे मँगा कर देखी, देखकर आँखे खुल गई। जितने रिवाल्वर या वन्दूके हमने खरीदी थी, एक को छोड सवके दुगने दाम दिये थे। १५५) के रिवाल्वर के दाम केवल ३०) ही थे और १०) के सौ कारतूस, इस प्रकार कुल सामान ४०) का था, जिसके वदले १५५) देने पडे ! वडा खेद हुआ ! करे तो क्या करे, और कोई दूसरा ज़रिया भी तो न था।

कुछ समय पश्चात् कारखानो की लिस्टें लेकर तीन चार सदस्य मिलकर गये। खूब जॉच तथा खोज की। किसी प्रकार रियासत की पुलिस को पता चल गया। एक खुफिया पुलिस वाला मुझे मिला, उसने कई हथियार दिलाने का वादा किया, और वह मुझे पुलिस इन्स्पेक्टर के घर ले गया। दैवात् उस समय पुलिस इन्स्पेक्टर घर पर मौजूद न थे। उनके द्वार पर एक पुलिस का सिपाही बैठा था, जिसे मै भली भॉति जानता था। मुहल्ले मे खुफिया पुलिस वाले की आँख बचाकर पूछा कि अमुक घर किस का है ? मालूम हुआ पुलिस इन्स्पेक्टर का ! मै इतस्तत करके जैसे-तेसे निकल आया, और अति शीघ्र अपने ठहरने का स्थान बदला। उस समय हम लोगो के पास दो राइफले, चार रिवाल्वर तथा दो पिस्तौल खरीदे हुए मौजूद थे। किसी प्रकार उस खुफिया पुलिस वाले को एक कारीगर से जहाँ पर कि हम लोग अपने हथियारो की मरम्मत कराते थे, मालूम हुआ कि हम मे से एक व्यक्ति उसी दिन जाने वाला था उसने चारो ओर स्टेशन पर तार दिलवाये। रेल गाडियो की तलाशी ली गई। पर पुलिस की असावधानी के कारण हम बाल बाल बच गये !

रुपये की चपत बुरी होती है। एक पुलिस सुपरिटेण्डेण्ट के पास एक राइफल थी। मालूम हुआ वे बेचते है। हम लोग पहुँचे। अपने आपको रियासत का रहने वाला बतलाया। उन्होने निश्चय करने के लिए बहुत से प्रश्न पूछे, क्योकि हम लोग लडके तो थे ही। पुलिस सुपरिटेण्डेण्ट पेन्शनयाफ्ता जाति के मुसलमान थे। हमारी बातों पर उन्हे पूर्ण विश्वास न हुआ। कहा अपने थानेदार से लिखा लाओ कि वह तुम्हे जानता है। मैं गया। जिस स्थान का रहने वाला बताया था, वहाँ के थानेदार का नाम मालूम किया, और एक दो

ज़मीदारों का नाम मालूम कर के एक पत्र लिखा कि मै उस स्थान के रहने वाले अमुक जमीदार का पुत्र हूँ, और वे लोग मुझे भली भाँति जानते है। उसी पत्र पर ज़मीदारो के हिन्दी मे और पुलिस के दारोगा के अंग्रेजी मे हस्ताक्षर बना करके पत्र ले जाकर पुलिस कप्तान साहब को दिया। बड़े गौर से देखने के बाद वे बोले, मैं थाने मे दर्याफ्त कर लूं। तुम्हे भी थाने चलकर इत्तिला देनी होगी कि राइफल खरीद रहे है। हम लोगो ने कहा कि हमने आपके इतमीनान के लिए इतनी मुसीवत झेली, दस वारह रुपये खर्च किये, अगर अब भी इतमीनान न हो तो मजबूरी है। हम पुलिस मे न जावेगे। राइफल के दाम लिस्ट मे १८०) लिखे थे, वह २५०) माँगते थे, साथ मे दो सौ कारतूस भी दे रहे थे। कारतूस भरने का सामान भी देते थे, जो लगभग ५०) का होता। इस प्रकार पुरानी राइफल के नई के सामान दाम माँगते थे। हम लोग भी २५०) देते थे। पुलिस कप्तान ने भी विचारा पूरे दाम मिल रहे है। स्वय वृद्ध हो चुके थे। कोई पुत्र भी न था। अतएव २५०) लेकर राइफल दे दी। पुलिस मे कुछ पूछने न गये। उन्ही दिनो राज्य के एक उच्च पदाधिकारी के नौकर को मिलाकर उनके यहाँ से रिवाल्वर चोरी कराया। जिसके दाम लिस्ट मे ७५) थे, उसे १००) मे खरीदा। एक माउज़र पिस्तौल भी चोरी कराया, जिसके दाम लिस्ट मे उस समय २००) थे। हमे माउजर पिस्तौल की प्राप्ति की वडी उत्कट इच्छा थी। वडे भारी प्रयत्न के वाद यह माउजर पिस्तौल मिला, जिसका मूल्य ३००) देना पडा। कारतूस एक भी न मिला। हमारे पुराने मित्र कवाड़ी महोदय के पास माउजर पिस्तौल के पचास कारतूस पड़े थे। उन्होंने वड़ा काम दिया। हममे से किसी

ने भी पहले माउज़र पिस्तौल देखा भी न था। कुछ न समझ सके कि कैसे प्रयोग किया जाता है। बडे कठिन परिश्रम से उसका प्रयोग समझ मे आया।

हमने तीन राइफले, एक बारह बोर की दोनाली कारतूसी बन्दूक, दो टोपीदार बन्दूके, तीन टोपीदार रिवाल्वर और पाँच कारतूसी रिवाल्वर खरीदे। प्रत्येक हथियार के साथ पचास या सौ कारतूस भी ले लिये। इन सब मे लगभग चार हजार रुपये व्यय हुए। कुछ कटार तथा तलवारे इत्यादि भी खरीदी थी।

मैनपुरी षड्यन्त्र

इधर तो हम लोग अपने कार्य मे व्यस्त थे, उधर मैनपुरी के एक सदस्य पर लीडरी का भूत सवार हुआ। उन्होने अपना पृथक संगठन किया। कुछ अस्त्र-शस्त्र भी एकत्रित किये। धन की कमी की पूर्ति के लिए एक सदस्य से कहा कि अपने किसी कुटुम्बी के यहाँ डाका डलवाओ। उस सदस्य ने कोई उत्तर न दिया। उसे आज्ञापत्र दिया गया और मार देने की धमकी दी गई! वह पुलिस के पास गया। मामला खुला। मैनपुरी मे घर-पकड शुरू हो गई। हम लोगों को भी समाचार मिला। देहली मे काँग्रेस होने वाली थी। विचार किया गया कि 'अमेरिका को स्वाधीनता कैसे मिली' नामक पुस्तक जो यू० पी० सरकार ने जब्त कर ली थी, काँग्रेस के अवसर पर बेच दी जावे। काँग्रेस के उत्सव पर मै शाहजहाँपुर की सेवा समिति के साथ अपनी ऐंबुलेन्स की टोली लेकर गया था। ऐंबुलेन्स वालो को प्रत्येक स्थान पर बिना रोक जाने की आज्ञा थी। कॉंग्रेस-पण्डाल के बाहर खुले रूप मे नवयुवक यह कहकर पुस्तक बेच रहे थे यू०

पी० में जब्त किताब 'अमेरिका को स्वाधीनता कैसे मिली'। खुफिया पुलिस वालो ने कांग्रेस का कैम्प घेर लिया। सामने ही आर्य-समाज का कैम्प था। वहाँ पर पुस्तक विक्रेताओ की पुलिस ने तलाशी लेना आरम्भ कर दी। मैंने कॉग्रेस कैम्प पर अपने स्वयंसेवक इसलिए छोड दिये कि वे बिना स्वागत कारिणी समिति के मन्त्री या प्रधान की आज्ञा पाये किसी पुलिस वाले को कैम्प मे न घुसने दे। आर्य-समाज के कैम्प मे गया। सब पुस्तकें एक टेण्ट में जमा थी। मैंने अपने ओवर कोट मे सब पुस्तके लपेटी, जो लगभग दो सौ के होगी, और उसे कन्धे पर डालकर पुलिस वालो के सामने से निकला। मै वर्दी पहने था, टोप लगाये हुए था। एम्बुलेन्स का बडा-सा लाल बिल्ला मेरे हाथ पर लगा हुआ था, किसी ने कोई सन्देह भी न किया और पुस्तके बच गई!

देहली कॉंग्रेस से लौटकर शाहजहाँपुर आये। वहाँ भी पकड-धकड शुरू हुई। हम लोग वहाँ से चल कर दूसरे शहर के एक मकान मे ठहरे हुए थे। रात्रि के समय मकान मालिक ने बाहर से मकान मे ताला डाल दिया। ग्यारह बजे के लगभग हमारा एक साथी बाहर से आया। उसने बाहर से ताला पड़ा देख पुकारा। हम लोगो को भी सन्देह हुआ। सबके सब दीवार पर से उतर कर मकान छोडकर चल दिये। अन्धेरी रात थी। थोड़ी दूर गये थे कि हठात् आवाज़ आई 'खड़े हो जाओ। कौन जाता है?' हम लोग सात-आठ आदमी थे। समझे कि घिर गये! कदम उठाना ही चाहते थे कि फिर आवाज़ आई 'खड़े हो जाओ नही तो गोली मारते है।' हम लोग खडे हो गये। थोड देर मे एक पुलिस के दारोगा बन्दूक हमारी तरफ किये हुए रिवाल्वर कन्धे मे लटकाए कई

सिपाहियों को लिए हुए आ पहुँचे। पूछा—'कौन हो, कहाँ जाते हो ?' हम लोगो ने कहा—'विद्यार्थी हैं, स्टेशन जा रहे है।' 'कहाँ जाओगे ?' 'लखनऊ।' उस समय रात के दो बजे थे। लखनऊ का गाड़ी पाँच बजे जाती थी। दारोगा जी को शक हुआ। लालटेन आई। हम लोगो के चेहरे रोशनी मे देखकर उनका शक जाता रहा। कहने लगे—"रात के समय लालटेन लेकर चला कीजिये। गलती हुई मुआफ कीजिये।" हम लोग भी सलाम झाड कर चलते बने। एक बाग मे फूंस की मड़ैय्या पड़ी थी। उसमे जा बैठे। पानी बरसने लगा। मूसलाधार पानी गिरा। सब कपडे भीग गये। जमीन पर भी पानी भर गया। जनवरी का महीना था। खूब जाडा पड रहा था। रात भर भीगते और ठिठुरते रहे। बड़ा कष्ट हुआ। प्रात काल धर्मशाला मे जाकर कपडे सुखाये। दूसरे दिन शाहजहाँपुर आकर, बन्दूके जमीन मे गाड़कर, प्रयाग पहुँचे।

विश्वासघात

प्रयाग की एक धर्मशाला मे दो तीन दिन निवास करके विचार किया गया कि एक व्यक्ति बहुत दुर्बलात्मा है, यदि वह पकडा गया तो सब भेद खुल जायगा, अत उसे मार दिया जाय। मैने कहा मनुष्य-हत्या ठीक नही। पर अन्त मे निश्चय हुआ कि कल चला जाय और उसकी हत्या कर दी जाय। मै चुप हो गया। हम लोग चार सदस्य साथ थे। हम चारो तीसरे पहर झूंसी का किला देखने गये। जब लौटे तब सन्ध्या हो चुकी थी। उसी समय गगा पार करके यमुना तट पर गये। शौचादि से निवृत्त होकर मै संध्या समय उपासना करने के लिए रेती पर बैठ गया। एक महाशय ने कहा—

"यमुना के निकट बैठो।" मै तट से दूर तक ऊँचे स्थान पर बैठा था। मैं वहीं बैठा रहा। वे तीनो भी मेरे पास ही आकर बैठ गये। मै आँखे बन्द किए ध्यान कर रहा था। थोड़ी देर मे खट से आवाज़ हुई। समझा कि साथियो मे से कोई कुछ कर रहा होगा। तुरन्त ही एक फायर हुआ। गोली सन से मेरे कान के पास से निकल गई! मै समझ गया कि मेरे ऊपर ही फायर हुआ। मै रिवाल्वर निकालता हुआ आगे को बढा। पीछे फिर कर देखा, वह महाशय माउजर हाथ मे लिए मेरे ऊपर गोली चला रहे है! कुछ दिन पहले मुझसे उनका कुछ झगडा हो चुका था, किन्तु बाद मे समझौता हो गया था। फिर भी उन्होने यह कार्य किया। मै भी सामना करने को प्रस्तुत हुआ। तीसरा फायर करके वे भाग खडे हुए। उनके साथ प्रयाग मे ठहरे हुए दो सदस्य और भी थे। वे तीनो भाग गये। मुझे देर इसलिए हुई कि मेरा रिवाल्वर चमडे के खोल मे रखा था। यदि आधा मिनट और उनमे कोई भी खडा रह जाता तो मेरी गोली का निशाना बन जाता। जब सब भाग गये, तब मै गोली चलाना व्यर्थ जान, वहाँ से चला आया। मै बाल-बाल बच गया। मुझ से दो गज के फासले पर से माउजर पिस्तौल से गोलियाँ चलाई गई और उस अवस्था मे जब कि मै बैठा हुआ था। मेरी समझ मे नही आया कि मैं बच कैसे गया। पहला कारतूस फूटा नही। तीन फायर हुए। मै गद्‌गद् होकर परमात्मा का स्मरण करने लगा। आनन्दोल्लास मे मुझे मूर्छा आ गई। मेरे हाथ से रिवाल्वर तथा खोल दोनो गिर गये। यदि उस समय कोई निकट होता तो मुझे भली भाँति मार सकता था। मेरी यह अवस्था लगभग एक मिनट तक रही होगी कि मुझ से किसी ने कहा, 'उठ'। मैं उठा! रिवाल्वर

उठा लिया। खोल उठाने का स्मरण ही न रहा ! २२ जनवरी की घटना है। मै केवल एक कोट और एक तहमद पहने था। बाल बढ रहे थे। नगे सिर, पैर मे जूता भी नही। ऐसी हालत मे कहाँ जाऊँ ? अनेको विचार उठ रहे थे।

इन्ही विचारो मे निमग्न यमुना तट पर बड़ी देर तक घूमता रहा। ध्यान आया कि धर्मशाला चलकर ताला तोड सामान निकालूं। फिर सोचा कि धर्मशाला जाने से गोली चलेगी, व्यर्थ मे खून होगा। अभी ठीक नही। अकेले बदला लेना उचित नही। और कुछ साथियो को लेकर फिर बदला लिया जायगा। मेरे एक साधारण मित्र प्रयाग मे रहते थे। उनके पास जाकर वडी मुश्किल से एक चादर ली और रेल से लखनऊ आया। लखनऊ आकर बाल बनवाये। धोती जूता खरीदे, क्योकि रुपये मेरे पास थे। रुपये न भी होते तो भी मै सदैव जो चालीस-पचास रुपये की सोने की अँगूठी पहने रहता था, उसे काम मे ला सकता था। वहाँ से आकर अन्य सदस्यों से मिलकर सब विवरण कह सुनाया। कुछ दिन जगल मे रहा। इच्छा थी कि सन्यासी हो जाऊँ। ससार कुछ नही। बाद को फिर माता जी के पास गया। उन्हे सब कह सुनाया। उन्होने मुझे ग्वालियर जाने का आदेश किया। थोड़े दिनो मे माता पिता सभी दादी जी के भाई के यहाँ आ गये। मै भी वहाँ पहुँच गया।

मै हर वक्त यही विचार किया करता कि मुझे बदला अवश्य लेना चाहिए। एक दिन प्रतिज्ञा करके रिवाल्वर लेकर शत्रु की हत्या करने की इच्छा से मैं गया भी, किन्तु सफलता न मिली। इसी प्रकार की उधेड़-बुन मे मुझे ज्वर आने लगा। कई महीनो तक बीमार रहा। माता जी मेरे विचारो को समझ गई। माता जी ने

बडी सान्त्वना दी। कहने लगी कि, प्रतिज्ञा करो कि तुम अपनी हत्या की चेष्टा करने वालो को जान से न मारोगे। मैने प्रतिज्ञा करने मे आनाकानी की, तो वे कहने लगी कि मै मातृ-ऋण के बदले मे प्रतिज्ञा कराती हूँ, क्या जवाब है ? मैने कहा—"मै उनसे बदला लेने की प्रतिज्ञा कर चुका हूँ।" माता जी ने मुझे बाध्य कर मेरी प्रतिज्ञा भग कराई। अपनी बात पक्की रखी। मुझे ही सिर नीचा करना पडा। उस दिन से मेरा ज्वर कम होने लगा और मै अच्छा हो गया।

पलायनावस्था

मै ग्राम मे ग्रामवासियो की भाँति उसी प्रकार के कपडे पहनकर रहने लगा। खेती भी करने लगा। देखने वाले अधिक से अधिक इतना समझ सकते थे कि मै शहर मे रहा हूँ, सम्भव है कुछ पढा भी होऊँ। खेती के कामो मे मैने विशेष ध्यान दिया। शरीर तो हृष्ट-पुष्ट था ही, थोडे ही दिनो मे अच्छा खासा किसान बन गया। उस कठोर भूमि मे खेती करना कोई सरल काम नही। बबूल, नीम के अतिरिक्त कोई एक दो आम के वृक्ष कही भले ही दिखाई दे जाये। बाकी वह नितान्त मरुभूमि है। खेत मे जाता था। थोडी देर मे ही झरबेरी के काँटो से पैर भर जाते। पहले-पहल तो बडा कष्ट प्रतीत हुआ। कुछ समय पश्चात् अभ्यास हो गया। जितना खेत उस देश का एक बलिष्ट पुरुष दिन भर मे जोत सकता था, उतना मै भी जोत लेता था। मेरा चेहरा बिलकुल काला पड गया। थोडे दिनो के लिए मै शाहजहाँपुर की ओर घूमने आया तो कुछ लोग मुझे पहचान भी न सके। मैं रात को शाहजहाँपुर पहुँचा।

गाडी छूट गई। दिन के समय पैदल जा रहा था कि एक पुलिस वाले ने पहचान लिया। वह और पुलिस वालो को लेने के लिए गया। मै भागा, पहले दिन का ही थका हुआ था। लगभग बीस मील पहले दिन पैदल चला था। उस दिन भी पैंतीस मील पैदल चलना पडा।

मेरे माता-पिता ने सहायता की। मेरा समय अच्छी प्रकार व्यतीत हो गया। माता जी की पूंजी तो मैने नष्ट कर दी। पिता जी से सरकार की ओर से कहा गया कि लडके की गिरफ्तारी के वारट की पूर्ति के लिए लडके का हिस्सा, जो उसके दादा की जायदाद होगी, नीलाम किया जायगा। पिता जी घबरा कर दो हजार रुपये का मकान आठ सौ मे तथा और दूसरी चीजे भी थोडे दामो मे बेचकर शाहजहाँपुर छोडकर भाग गये। दो बहनो का विवाह हुआ, जो कुछ रहा बचा था, वह भी व्यय हो गया। माता-पिता की हालत फिर निर्धनो जैसी हो गई। समिति के जो दूसरे सदस्य भागे हुए थे, उनकी बहुत बुरी दशा हुई। महीनो चनो पर ही समय काटना पडा। दो चार रुपये जो मित्रो तथा सहायको से मिल जाते थे, उन्ही पर गुजर होता था। पहनने को कपडे तक न थे। विवश हो रिवाल्वर तथा बन्दूके बेची, तब दिन कटे। किसी से कुछ कह भी न सकते थे और गिरफ्तारी के भय के कारण कोई व्यवस्था या नौकरी भी न कर सकते थे।

उसी अवस्था मे मुझे व्यवसाय करने की सूझी। मैने अपने सहपाठी तथा मित्र श्रीयुत सुशीलचन्द्र सेन की, जिनका देहान्त

हो चुका था, स्मृति मे बंगला भाषा का अध्ययन किया। मेरे छोटे भाई का जब जन्म हुआ तो मैने उसका नाम भी सुशीलचन्द्र रखा। मैंने विचारा कि एक पुस्तक माला निकालूँ। लाभ भी होगा। कार्य भी सरल है। बगला से हिन्दी मे पुस्तकों का अनुवाद करके प्रकाशित कराऊँगा। अनुभव कुछ भी नही था। बगला पुस्तक 'निहिलिस्ट रहस्य' का अनुवाद प्रारम्भ कर दिया। जिस प्रकार अनुवाद किया, उसका स्मरण कर कई वार हँसी आ जाती है। कई बैल, गाय तथा भैंस लेकर ऊसर मे चराने के लिए जाया करता था। खाली बैठा रहना पड़ता था, अतएव कापी पेंसिल साथ ले जाता और पुस्तक का अनुवाद किया करता था। पशु जब कही दूर निकल जाते तब अनुवाद छोड लाँठी लेकर उन्हे हकारने जाया करता था। कुछ समय के लिए एक साधु की कुटी पर जाकर रहा। वहाँ अधिक समय अनुवाद करने मे व्यतीत करता था। खाने के लिए आटा ले जाता था। चार-पाँच दिन के लिए इकट्ठा आटा रखता था। भोजन स्वय पका लेता था। जब पुस्तक ठीक हो गई, तो 'सुशील माला' के नाम से ग्रन्थ माला निकाली। पुस्तक का नाम 'बोलशेविको की करतूत' रखा। दूसरी पुस्तक 'मन की लहर' छपवाई। इस व्यवसाय मे लगभग पाँच सौ रुपये की हानि हुई। जब राजकीय घोषणा हुई और राजनैतिक कैदी छोडे गये, तब शाहजहाँपुर आकर कोई व्यवसाय करने का विचार हुआ, ताकि माता-पिता की कुछ सेवा हो सके। विचार किया करता था कि इस जीवन मे अब फिर कभी आजादी से शाहजहाँपुर मे विचरण न कर सकूंगा, पर परमात्मा की लीला अपार है। वे दिन आये। मै पुन. शाहजहाँपुर का निवासी हुआ।

पंडित गेंदालाल दीक्षित

आपका जन्म यमुना तट पर बटेश्वर के निकट 'मई' ग्राम मे हुआ था। आपने मैट्रिक्यूलेशन (दसवा) दर्जा अंग्रेजी का पास किया था। आप जब औरैया जिला इटावा मे डी० ए० वी० स्कूल मे टीचर थे, तब आपने शिवाजी समिति की स्थापना की थी, जिसका उद्देश्य था शिवाजी की भाँति दल बनाकर उससे लूट मार करवाना, उसमे से चौथ लेकर हथियार खरीदना और उस दल मे बाँटना। इसी की सफलता के लिए आप रियासत से हथियार ला रहे थे, जो कुछ नवयुवको की असावधानी के कारण आगरे मे स्टेशन के निकट पकड लिए गये थे। आप बडे वीर तथा उत्साही थे। शान्त बैठना जानते ही न थे। नवयुवकों को सदैव कुछ-न-कुछ उपदेश देते रहते थे। एक-एक सप्ताह तक बूट तथा वर्दी न उतारते थे। जब आप ब्रह्मचारी जी के पास सहायता लेने गये, तो दुर्भाग्यवश गिरफ्तार कर लिए गये। ब्रह्मचारी के दल ने अंग्रेजी राज्य मे कई डाके डाले थे। डाके डालकर ये लोग चम्बल के बीहडो मे छिप जाते थे। सरकारी राज्य की ओर से ग्वालियर महाराज को लिखा गया। इस दल के पकडने का प्रबन्ध किया गया। सरकार ने तो हिन्दुस्तानी फौज भी भेजी थी, जो आगरा जिले मे चम्बल के किनारे बहुत दिनो तक पड़ी रही। पुलिस सवार तैनात किये, फिर भी ये लोग भयभीत न हुए। विश्वासघात से पकडे गये। इन्ही मे का एक आदमी पुलिस ने मिला लिया। डाका डालने के लिए दूर एक स्थान निश्चय किया गया। जहाँ तक जाने के लिए एक पड़ाव देना पडता था। चलते चलते सब थक गये। पडाव दिया गया। जो आदमी पुलिस से मिला हुआ था, उसने भोजन लाने को कहा, क्योकि उसके

किसी सम्वन्धी का मकान निकट था । वह पूडी करा के लाया । सब पूडी खाने लग गये । ब्रह्मचारी जी जो सदैव अपने हाथ से बनाकर भोजन करते थे या आलू अथवा घुइयाँ भून कर खा लेते थे, उन्होने भी उस दिन पूडी खाना स्वीकार किया । सब भूखे तो थे ही, खाने लगे । ब्रह्मचारी जी ने भी एक पूडी खाई । उनकी ज़बान ऐंठने लगी और जो अधिक खा गये थे, वे गिर गये । पूडी लाने वाला पानी लेने के वहाने चल दिया । पूडियो मे विष मिला हुआ था । ब्रह्मचारी जी ने बन्दूक उठाकर पूडी लाने वाले पर गोली चलाई । ब्रह्मचारी की गोली का चलाना था कि चारो ओर से गोली चलने लगी । पुलिस छिपी हुई थी । गोली चलने से ब्रह्मचारी जी के कई गोली लगी । तमाम शरीर घायल हो गया । प० गेदालाल जी की आँख मे एक छर्रा लगा । बाई आँख जाती रही । कुछ आदमी ज़हर के कारण मरे, कुछ गोली से मारे गये। इस प्रकार अस्सी आदमियो मे से पचीस तीस जान से मारे गये । सब पकडकर के ग्वालियर के किले मे बन्द कर दिये गये । किले में हम लोग जव पण्डित जी से मिले, तव चिट्ठी भेजकर उन्होने हमको सब हाल वताया। एक दिन किले मे हम लोगो पर भी सन्देह हो गया था, वडी कठिनता से एक अधिकारी की सहायता से हम लोग निकल सके ।

जव मैनपुरी षड्यन्त्र का अभियोग चला, पण्डित गेदालाल जी को सरकार ने ग्वालियर राज्य से मँगाया । ग्वालियर के किले का जलवायु वडा ही हानिकारक था । पण्डित जी को क्षय रोग हो गया था । मैनपुरी स्टेशन से जेल जाते समय ग्यारह बार रास्ते मे वैठ कर जेल पहुँचे । पुलिस ने जव हाल पूछा तो उन्होने कहा वालको को क्यो गिरफ्तार किया है ? मै हाल वताऊँगा । पुलिस को विश्वास

हो गया। आपको जेल से निकाल कर दूसरे सरकारी गवाहो के निकट रख दिया। वहाँ पर सब विवरण जान रात्रि के समय एक और सरकारी गवाह को लेकर पण्डित जी भाग खड़े हुए। भागकर एक गॉव मे एक कोठरी मे ठहरे। साथी कुछ काम के लिए बाजार गया और फिर लौट कर न आया। बाहर से कोठरी की जजीर बन्द कर गया था। पण्डित जी उसी कोठरी मे तीन दिन बिना अन्न जल बन्द रहे। समझे कि साथी किसी आपत्ति मे फँस गया होगा, अन्त मे किसी प्रकार जजीर खुलवाई। रुपये वह सब साथ ही ले गया था! पास एक पैसा भी न था। कोटा से पैदल आगरा आये। किसी प्रकार अपने घर पहुँचे। बहुत बीमार थे। पिता ने यह समझ कर कि घर वालो पर आपत्ति न आय, पुलिस को सूचना देनी चाही। पण्डित जी ने पिता से बडी विनय प्रार्थना की और दो तीन दिन मे घर छोड दिया। हम लोगो की बहुत खोज की। किसी का कुछ पता न पा दिल्ली मे एक प्याऊ पर पानी पिलाने की नौकरी कर ली। अवस्था दिनो-दिन बिगड रही थी। रोग भीषण रूप धारण कर रहा था! छोटे भाई तथा पत्नी को बुलाया। भाई किंकर्त्तव्यविमूढ! वह क्या कर सकता था? सरकारी अस्पताल मे भर्ती कराने ले गया। पण्डित जी की धर्मपत्नी को दूसरे स्थान मे भेजकर जब वह अस्पताल आया, तो जो देखा उसे लिखते हुए लेखनी कम्पायमान होती है! पण्डित जी शरीर त्याग चुके थे! केवल उनका मृत शरीर मात्र ही पडा हुआ था। स्वदेश को कार्य-सिद्धि मे प० गेदालाल दीक्षित ने जिस नि सहाय अवस्था मे अन्तिम बलिदान दिया, उसकी स्वप्न मे भी आशङ्का न थी। पण्डित जी की प्रबल इच्छा थी कि उनकी मृत्यु गोली लगकर हो। भारतवर्ष की

एक महानात्मा विलीन हो गई और देश मे किसी ने जाना भी नही ! आपकी विस्तृत जीवनी 'प्रभा' मासिक पत्रिका मे प्रकाशित हो चुकी है। मैनपुरी षड्यन्त्र के मुख नेता आप ही समझे गये थे। इस षड्यन्त्र मे विशेषताये ये हुई कि नेताओ मे से केवल दो व्यक्ति पुलिस के हाथ आये, जिनमे पण्डित गेदालाल दीक्षित एक सरकारी गवाह को लेकर भाग गये और श्रीयुत शिवकृष्ण जेल से भाग गये, फिर हाथ न आये। छ मास पश्चात् जिन्हे सजा हुई थी वे भी राजकीय घोषणा से मुक्त कर दिये गये। खुफिया पुलिस विभाग का क्रोध पूर्णतया शान्त न हो सका और उनकी बदनामी भी इस केस मे बहुत हुई।

तृतीय खण्ड

स्वतन्त्र जीवन

राजकीय घोषणा के पश्चात् जब मै शाहजहाँपुर आया तो शहर की अद्भुत दशा देखी। कोई पास तक खडे होने का साहस न करता था। जिसके पास मै जाकर खडा हो जाता था, वह नमस्ते कर चल देता था। पुलिस का बडा प्रकोप था। प्रत्येक समय वह छाया की भाँति पीछे पीछे फिरा करती थी। इस प्रकार का जीवन कब तक व्यतीत किया जाय ? मैने कपडा बुनने का काम सीखना आरम्भ किया। जुलाहे बड़ा कष्ट देते थे। कोई काम सिखाना न चाहता था। बडी कठिनता से मैने कुछ काम सीखा। उसी समय एक कारखाने मे मैनेजरी का स्थान खाली हुआ। मैने उस स्थान के लिए प्रयत्न किया। मुझ से पाँच सौ रुपये की जमानत माँगी गई। मेरी दशा बडी शोचनीय थी। तीन तीन दिवस तक भोजन प्राप्त नही होता था, क्योकि मैने प्रतिज्ञा की थी कि किसी से कुछ सहायता न लूंगा। पिता जी से बिना कुछ कहे मै चला आया था। मै पाँच सौ रुपये कहाँ से लाता ? मैने दो एक मित्रो से केवल दो सौ रुपये की जमानत देने की प्रार्थना की। उन्होने साफ इनकार कर दिया ! मेरे हृदय पर वज्रपात हुआ। ससार अन्धकारमय दिखाई देता था।

पर बाद को एक मित्र की कृपा से नौकरी मिल गई। अब अवस्था कुछ सुधरी। मै भी सभ्य पुरुषो की भाँति समय व्यतीत करने लगा। मेरे पास भी चार पैसे हो गये। वे ही मित्र, जिन से मैने दो सौ रुपये की जमानत देने की प्रार्थना की थी, अब मेरे पास अपने चार चार हजार रुपयों की थैली, अपनी बन्दूक, लाइसेंस इत्यादि सब डाल जाते थे कि मेरे यहाँ उनकी वस्तुएँ सुरक्षित रहेगी ! समय के इस फेर को देखकर मुझे हँसी आती थी।

इस प्रकार कुछ काल व्यतीत हुआ। दो चार ऐसे पुरुषो से भेट हुई, जिनको पहले मै बडी श्रद्धा की दृष्टि से देखता था। उन लोगो ने मेरी पलायनावस्था के सबन्ध मे कुछ समाचार सुने थे। मुझ से मिलकर वे बडे प्रसन्न हुए। मेरी लिखी हुई पुस्तके भी देखी। इस समय मै एक तीसरी पुस्तक 'केथेराइन' लिख चुका था। मुझे पुस्तको के व्यवसाय मे बहुत घाटा हो चुका था। मैने माला का प्रकाशन स्थगित कर दिया। 'कैथेराइन' एक पुस्तक प्रकाशक को दे दी। उन्होने वडी कृपा कर उस पुस्तक को थोडे से हेर-फेर के साथ प्रकाशित कर दिया। 'कैथेराइन' को देखकर मेरे इष्ट मित्रो को बडा हर्ष हुआ। उन्होने मुझे पुस्तक लिखते रहने के लिए वडा उत्साहित किया। मैंने 'स्वदेशी रंग' नामक एक और पुस्तक लिख कर एक पुस्तक प्रकाशक को दी। वह भी प्रकाशित हो गई।

बडे परिश्रम के साथ मैने एक पुस्तक 'क्रान्तिकारी जीवन' लिखी। 'क्रान्तिकारी जीवन' को कई पुस्तक प्रकाशको ने देखा, पर किसी का साहस न हो सका कि उसको प्रकाशित करे ! आगरा, कानपुर, कलकत्ता इत्यादि कई स्थानो मे घूम कर पुस्तक मेरे पास लौट आई। कई मासिक पत्रिकाओ मे 'राम' तथा 'अज्ञात' नाम से

मेरे लेख प्रकाशित हुआ करते थे। लोग बडे चाव से उन लेखो का पाठ करते थे। मैने किसी स्थान पर लेखन शैली का नियमपूर्वक अध्ययन न किया या। बैठे बैठे खाली समय मे ही कुछ लिखा करता और प्रकाशनार्थ भेज दिया करता था। अधिकतर बगला तथा अग्रेजी की पुस्तको से अनुवाद करने का ही विचार था। थोडे समय के पश्चात् श्रीयुत अरविन्द घोष की बगला पुस्तक 'योगिक साधन' का अनुवाद किया। दो एक पुस्तक-प्रकाशको को दिखाया, पर वे अति अल्प पारितोषिक देकर पुस्तक लेना चाहते थे। आजकल के समय मे हिन्दी के लेखको तथा अनुवादको की अधिकता के कारण पुस्तक-प्रकाशको को भी बड़ा अभिमान हो गया है। बडी कठिनता से बनारस के एक प्रकाशक ने 'योगिक साधन' प्रकाशित करने का वचन दिया। पर थोडे दिनो मे वह स्वय ही अपने साहित्य मन्दिर मे ताला डालकर कही पधार गये! पुस्तक का अव तक कोई पता न लगा। पुस्तक अति उत्तम थी। प्रकाशित हो जाने से हिन्दी साहित्य सेवियो को अच्छा लाभ होता। मेरे पास जो 'बोलशेविक करतूत' तथा 'मन की लहर' की प्रतियाँ बची थी, वे मैने लागत से भी कम मूल्य पर कलकत्ते के एक व्यक्ति श्रीयुत दीनानाथ सगतिया को दे दी। बहुत थोडी पुस्तके मैने बेची थी। दीनानाथ महाशय पुस्तके हडप कर गये! मैने नोटिस दिया। नालिश की। लगभग चार सौ रुपये की डिग्री भी हुई, किन्तु दीनानाथ महाशय का कही अनुसधान न मिला। वे कलकत्ता छोड कर पटना गये। पटना से भी कई गरीबो का रुपया मारकर कही अन्तरधान हो गये! अनुभव-हीनता से इस प्रकार ठोकरे खानी पड़ी। कोई पथ-प्रदर्शक तथा सहायक नही था, जिससे परामर्श करता। व्यर्थ के उद्योग-धन्धो तथा स्वतन्त्र कार्यों मे शक्ति का व्यय करता रहा।

पुनर्संगठन

जिन महानुभावों को मै पूजनीय दृष्टि से देखता था, उन्ही ने अपनी इच्छा प्रकट की कि मैं क्रान्तिकारी दल का पुन. सगठन करूँ। गत जीवन के अनुभव से मेरा हृदय अत्यन्त दुखित था। मेरा साहस न देखकर, इन लोगों ने बहुत उत्साहित किया और कहा कि हम आपको केवल निरीक्षण का कार्य देंगे, बाकी सब कार्य स्वय ही करेगे। कुछ मनुष्य हमने पहले जुटा लिये है, धन की कमी न होगी, आदि। मान्य पुरुषो की प्रवृत्ति देख मैने भी स्वीकृति दे दी। मेरे पास जो अस्त्र-शस्त्र थे, मैने दिये। जो दल उन्होने एकत्रित किया था, उसके नेता से मुझे मिलाया। उसको वीरता की बडी प्रशसा की। वह एक अशिक्षित ग्रामीण पुरुष था। मेरी समझ मे आ गया कि यह बदमाशो का या स्वार्थी जनो का कोई सगठन है। मुझ से उस दल के नेता ने दल का कार्य निरीक्षण करने की प्रार्थना की। दल मे कई फौज से आये हुए लड़ाई पर से वापिस किये गये व्यक्ति भी थे।,मुझे इस प्रकार के व्यक्तियों से कभी कोई काम न पडा था। मै दो एक महानुभावो को साथ ले इन लोगो का कार्य देखने के लिए गया।

थोडे दिनों बाद इस दल के नेता महाशय एक वेश्या को भी ले आये। उसे रिवाल्वर दिखाया कि यदि कही गई तो गोली से मारी जायगी। यह समाचार सुन उसी दल के दूसरे सदस्य ने वडा क्रोध प्रकाशित किया और मेरे पास खबर भेजने का प्रवन्ध किया। उसी समय एक दूसरा आदमी पकडा गया, जो नेता महाशय को जानता था। नेता महाशय रिवाल्वर तथा कुछ सोने के आभूपणो सहित

गिरफ्तार हो गये। उनकी वीरता की बडी प्रशंसा सुनी थी, जो इस प्रकार प्रकट हुई कि कई आदमियो के नाम पुलिस को बताये और इकबाल कर लिया। लगभग तीस-चालीस आदमी पकडे गये।

एक दूसरा व्यक्ति था जो बहुत वीर था। पुलिस उसके पीछे पडी हुई थी। एक दिन पुलिस कप्तान ने सवार तथा तीस-चालीस बन्दूक वाले सिपाही लेकर उसके घर मे उसे घेर लिया। उसने छत पर चढ कर दोनाली कारतूसी बन्दूक से लगभग तीन सौ फायर किये। बन्दूक गरम होकर गल गई। पुलिस वाले समझे कि घर मे कई आदमी है। सब पुलिस वाले छिप कर आड मे से सुबह होने की प्रतीक्षा करने लगे। उसने मौका पाया। मकान के पीछे से कूद पडा, एक सिपाही ने देख लिया। उसने सिपाही की नाक पर रिवाल्वर का कुन्दा मारा। सिपाही चिल्लाया। सिपाही के चिल्लाते ही मकान मे से एक फायर हुआ। पुलिस वाले समझे मकान ही मे है। सिपाही को धोखा हुआ होगा। बस, वह जंगल मे निकल गया। अपनी स्त्री को एक टोपीदार बन्दूक दे आया था कि यदि चिल्लाहट हो तो एक फायर कर देना। ऐसा ही हुआ और वह निकल गया। जगल मे जाकर एक दूसरे दल से मिला। जगल मे भी एक समय पुलिस कप्तान से सामना हो गया। गोली चली। उसके भी पैर मे छर्रे लगे थे। अब यह बडे साहसी हो गये थे। समझ गये थे कि पुलिस वाले किस प्रकार समय पर आड मे छिप जाते है। इन लोगो का दल छिन्न-भिन्न हो गया था। अतः उन्होने मेरे पास आश्रय लेना चाहा। मैने बड़ी कठिनता से अपना पीछा छुडाया। तत्पश्चात जगल मे जाकर ये दूसरे दल से मिल गये। वहाँ पर दुराचार के कारण जगल के दल के नेता ने इन्हे गोली से मार दिया। उस नेता को भी समय

पाकर उसके साथी ने गोली से मार दिया। इस प्रकार सब दल छिन्न-भिन्न हो गया। जो पकडे गये उन पर कई डकैतियाँ चली, किसी को तीस साल, किसी को पचास साल, किसी को बीस साल की सजाये हुई ! एक बेचारा जिसका किसी डकैती से कोई सम्बन्ध न था, केवल शत्रुता के कारण फँसा दिया गया। उसे फाँसी हो गई और जो सब प्रकार डकैतियो मे सम्मिलित था, जिसके पास डकैती का माल तथा कुछ हथियार पाये गये, पुलिस से गोली भी चली, उसे पहले फाँसी की सजा की आज्ञा हुई, पर पैरवी अच्छी हुई, अतएव हाईकोर्ट से फाँसी की सज़ा माफ हो गई, केवल पाँच वर्ष की सज़ा रह गई। जेल वालो से मिलकर उसने डकैतियो मे शिनाख्त न होने दी थी। इस प्रकार इस दल की समाप्ति हुई। देवयोग से हमारे अस्त्र बच गये। केवल एक ही रिवाल्वर पकडा गया।

नोट बनाना

इसी बीच मेरे एक मित्र की एक नोट बनाने वाले महाशय से भेट हुई। उन्होने बड़ी बडी आशाये बाँधी। बडी लम्बी लम्बी स्कीम बाँधने के पश्चात् मुझ से कहा कि एक नोट बनाने वाले से भेट हुई है। बडा दक्ष पुरुष है। मुझे भी बना हुआ नोट देखने की बडी उत्कट इच्छा थी। मैने उन सज्जन के दर्शन की इच्छा प्रकट की। जब उक्त नोट बनाने वाले महाशय मुझे मिले तो बड़ी कौतूहलोत्पादक बाते की। मैंने कहा कि मैं स्थान तथा आर्थिक सहायता दूंगा, नोट बनाओ। जिस प्रकार उन्होने मुझसे कहा, मैने सब प्रबन्ध कर दिया, किन्तु मैंने कह दिया था कि नोट बनाते समय मै वहाँ उपस्थित रहूँगा। मुझे बताना कुछ मत, पर मैं नोट बनाने की रीति अवश्य

देखना चाहता हूँ। पहले पहल उन्होंने दस रुपये का नोट बनाने का निश्चय किया। मुझ से एक दस रुपये का नया साफ नोट मँगाया। नौ रुपये दवा खरीदने के बहाने से ले गये। रात्रि मे नोट बनाने का प्रवन्ध हुआ। दो शीशे लाये। कुछ कागज भी लाये। दो तीन शीशियो मे कुछ दवाई थी। दवाइयो को मिलाकर एक प्लेट मे सादे कागज पानी मे भिगोये। मै जो साफ नोट लाया था, उस पर एक सादा कागज लगाकर दोनो को दूसरी दवा डालकर धोया। फिर सादे कागजो में लपेट एक पुडिया सी बनाई और अपने एक साथी को दी कि उसे आग पर गरम कर लाय। आग वहाँ से कुछ दूर पर जलती थी। कुछ समय तक वह आग पर गरम करता रहा और पुडिया लाकर वापस कर दी। नोट बनाने वाले ने पुडिया खोलकर दोनो शीशो मे दबाकर, शीशो को दवा मे धोया और फीते से शीशो को वाँध कर रख दिया और कहा कि दो घण्टे मे नोट बन जायगा। शीशे रख दिये। बातचीत होने लगी। कहने लगा, इस प्रयोग मे बडा व्यय होता है। छोटे छोटे नोट बनाने से कोई लाभ नही। बडे नोट बनाने चाहिएँ, जिससे पर्याप्त धन की प्राप्ति हो। इस प्रकार मुझे भी सिखा देने का वचन दिया। मुझे कुछ कार्य था। मैं जाने लगा तो वह भी चला गया। दो घण्टे बाद आने का निश्चय हुआ।

मै विचारने लगा कि किस प्रकार एक नोट के ऊपर दूसरा सादा कागज रखने से नोट बन जायगा। मैने प्रेस का काम सीखा था। थोडी बहुत फोटोग्राफी भी जानता था। साइन्स (विज्ञान) का भी अध्ययन किया था। कुछ समझ मे न आया कि नोट सीधा कैसे छपेगा। सबसे बड़ी बात यह थी कि नम्बर कैसे छपेंगे। मुझे बड़ा

भारी सन्देह हुआ। दो घण्टे बाद मैं जब गया तो रिवाल्वर भर कर जेब मे डालते गया। यथासमय वह महाशय आये। उन्होने शीशे खोलकर कागज निकाल कर उन्हे फिर एक दवा मे धोया। अब दोनो कागज खोले। एक मेरा लाया हुआ नोट और दूसरा और एक दस रुपये का साफ नोट उसी के ऊपर से उतार कर सुखाया। कहा कितना साफ नोट है। मैने हाथ मे लेकर देखा। दनो नोटो के नम्बर मिलाये। नम्बर नितान्त भिन्न-भिन्न थे। मैने जेब से रिवाल्वर निकाल नोट बनाने वाले महाशय की छाती पर रखकर कहा 'बदमाश! इस तरह ठगता फिरता है?' वह काँप कर गिर पडा! मैंने उसको उसकी मूर्खता समझाई कि यह ढोग ग्रामवासियों के सामने चल सकता है, अनजान पढे लिखे भी धोखे मे आ सकते है। किन्तु तू मुझे धोखा देने आया है! अन्त मे मैने उससे प्रतिज्ञा पत्र लिखाकर, उस पर उसके हाथ की दसो अगुलियो के निशान लगवाये कि वह ऐसा काम फिर न करेगा। दसो अगुलियो के निशान देने मे उसने कुछ ढील की। मैने रिवाल्वर उठाकर कहा कि गोली चलती है, उसने तुरन्त दसो अगुलियों के निशान बना दिये। बुरी तरह काँप रहा था। मेरे उन्नीस रुपये खर्च हो चुके थे। मैने दोनो नोट रख लिये और शीशे, दवाये इत्यादि सब छीन ली कि मित्रो को तमाशा दिखाऊँगा। तत्पश्चात् उन महाशय को विदा किया। उसने किया यह था कि जब अपने साथी को आग पर गरम करने के लिए कागज़ की पुड़िया दी थी, उसी समय उस साथी ने सादे कागज़ की पुडिया बदल कर दूसरी पुड़िया ले आया जिस मे दोनो नोट थे। इस प्रकार नोट बन गया। इस प्रकार का एक बडा भारी दल है, जो सारे भारतवर्ष मे ठगी का काम करके हज़ारो रुपये पैदा करता है। मैं

एक सज्जन को जानता हूँ जिन्होंने इसी प्रकार पचास हजार से अधिक रुपये पैदा कर लिये। होता यह है कि ये लोग अपने एजेण्ट रखते है। वे एजेण्ट साधारण पुरुषो के पास जाकर नोट बनाने की कथा कहते है। आता धन किसे बुरा लगता है ? वे नोट बनवाते है। इस प्रकार पहले दस का नोट बनाकर दिया, वह बाजार मे बेच आये। सौ रुपये का बनाकर दिया वह भी बाज़ार मे चलाया, और चल क्यो न जाय ? इस प्रकार के सब नोट असली होते है। वे तो केवल चाल से रख दिये जाते है। इसके बाद कहा कि हजार या पाँच सौ का नोट लाओ, तो कुछ धन भी मिले। जैसे तैसे करके बेचारा एक हजार का नोट लाया। सादा कागज रखकर शीशे मे बाँध दिया। हजार का नोट जेब मे रखा और चम्पत हुए ! नोट के मालिक रास्ता देखते है, वहाँ नोट बनाने वालो का पता ही नही ! अन्त मे विवश हो शीशो को खोला जाता है, तो दो सादे कागज के अलावा कुछ नही मिलता ! वे अपने सिर पर हाथ मार कर रह जाते है। इस डर से कि यदि पुलिस को मालूम हो गया तो और लेने के देने पडेगे, किसी से कुछ कह भी नही सकते। कलेजा मसोस कर रह जाते है। पुलिस ने इस प्रकार के कुछ अभियुक्तो को गिरफ्तार भी किया, किन्तु ये लोग पुलिस को नियमपूर्वक चौथ देते रहते हैं और इस कारण बचे रहते है !

चालबाज़ी

कई महानुभावो ने गुप्त समिति के नियमादि बनाकर मुझे दिखाये। उनमे एक नियम यह भी था कि जो व्यक्ति समिति का कार्य करे, उन्हे समिति की ओर से कुछ मासिक दिया जाय। मैने

इस नियम को अनिवार्य रूप में मानना अस्वीकार किया। मैं यहां तक सहमत था कि जो व्यक्ति सर्वप्रकारेण समिति के कार्य मे अपना समय व्यतीत करे, उनको केवल गुजारा मात्र समिति की ओर से दिया जा सकता है। जो लोग किसी व्यवसाय को करते है, उन्हे किसी प्रकार का मासिक भत्ता देना उचित न होगा। जिन्हे समिति के कोष मे से कुछ दिया जाय, उनको भी कुछ व्यवसाय करने का प्रवन्ध करना उचित है, ताकि वे लोग सर्वथा समिति की सहायता पर निर्भर रह कर निरे भाडे के टट्टू न वन जाये। भाडे के टट्टुओ से समिति का कार्य लेना, जिसमे कतिपय मनुष्यो के प्राणो का उत्तरदायित्व हो और थोडा सा भेद खुलने से ही वडा भयकर परिणाम हो सकता है, उचित नही है। तत्पश्चात् उन महानुभावो की सम्मति हुई कि एक निश्चित कोप समिति के सदस्यो के देने के निमित्त स्थापित किया जाय, जिसकी आय का व्योरा इस प्रकार हो कि डकैतियो से जितना धन प्राप्त हो उसका आधा समिति के कार्यों मे व्यय किया जाय और आधा समिति के सदस्यो को वरावर वरावर बाँट दिया जाय। इस प्रकार के परामर्श से मैं सहमत न हो सका और मैने इस प्रकार की गुप्त समिति मे, कि जिसका एक उद्देश्य पेट-पूर्ति हो, योग देने से इनकार कर दिया। जव मेरी इस प्रकार की दृष्टि देखी तो उन महानुभावो ने आपस मे षड्यन्त्र रचा।

जव मैने उन महानुभावो के परामर्श तथा नियमादि को स्वीकार न किया तो वे चुप हो गये। मै भी कुछ समझ न सका कि जो लोग मुझ मे इतनी श्रद्धा रखते थे, जिन्होने कई प्रकार की आशायें देकर मुझ से क्रान्तिकारी दल का पुनर्संगठन करने की प्रार्थनायें की थी, अनेकों प्रकार की उम्मीदे वॅधाई थी, सव कार्य स्वयं करने के

वचन दिये थे, वे लोग ही मुझ से इस प्रकार के नियम बनाने की माँग करने लगे। मुझे बडा आश्चर्य हुआ। प्रथम प्रयत्न मे, जिस समय मै मैनपुरी षड्यन्त्र के सदस्यो के सहित कार्य करता था, उस समय हम मे से कोई भी अपने व्यक्तिगत प्राइवेट खर्च मे समिति का धन व्यय करना पूर्ण पाप समझता था। जहाँ तक हो सकता अपने खर्च के लिये माता पिता से कुछ लाकर प्रत्येक सदस्य समिति के कार्यो मे धन व्यय किया करता था। इस कारण मेरा साहस इस प्रकार के नियमो मे सहमत होने का न हो सका। मैने विचार किया कि यदि कोई समय आया, और किसी प्रकार अधिक धन प्राप्त हुआ, तो कुछ सदस्य ऐसे स्वार्थी हो सकते हैं, जो अधिक धन लेने की इच्छा करे, और आपस मे वैमनस्य बढे। उसके परिणाम बडे भयकर हो सकते है। अत इस प्रकार के कार्य मे योग देना मैने उचित न समझा।

मेरी यह अवस्था देख इन लोगो ने आपस मे षड्यन्त्र रचा, कि जिस प्रकार मै कहूँ वे नियम स्वीकार कर ले और विश्वास दिला कर जितने अस्त्र-शस्त्र मेरे पास हो, उनको मुझ से लेकर सब पर अपना आधिपत्य जमा ले। यदि मै अस्त्र-शस्त्र माँगूं तो मुझसे युद्ध किया जाय, और आ पडे तो मुझे कही ले जाकर जान से मार दिया जाय। तीन सज्जनो ने इस प्रकार का षड्यन्त्र रचा और मुझसे चालबाजी करनी चाही। दैवात् उनमे से एक सदस्य के मन मे कुछ दया आ गई। उसने आकर मुझसे सब भेद कह दिया। मुझे सुनकर बडा खेद हुआ कि जिन व्यक्तियो को मै पिता तुल्य मानकर श्रद्धा करता हूँ, वे ही मेरे नाश करने के लिये इस प्रकार नीचता का कार्य करने को उद्यत है। मै सम्हल गया। मै उन लोगो से सतर्क रहने

लगा कि पुन. प्रयाग जैसी घटना न घटे। जिन महाशय ने मुझ से भेद कहा था, उनकी उत्कट इच्छा थी कि वे एक रिवाल्वर रखे और इस इच्छा पूर्ति के लिए उन्होंने मेरा विश्वासपात्र बनने के कारण मुझसे भेद कहा था। मुझसे एक रिवाल्वर मांगा कि मै उन्हे' कुछ समय के लिए रिवाल्वर दे दूं। यदि मै उन्हे रिवाल्वर दे देता तो वह उसे हजम कर जाते ! मै कर ही क्या सकता था ? और अब रिवाल्वर इत्यादि पाना कोई सरल कार्य भी न था। बाद को बडी कठिनता से इन चालबाजियो से अपना पीछा छुडाया।

अब सब ओर से चित्त को हटा कर बड़े मनोयोग से नौकरी मे समय व्यतीत करने लगा। कुछ रुपया इकट्ठा करने के विचार से, कुछ कमीशन इत्यादि का प्रबन्ध कर लेता था। इस प्रकार पिता जी का थोडा सा भार बटाया। सबसे छोटी बहिन का विवाह नही हुआ था। पिता जी के सामर्थ्य के बाहर था कि उस बहिन का विवाह किसी भले घर मे कर सकते। मैने रुपया जमा करके बहिन का विवाह एक अच्छे जमीदार के यहाँ कर दिया। पिता जी का भार उतर गया। अब केवल माता, पिता, दादी तथा छोटे भाई थे, जिन के भोजनो का प्रबन्ध होना अधिक कठिन काम न था। अब माता जी की उत्कट इच्छा हुई कि मै भी विवाह कर लूं। कई अच्छे अच्छे विवाह-सम्बन्ध के सुयोग एकत्रित हुए। किन्तु मै विचारता था कि जब तक पर्याप्त धन पास न हो, विवाह बन्धन मे फँसना ठीक नही। मैने स्वतन्त्र कार्य आरम्भ किया, नौकरी छोड़ दी। एक मित्र ने सहायता दी। मैने रेशमी कपडा बुनने का एक निजी कारखाना खोल दिया। बडे मनोयोग तथा परिश्रम से कार्य किया। परमात्मा की दया से अच्छी सफलता हुई। एक डेड़ साल मे ही मेरा कारखाना

चमक गया। तीन चार हजार की पूंजी से कार्य आरम्भ किया था। एक साल बाद सब खर्च निकाल कर लगभग दो हजार रुपये लाभ हुए। मेरा उत्साह और भी बढा। मैने एक दो व्यवसाय और भी प्रारम्भ किये, उसी समय मालूम हुआ कि सयुक्त प्रान्त के क्रान्तिकारी दल का पुनर्संगठन हो रहा है। कार्यारम्भ हो गया है। मैने भी योग देने का वचन दिया, किन्तु उस समय मै अपने व्यवसाय मे बुरी तरह फँसा हुआ था। मैने छ मास का समय लिया कि छ मास मे मै अपने व्यवसाय को अपने साझी को सौप दूंगा, और अपने आपको उसमे से निकाल लूंगा, तब स्वतन्त्रतापूर्वक क्रान्तिकारी कार्य मे योग दे सकूंगा। छ मास तक मैने अपने कारखाने का सब काम साफ करके अपने साझी को सब काम समझा दिया। तत्पश्चात अपने वचनानुसार कार्य मे योग देने का उद्योग किया।

है। फिर शरीर ढकने की भी आवश्यकता होती है। अतएव कुछ प्रबन्ध ही ऐसा होना चाहिए, जिसमे नित की आवश्यकताये पूरी हो जाये। जितने धनी मानी स्वदेश प्रेमी थे उन्होने असहयोग आन्दोलन मे पूर्ण सहायता दी थी। फिर भी कुछ ऐसे कृपालु सज्जन थे, जो थोडी बहुत आर्थिक सहायता देते थे। किन्तु प्रान्त भर के प्रत्येक जिले मे संगठन करने का विचार था। पुलिस की दृष्टि बचाने के लिए भी पूर्ण प्रयत्न करना पडता था। ऐसी परिस्थिति मे साधारण नियमो को काम मे लाते हुए कार्य करना बड़ा कठिन था। अनेक उद्योगो के पश्चात कुछ भी सफलता न होती थी। दो-चार जिलो मे सगठनकर्त्ता नियत किये गये थे, जिनको कुछ मासिक गुजारा दिया जाता था। पाँच-दस महीने तक तो इस प्रकार कार्य चलता रहा। बाद को जो सहायक कुछ आर्थिक सहायता देते थे, उन्होने भी हाथ खीच लिया। अब हम लोगो की अवस्था बहुत खराब हो गई। सब कार्य-भार मेरे ऊपर ही आ चुका था। कोई भी किसी प्रकार की मदद न देता था। जहाँ तहाँ से पृथक् पृथक् जिलो मे कार्य करने वाले मासिक व्यय की माँग कर रहे थे। कई मेरे पास- आये भी। मैने कुछ रुपया कर्ज लेकर उन लोगो को एक मास का खर्च दिया। कइयो पर कुछ कर्ज भी हो चुका था। मै कर्ज न निपटा सका। एक केन्द्र के कार्यकर्त्ता को जब पर्याप्त धन न मिल सका, तो वे कार्य छोडकर चले गये। मेरे पास क्या प्रवन्ध था, जो मै उसकी उदर-पूर्ति कर सकता? अद्भुत समस्या थी! किसी तरह उन लोगो को समझाया।

थोडे दिनो मे क्रान्तिकारी पर्चे आये। सारे देश मे निश्चित तिथि पर पर्चे बाँटे गये। रंगून, बम्बई, लाहौर, अमृतसर, कलकत्ता

तथा बंगाल के मुख्य मुख्य शहरो तथा संयुक्त प्रान्त के सभी मुख्य मुख्य जिलो मे पर्याप्त सख्या मे पर्चो का वितरण हुआ। भारत सरकार बडी सशक हुई कि ऐसी कौनसी और इतनी वडी सुसगठित समिति है, जो एक ही दिन मे सारे भारतवर्ष मे पर्चे बँट गये ! उसी के वाद मैने कार्यकारिणी की एक बैठक करके जो केन्द्र खाली हो गया था, उसके लिए एक महाशय को नियुक्त किया। केन्द्र मे कुछ परिवर्त्तन भी हुआ, क्योकि सरकार के पास सयुक्त प्रान्त के सम्बन्ध मे वहुत सी सूचनाये पहुँच चुकी थी। भविष्य की कार्य-प्रणाली का निर्णय किया गया।

कार्यकर्त्ताओं की दुर्दशा

इस समय समिति के सदस्यो की वडी दुर्दशा थी। चने मिलना भी कठिन था। सब पर कुछ न कुछ कर्ज़ हो गया था। किसी के पास सावित कपडे तक न थे। कुछ विद्यार्थी वनकर धर्मक्षेत्रो तक मे भोजन कर आते थे। चार-पाँच ने अपने अपने केन्द्र त्याग दिये। पाँच सौ से अधिक रुपए मै कर्ज़ ले कर व्यय कर चुका था। यह दुर्दशा देख मुझे वडा कष्ट होने लगा। मुझ से भी भर पेट भोजन न किया जाता था। सहायता के लिए कुछ सहानुभूति रखने वालो का द्वार खटखटाया, किन्तु कोरा उत्तर मिला। किंकर्त्तव्यविमूढ था, कुछ समझ मे न आता था। कोमल हृदय नवयुवक मेरे चारो ओर बैठकर कहा करते, "पंडित जी अव क्या करें ?" मैं उनके सूखे मूखे मुख देख वहुधा रो पड़ता कि स्वदेश-सेवा का व्रत लेने के कारण फकीरो से भी बुरी दशा हो रही है ! एक एक कुर्त्ता तथा धोती भी ऐसी नही थी जो सावित होती। लंगोट बाँधकर दिन व्यतीत

करते थे। अगोछे पहन कर नहाते थे, एक समय क्षेत्र मे भोजन करते थे, एक समय दो दो पैसे के सत्तू खाते थे। मै पन्द्रह वर्ष से एक समय दूध पीता था। इन लोगो की यह दशा देखकर मुझे दूध पीने का साहस न होता था। मै भी सबके साथ बैठकर सत्तू खा लेता था। मैने विचार किया कि इतने नवयुवको के जीवन को नष्ट करके उन्हे कहाँ भेजा जाय? जब समिति का सदस्य बनाया था, तो लोगो ने बडी बडी आशाये बँधाई थी। कईयो का पढना-लिखना छुडाकर काम मे लगा दिया था। पहले से मुझे यह हालत मालूम होती तो मै कदापि इस प्रकार की समिति मे योग न देता। बुरा फँसा! क्या करूँ कुछ समझ मे ही न आता था। अन्त मे धैर्य धारण कर दृढतापूर्वक कार्य करने का निश्चय किया।

इसी बीच मे बगाल आर्डिनेस निकला, और गिरफ्तारियाँ हुईं। इनकी गिरफ्तारियो ने यहाँ तक असर डाला कि कार्यकर्त्ताओ मे निष्क्रियता के भाव आ गये। क्या प्रबन्ध किया जाय, कुछ निर्णय नही कर सके। मैने प्रयत्न किया कि किसी तरह एक सौ रुपया मासिक का कही से प्रबन्ध हो जाय। प्रत्येक केन्द्र के प्रतिनिधि से हर प्रकार से प्रार्थना की थी कि समिति के सदस्यो से कुछ सहायता ले, मासिक चन्दा वसूल करे, पर किसी ने कुछ न सुनी। कुछ सज्जनो से व्यक्तिगत प्रार्थना की कि वे अपने वेतन मे से कुछ मासिक दे दिया करे। किसी ने कुछ ध्यान न दिया। सदस्य रोज मेरे द्वार पर खडे रहते थे। पत्रो की भरमार रहती थी कि कुछ धन का प्रबन्ध कीजिए, भूखो मर रहे है। दो एक को व्यवसाय मे लगाने का भी इन्तज़ाम किया। दो-चार जिलो मे काम बन्द कर दिया, वहाँ के कार्यकर्त्ताओ से स्पष्ट शब्दो मे कह दिया कि हम मासिक

शुल्क नही दे सकते। यदि निर्वाह का कोई दूसरा मार्ग हो, और उस ही पर निर्भर रहकर कार्य कर सकते हो तो करो। हम से जिस समय हो सकेगा देगे, किन्तु मासिक वेतन देने के लिए हम बाध्य नही। कोई बीस रुपए कर्ज़े के माँगता था, कोई पचास का बिल भेजता था, और कईयो ने असन्तुष्ट होकर कार्य छोड दिया। मैंने भी समझ लिया ठीक ही है, पर इतना करने पर भी गुज़र न हो सकी।

अशान्त युवक दल

कुछ महानुभावो की प्रकृति होती है कि अपनी कुछ शान जमाना या अपने आपको बडा दिखाना अपना कर्त्तव्य समझते हैं, जिससे भयंकर हानियाँ हो जाती है। भोले-भाले आदमी ऐसे मनुष्यो मे विश्वास करके उनमे आशातीत साहस, योग्यता तथा कार्यदक्षता की आशा करके उन पर श्रद्धा रखते है। किन्तु समय आने पर यह निराशा के रूप मे परिणत हो जाती है। इस प्रकार के मनुष्यो की किन्ही कारणो वश यदि प्रतिष्ठा हो गई, अथवा अनुकूल परिस्थितियो के उपस्थित हो जाने से उन्होने किसी उच्च कार्य मे योग दे दिया, तब तो फिर वे अपने आपको बडा भारी कार्यकर्त्ता जाहिर करते हैं। जनसाधारण भी अन्धविश्वास से उनकी बातो पर विश्वास कर लेते हैं, विशेषकर नवयुवक तो इस प्रकार के मनुष्यो के जाल मे शीघ्र ही फँस जाते है। ऐसे ही लोग नेतागिरी की धुन मे अपनी डेढ चावल की खिचडी अलग पकाया करते हैं। इसी कारण पृथक पृथक दलों का निर्माण होता है। इस प्रकार के मनुष्य प्रत्येक समाज तथा प्रत्येक जाति मे पाये जाते है। इनसे

क्रान्तिकारी दल भी मुक्त नही रह सकता। नवयुवकों का स्वभाव चचल होता है, वे शान्त रहकर संगठित कार्य करना बडा दुष्कर समझते है। उनके हृदय मे उत्साह की उमगे उठती है। वे समझते हैं दो-चार अस्त्र हाथ आये कि हमने गवर्नमेट को नाको चने चबवा दिए ! मै भी जब क्रान्तिकारी दल मे योग देने का विचार कर रहा था, उस समय मेरी उत्कण्ठा थी कि यदि एक रिवाल्वर मिल जाय तो दस-बीस अँग्रेजो को मार दूं ! इसी प्रकार के भाव मैने कई नवयुवको मे देखे। उनकी बडी प्रबल हार्दिक इच्छा होती है, कि किसी प्रकार एक रिवाल्वर या पिस्तौल उनके हाथ लग जाय तो वे उसे अपने पास रख ले। मैने उनसे रिवाल्वर पास रखने का लाभ पूछा, तो कोई सन्तोषजनक उत्तर नही दे सके। कई युवको को मैने इस शौक के पूरा करने मे सैकडो रुपये बरबाद करते भी देखा है। किसी क्रान्तिकारी आन्दोलन के सदस्य नही, कोई विशेष कार्य भी नही, महज़ शौकिया रिवाल्वर पास रखेगे ! ऐसे ही थोडे से युवको का एक दल एक महोदय ने भी एकत्रित किया। ये सब बडे सच्चरित्र, स्वाभिमानी और सच्चे कार्यकर्त्ता थे। इस दल ने विदेश से अस्त्र प्राप्त करने का बड़ा उत्तम सूत्र प्राप्त किया था, जिससे यथारुचि पर्याप्त अस्त्र मिल सकते थे। उन अस्त्रो के दाम भी अधिक न थे। अस्त्र भी पर्याप्त सख्या मे बिलकुल नये मिलते थे। यहाँ तक प्रबन्ध हो गया था कि यदि हम लोग रुपये का उचित प्रबन्ध कर देगे, और यथा समय मूल्य निपटा दिया करेगे, तो हम को माल उधार भी मिल जाया करेगा और हमे जब जिस प्रकार के जितनी सख्या मे अस्त्रो की आवश्यकता होगी, मिल जाया करेगे। यही नही, समय आने पर हम विशेष प्रकार की मशीन वाली बन्दूके भी बनवा सकेगे।

इस समय समिति की आर्थिक अवस्था बड़ी खराब थी। इस सूत्र के हाथ लग जाने और इससे लाभ उठाने की इच्छा होने पर भी बिना रुपये के कुछ होता दिखलायी न पडता था। रुपये का प्रबन्ध करना नितान्त आवश्यक था; किन्तु वह हो कैसे? दान कोई देता न था, कर्ज भी न मिलता था, और कोई उपाय न देख डाका डालना तय हुआ। किन्तु किसी व्यक्ति विशेष की सम्पत्ति (Private Property) पर डाका डालना हमे अभीष्ट न था। सोचा, यदि लूटना है तो सरकारी माल क्यो न लूटा जाय? इसी उधेडबुन मे एक दिन मै रेल मे जा रहा था। गार्ड के डब्बे के पास की गाडी मे बैठा था। स्टेशन मास्टर एक थैली लाया, और गार्ड के डब्बे मे डाल गया। कुछ खटपट की आवाज हुई। मैने उतर कर देखा कि एक लोहे का सन्दूक रखा है। विचार किया कि इसी मे थैली डाली होगी। अगले स्टेशन पर उसमे थैली डालते भी देखा। अनुमान किया कि लोहे का सन्दूक गार्ड के डब्बे मे जंजीर से बँधा रहता होगा, ताला पडा रहता होगा, आवश्यकता होने पर ताला खोलकर उतार लेते होगे। इसके थोडे दिनो बाद लखनऊ स्टेशन पर जाने का अवसर प्राप्त हुआ। देखा, एक गाडी मे से कुली लोहे के, आमदनी वाले सन्दूक उतार रहे है। निरीक्षण करने से मालूम हुआ कि उनमे जजीर ताला कुछ नही पडता, यो ही रखे जाते है। उसी समय निश्चय किया कि इसी पर हाथ मारूँगा।

रेलवे डकैती

उसी समय से धुन सवार हुई। तुरन्त स्थान पर जा टाइम टेबुल देखकर अनुमान किया कि सहारनपुर से गाडी चलती है, लखनऊ

तक अवश्य दस हजार रुपये रोज की आमदनी होती होगी। सब बाते ठीक करके कार्यकर्त्ताओ का संग्रह किया। दस नवयुवकों को लेकर विचार किया कि किसी छोटे स्टेशन पर जब गाडी खडी हो, स्टेशन के तार घर पर अधिकार कर ले, और गाडी का सन्दूक उतार कर तोड डाले, जो कुछ मिले उसे लेकर चल दे। परन्तु इस कार्य मे मनुष्यो की अधिक सख्या की आवश्यकता थी। इस कारण यही निश्चय किया कि गाडी की जजीर खीचकर चलती गाडी को खडा करके तब लूटा जाय। सम्भव है कि तीसरे दर्जे की जजीर खीचने से गाडी न खड़ी हो, क्योकि तीसरे दर्जे में बहुधा प्रबन्ध ठोक नही रहता है। इस कारण से दूसरे दर्जे की जजीर खीचने का प्रबन्ध किया। सब लोग उसी ट्रेन मे सवार थे। गाडी खडी होने पर सब उतर कर गार्ड के डब्बे के पास पहुँच गये। लोहे का सन्दूक उतार कर छेनियो से काटना चाहा, छेनियो ने काम न दिया, तब कुल्हाडा चला।

मुसाफिरो से कह दिया कि सब गाडी मे चढ जाओ। गाडी का गार्ड गाड़ी मे चढना चाहता था, पर उसे जमीन पर लेट जाने की आज्ञा दी, ताकि बिना गार्ड की गाडी न जा सके। दो आदमियो को नियुक्त किया कि वे लाइन की पगडण्डी को छोड कर घास मे खडे होकर गाडी से हटे हुए गोली चलाते रहे। एक सज्जन गार्ड के डब्बे से उतरे। उनके पास भी माउजर पिस्तौल था। विचारा कि ऐसा शुभ अवसर जाने कब हाथ आय। माउजर पिस्तौल काहे को चलाने को मिलेगा? उमग जो आई, सीधा करके दागने लगे। मैंने जो देखा तो डाँटा, क्योकि गोली चलाने की उनकी ड्यूटी (काम) ही न थी। फिर यदि कोई मुसाफिर कौतूहल वश बाहर को सिर

निकाले तो उसके गोली जरूर लग जाय । हुआ भी ऐसा ही, जो व्यक्ति रेल से उतरकर अपनी स्त्री के पास जा रहा था, मेरा ख़याल है कि इन्ही महाशय की गोली उसके लग गई, क्योकि जिस समय यह महाशय सन्दूक नीचे डालकर गार्ड के डब्बे से उतरे थे, केवल दो तीन फायर हुए थे। उसी समय स्त्री ने कोलाहल किया होगा और उसका पति उसके पास जा रहा था, जो उक्त महाशय की उमग का शिकार हो गया ! मैने यथाशक्ति पूर्ण प्रबन्ध किया था कि जब तक कोई बन्दूक लेकर सामना करने न आये, या मुकाबले मे गोली न चले तब तक किसी आदमी पर फायर न होने पाय। मै नर-हत्या कराके डकैती को भीषण रूप देना नही चाहता था। फिर भी मेरा कहा न मानकर अपना काम छोड गोली चला देने का यह परिणाम हुआ ! *गोली चलाने की ड्यूटी जिनको मैने दी थी* वे बड़े दक्ष तथा अनुभवी मनुष्य थे, उनसे भूल होना असम्भव है। उन लोगों को मैने देखा कि वे अपने स्थान से पाँच मिनट बाद पाँच फायर करते थे। यही मेरा आदेश था।

सन्दूक तोड तीन गठरियाँ मे थैलियाँ बाँधी। सबसे कई बार कहा—देख लो कोई सामान रह तो नही गया। इस पर भी एक महाशय चद्दर डाल आये ! रास्ते मे थैलियो से रुपया निकाल कर गठरी बाँधी और उसी समय लखनऊ शहर मे जा पहुँचे। किसी ने पूछा भी नही, कौन हो, कहाँ से आये हो ? इस प्रकार दस आदमियो ने एक गाड़ी को रोक कर लूट लिया। उस गाडी मे चौदह मनुष्य ऐसे थे, जिनके पास बन्दूक या रायफले थी। दो अंग्रेज सशस्त्र फौजी जवान भी थे, पर सब शान्त रहे। ड्राइवर महाशय तथा एक इंजीनियर महाशय दोनो का बुरा हाल था। वे दोनो अंग्रेज थे।

ड्राइवर महाशय इजन मे लेट रहे। इंजीनियर महाशय पाखाने में जा छिपे ! हमने कह दिया था कि मुसाफिरो से न बोलेंगे, सरकार का माल लूटेंगे। इस कारण मुसाफिर भी शान्तिपूर्वक बैठे रहे। समझे तीस-चालीस आदमियो ने गाड़ी को चारो ओर से घेर लिया है। केवल दस युवको ने इतना बडा आतक फैला दिया ! साधारणत, इस बात पर बहुत से मनुष्य विश्वास करने मे भी सकोच करेंगे कि दस नवयुवको ने गाडी खडी करके लूट ली। जो भी हो बात वास्तव मे यही थी। इन दस कार्यकर्त्ताओ मे अधिकतर तो ऐसे थे जो आयु मे सिर्फ लगभग बाईस वर्ष के होगे, और जो शरीर मे बड़े पुष्ट भो न थे। इस सफलता को देखकर मेरा साहस बहुत बढ गया। मेरा जो विचार था, वह अक्षरश. सत्य सिद्ध हुआ। पुलिस वालो की वीरता का मुझे अन्दाजा था। इस घटना से भविष्य के कार्य की बहुत वडी आशा वँध गई। नवयुवकों का भी उत्साह बढ़ गया। जितना कर्ज़ा था निपटा दिया। अस्त्रो की खरीद के लिए लगभग एक हजार रुपये भेज दिये। प्रत्येक केन्द्र के कार्यकर्त्ता को यथा-स्थान भेज कर दूसरे प्रान्तो मे भी कार्य विस्तार करने का निर्णय करके कुछ प्रवन्ध किया। एक युवक दल ने बम बनाने का प्रवन्ध किया, मुझ से भी सहायता चाही। मैने आर्थिक सहायता देकर अपना एक सदस्य भेजने का वचन दिया। किन्तु कुछ त्रुटियाँ हुईं, जिससे सम्पूर्ण दल अस्त-व्यस्त हो गया।

मै इस विषय मे कुछ भी न जान सका कि दूसरे देश के क्रान्ति-कारियो ने प्रारम्भिक अवस्था मे हम लोगो की भाँति प्रयत्न किया या नही। यदि पर्याप्त अनुभव होता तो इतनी साधारण भूले न करते। त्रुटियो के होते हुए भी कुछ भी न विगडता और न कुछ

भेद खुलता, न इस अवस्था को पहुँचते, क्योकि मैंने जो सगठन किया था उसमे किसी ओर से मुझे कोई कमजोरी न दिखाई देती थी। कोई भी किसी प्रकार की त्रुटि न समझ सकता था। इसी कारण आँख बन्द किये बैठे रहे। किन्तु आस्तीन मे साँप छिपा हुआ था, ऐसा गहरा मुँह मारा कि चारो खाने चित्त कर दिया।

जिन्हें हम हार समझे थे गला अपना सजाने को,
वही अब नाग बन बैठे हमारे काट खाने को।

नवयुवको मे आपस की होड के कारण वहुत वितण्डा तथा कलह भी हो जाती थी, जो भयकर रूप धारण कर लेती। मेरे पास जब मामला आता तो मै प्रेमपूर्वक समिति की दशा का अवलोकन कराके, सवको शान्त कर देता। कभी नेतृत्व को लेकर वाद-विवाद चल जाता। एक केन्द्र के निरीक्षक से वहाँ के कार्यकर्ता अत्यन्त असतुष्ट थे। क्योकि निरीक्षक से अनुभवहीनता के कारण कुछ भूले हो गई थी। यह अवस्था देख मुझे वडा खेद तथा आश्चर्य हुआ, क्योकि नेतागीरी का भूत सवसे भयानक होता है। जिस समय से यह भूत खोपडी पर सवार होता है, उसी समय से सव काम चौपट हो जाता है। केवल एक दूसरे के दोष देखने मे समय व्यतीत होता है और वैमनस्य वढ कर वडे भयकर परिणामो का उत्पादक होता है। इस प्रकार के समाचार सुन मैंने सवको एकत्रित कर खूब फटकारा। सव अपनी त्रुटि समझ कर पछताये और प्रीतिपूर्वक आपस मे मिलकर कार्य करने लगे। पर ऐसी अवस्था हो गई थी कि दलवन्दी की नौवत आ गई थी। इस प्रकार से तो दलवन्दी हो ही गई थी। पर मुझ पर सव की श्रद्धा थी और मेरे वक्तव्य को

सव मान लेते थे। सब कुछ होने पर भी मुझे किसी ओर से किसी प्रकार का सन्देह न था। किन्तु परमात्मा को ऐसा ही स्वीकार था, जो इस अवस्था का दर्शन करना पडा।

गिरफ्तारी

काकोरी डकैती होने के बाद से ही पुलिस बहुत सचेत हुई। बडे जोरो के साथ जॉच आरम्भ हो गई। शाहजहॉपुर मे कुछ नई मूर्तियो के दर्शन हुए। पुलिस के कुछ विशेप सदस्य मुझ से भी मिले। चारो ओर शहर मे यही चर्चा थी कि रेलवे डकैती किसने कर ली? उन्ही दिनो शहर मे डकैती के एक दो नोट निकल आये, अब तो पुलिस का अनुसधान और भी बढने लगा। कई मित्रो ने मुझसे कहा भी कि सतर्क रहो। दो एक सज्जन ने निश्चितरूपेण समाचार दिया कि मेरी गिरफ्तारी जरूर हो जायगी। मेरी समझ मे कुछ न आया। मैने विचार किया कि यदि गिरफ्तारी हो भी गई तो पुलिस को मेरे विरुद्ध कुछ भी प्रमाण न मिल सकेगा। अपनी बुद्धिमत्ता पर कुछ अधिक विश्वास था। अपनी बुद्धि के सामने दूसरो की बुद्धि को तुच्छ समझता था। कुछ यह भी विचार था कि देश की सहानुभूति की परीक्षा की जाय। जिस देश पर हम अपना बलिदान देने को उपस्थित है, उस देश के वासी हमारे साथ कितनी सहानुभूति रखते हैं? कुछ जेल का अनुभव भी प्राप्त करना था। वास्तव मे, मै काम करते करते थक गया था। भविष्य के कार्यों मे अधिक नर-हत्या का ध्यान करके मै हतबुद्धि-सा हो गया था। मैने किसी के कहने की कोई भी चिन्ता न की।

रात्रि के समय ग्यारह बजे के लगभग एक मित्र के यहाँ से अपने घर पर गया। रास्ते मे खुफिया पुलिस के सिपाहियो से भेट

हुई। कुछ विशेप रूप से उस समय भी वे मेरी देखभाल कर रहे थे। मैने कोई चिन्ता न की और घर पर जाकर सो गया। प्रात काल चार बजने पर जगा, शौचादि से निवृत्त होने पर वाहर द्वार पर वन्दूक के कुन्दो का शव्द सुनाई दिया। मै समझ गया कि पुलिस आ गई है। मै तुरन्त ही द्वार खोलकर वाहर गया। एक पुलिस अफसर ने वढकर हाथ पकड लिया। मे गिरफ्तार हो गया। मै केवल एक अँगोछा पहने हुए था। पुलिस वाले को अधिक भय न था। पूछा यदि घर मे काइ अस्त्र हो, तो दे दीजिए। मैने कहा कोई आपत्तिजनक वस्तु घर मे नही। उन्होने वडी सज्जनता की। मेरे हथकडी इत्यादि कुछ न डाली। मकान की तलाशी लेते समय एक पत्र मिल गया, जो मेरी जेब मे था। कुछ होनहार कि तीन चार पत्र मैने लिखे थे। डाकखाने मे डालने को भेजे, तव तक डाक निकल चुकी थी। मैने वे सव इस खयाल से अपने पास ही रख लिये कि डाक के बम्बे मे डाल दूंगा। फिर विचार किया जैसे वम्बे मे पडे रहेगे, वैसे जेब मे पडे है। मै उन पत्रो को वापस घर ले आया। उन्ही मे एक पत्र आपत्तिजनक था, जो पुलिस के हाथ लग गया। गिरफ्तार होकर पुलिस कोतवाली पहुँचा। वहाँ पर एक खुफिया पुलिस के अफसर से भेंट हुई। उस समय उन्होने कुछ ऐसी वाते की, जिन्हे मै या एक व्यक्ति और जानता था। कोई तीसरा व्यक्ति इस प्रकार से व्यौरेवार नही जान सकता था। मुझे वड़ा आश्चर्य हुआ। किन्तु सन्देह इस कारण न हो सका कि मै दूसरे व्यक्ति के कार्यो पर अपने शरीर के समान ही विश्वास रखता था। शाहजहाँपुर मे जिन जिन व्यक्तियो की गिरफ्तारी हुई, वह भी वडी आश्चर्यजनक प्रतीत होती थी। जिन पर कोई सन्देह भी न करता था, पुलिस उन्हे

कैसे जान गई ? दूसरे स्थानो पर क्या हुआ, कुछ भी न मालूम हो सका। जेल पहुँच जाने पर मै थोडा बहुत अनुमान कर सका, कि सम्भवत दूसरे स्थानो मे भी गिरफ्तारियाँ हुई होगी। गिरफ्तारियो के समाचार सुनकर शहर के सभी मित्र भयभीत हो गये। किसी से इतना भी न हो सका कि जेल मे हम लोगो के पास समाचार भेजने का प्रबन्ध कर देता !

जेल

जेल मे पहुँचते ही खुफिया पुलिस वालो ने यह प्रबन्ध कराया कि हम सब एक दूसरे से अलग रखे जाये, किन्तु फिर भी एक दूसरे से बातचीत हो जाती थी। यदि साधारण कैदियो के साथ रखते तब तो बातचीत का पूर्ण प्रबन्ध हो जाता, इस कारण से सबको अलग-अलग तनहाई की कोठरियो मे बन्द किया गया। यही प्रबन्ध दूसरे जिले की जेलो मे भी, जहाँ जहाँ भी इस सम्बन्ध मे गिरफ्तारियाँ हुई थी, किया गया था। अलग-अलग रखने से पुलिस को यह सुविधा होती है कि प्रत्येक से पृथक-पृथक मिलकर बातचीत करते है। कुछ भय दिखाते हैं, कुछ इधर-उधर की बाते करके भेद जानने का प्रयत्न करते है। अनुभवी लोग तो पुलिस वालो से मिलने से इन्कार ही कर देते है। क्योकि उनसे मिलकर हानि के अतिरिक्त लाभ कुछ भी नही होता। कुछ व्यक्ति ऐसे होते है जो समाचार जानने के लिए कुछ बातचीत करते है। पुलिस वालो से मिलना ही क्या है। वे तो चालबाजी से बात निकालने की रोटी ही खाते है। उनका जीवन इसी प्रकार की बातो मे व्यतीत होता है। नवयुवक दुनियादारी क्या जाने ? न वे इस प्रकार की बाते ही बना सकते है !

जब किसी तरह कुछ समाचार ही न मिलते तब तो बहुत जी घबड़ाता। यही पता नही चलता कि पुलिस क्या कर रही है, भाग्य का क्या निर्णय होगा ? जितना समय व्यतीत होता जाता था उतनी ही चिन्ता बढती जाती थी। जेल अधिकारियो से मिलकर पुलिस यह भी प्रबन्ध करा देती है कि मुलाकात करने वालो से घर के सम्बन्ध मे बातचीत करे, मुकदमे के सम्बन्ध मे कोई बातचीत न करे। सुविधा के लिए सबसे प्रथम यह परमावश्यक है कि एक विश्वास पात्र वकील किया जाय जो यथा समय आकर बातचीत कर सके। वकील के लिए किसी प्रकार की रुकावट नही हो सकती। वकील के साथ अभियुक्त की जो बाते होती है, उनको कोई दूसरा सुन नही सकता। क्योकि इस प्रकार का कानून है, यह अनुभव बाद में हुआ। गिरफ्तारी के बाद शाहजहाँपुर के वकीलो से मिलना भी चाहा, किन्तु शाहजहाँपुर मे ऐसे दब्बू वकील रहते है, जो सरकार के विरुद्ध मुकदमे मे सहायता देने मे हिचकते है।

मुझसे खुफिया पुलिस के कप्तान साहब मिले। थोडी सी बाते करके अपनी इच्छा प्रकट की कि मुझे सरकारी गवाह बनाना चाहते हैं। थोडे दिनो मे एक मित्र ने भयभीत होकर, कि कही वह भी न पकडा जाय, बनारसीलाल से भेट की और समझा-बुझा-कर उसे सरकारी गवाह बना दिया। बनारसीलाल बहुत घबराता था कि कौन सहायता देगा, सजा जरूर हो जायगी। यदि किसी वकील से मिल लिया होता तो उसका धैर्य न टूटता। प० हरकरननाथ शाहजहाँपुर आये, जिस समय वह अभियुक्त श्रीयुत प्रेम कृष्ण खन्ना से मिले, उस समय अभियुक्त ने पं० हरकरननाथ से बहुत कुछ कहा कि मुझसे तथा दूसरे अभियुक्तो से मिल ले। यदि

वह कहा मान जाते और मिल लेते तो बनारसीलाल को साहस हो जाता और वह डटा रहता। उसी रात्रि को पहले एक पुलिस इन्सपेक्टर बनारसीलाल से मिले। फिर जब मै सो गया तब बनारसी लाल को निकाल कर ले गये। प्रात काल पॉच बजे के करीब, जब बनारसीलाल की कोठरी मे से कुछ शब्द न सुनाई दिया, तो मैने बनारसीलाल को पुकारा। पहरे पर जो कैदी था, उससे मालूम हुआ, बनारसीलाल बयान दे चुके! बनारसीलाल के सम्बन्ध मे सब मित्रो ने कहा था कि इससे अवश्य धोखा होगा, पर मेरी बुद्धि में कुछ न समाया था। प्रत्येक जानकार ने बनारसीलाल के सम्बन्ध में यही भविष्यवाणी की थी कि वह आपत्ति पडने पर अटल न रह सकेगा। इस कारण सबने उसे किसी प्रकार के गुप्त कार्य मे लेने की मनाही की थी। अब तो जो होना था सो हो ही गया।

थोडे दिनो बाद जिला कलेक्टर मिले। कहने लगे फाँसी हो जायगी। बचना हो तो बयान दे दो। मैने कुछ उत्तर न दिया। तत्पश्चात् खुफिया पुलिस के कप्तान साहब मिले, बहुत-सी बाते की। कई कागज दिखलाये। मैने कुछ-कुछ अन्दाज़ा लगाया कि कितनी दूर तक ये लोग पहुँच गये है। मैने कुछ बाते बनाई, ताकि पुलिस का ध्यान दूसरी ओर चला जाय, परन्तु उन्हे तो विश्वसनीय सूत्र हाथ लग चुका था, वे बनावटी बातो पर क्यो विश्वास करते ? अन्त मे उन्होने अपनी यह इच्छा प्रकट की कि यदि मै बगाल का सम्बन्ध बताकर कुछ बोलशेविक सम्बन्ध के विषय मे अपना बयान दे दूँ, तो वे मुझे थोडी-सी सजा करा देगे, और सजा के थोडे दिनो बाद ही जेल से निकालकर इग्लैण्ड भेज देगे और पन्द्रह हजार रुपये पारि-तोषिक भी सरकार से दिला देगे। मैं मन-ही-मन बहुत हँसता था।

अन्त मे एक दिन फिर मुझसे जेल मे मिलने को गुप्तचर विभाग के कप्तान साहब आये। मैने अपनी कोठरी में से निकलने से ही इन्कार कर दिया। वह कोठरी पर आकर बहुत सी बाते करते रहे, अन्त में परेशान होकर चले गये।

शिनाखते कराई गई। पुलिस को जितने आदमी मिल सके उतने आदमी लेकर शिनाखत कराई। भाग्यवश श्री अईनुद्दीन साहब मुकदमे के मजिस्ट्रेट मुकर्रर हुए, उन्होने जी भर के पुलिस को मदद की। शिनाखतो मे अभियुक्तो को साधारण मजिस्ट्रेटो की भाँति भी सुविधाएँ न दी। दिखाने के लिए कागजी कार्रवाई खूब साफ रखी। जबान के बडे मीठे थे। प्रत्येक अभियुक्त से बडे तपाक से मिलते थे। बडी मीठी-मीठी बाते करते थे। सब समझते थे कि हमसे सहानुभूति रखते है। कोई न समझ सका कि अन्दर-ही-अन्दर घाव कर रहे है। इतना चालाक अफसर शायद ही कोई दूसरा हो। जब तक मुकदमा उनकी अदालत मे रहा, किसी को कोई शिकायत का मौका ही न दिया। यदि कभी कोई बात भी हो जाती तो ऐसे ढग से उसे टालने की कोशिश करते कि किसी को बुरा ही न लगता। बहुधा ऐसा भी हुआ कि खुली अदालत मे अभियुक्तो से क्षमा तक माँगने मे सकोच न किया। किन्तु कागजी कार्रवाई मे इतने होशियार थे कि जो कुछ लिखा सदैव अभियुक्तो के विरुद्ध। जब मामला सेशन सुपुर्द किया और आज्ञापत्र मे युक्तियाँ दी, तब सब की आँखें खुली कि कितना गहरा घाव मार दिया।

मुकदमा अदालत मे न आया था, उसी समय रायबरेली मे बनवारीलाल की गिरफ्तारी हुई। मुझे हाल मालूम हुआ। मैने प० हरकरननाथ से कहा कि सब काम छोड़कर सीधे रायबरेली

जाये और बनवारीलाल से मिले, किन्तु उन्होने मेरी बातो पर कुछ भी ध्यान न दिया। मुझे बनवारीलाल पर पहले से ही सन्देह था, क्योकि उसका रहन-सहन इस प्रकार का था कि जो ठीक न था। जब दूसरे सदस्यो के साथ रहता, तब उनसे कहा करता कि मै जिला सगठनकर्त्ता हूँ। मेरी गणना अधिकारियो मे है। मेरी आज्ञा पालन किया करो। मेरे जूठे बर्तन मला करो। कुछ विलासिता-प्रि । भी था, प्रत्येक समय शीशा, कघा तथा साबुन साथ रखता था। मुझे इससे भय था, किन्तु हमारे दल के एक खास आदमी का वह विश्वास पात्र रह चुका था। उन्होने सैकडो रुपये देकर उसकी सहायता की थी। इसी कारण हम लोग भी अन्त तक उसे मासिक सहायता देते रहे थे। मैंने बहुत कुछ हाथ-पैर मारे। पर कुछ भी न चली, और जिसका मुझे भय था, वही हुआ। भाडे का टट्टू अधिक बोझ न सम्भाल सका, उसने बयान दे दिये। जब तक यह गिरफ्तार न हुआ था कुछ सदस्यो ने इसके पास जो अस्त्र थे वे मागे, पर उसने न दिये। जिला अफसर की शान मे रहा। गिरफ्तार होते ही सब शान मिट्टी मे मिल गई। बनवारीलाल के बयान दे देने से पुलिस का मुकद्दमा मजबूती पकड गया। यदि वह अपना बयान न देता तो मुकदमा बहुत कमज़ोर था। सब लोग चारो ओर से एकत्रित करके लखनऊ जिला जेल मे रखे गये। थोडे समय तक अलग-अलग रहे, किन्तु अदालत मे मुकदमा आने से पहले ही एकत्रित कर दिये गये।

मुकदमे मे रुपये की जरूरत थी। अभियुक्तो के पास क्या था ? उनके लिये धन-सग्रह करना कितना दुस्तर था ! न जाने किस प्रकार निर्वाह करते थे। अधिकतर अभियुक्तो का कोई सम्बन्धी पैरवी भी न कर सकता था। जिस किसी के कोई था भी, वह बाल-बच्चों

तथा घर को सम्भालता था, या इतने समय तक घर-बार छोडकर मुकदमा करता ? यदि चार अच्छे पैरवी करने वाले होते, तो पुलिस का तीन चौथाई मुकदमा टूट जाता। लखनऊ जैसे जनाने शहर मे मुकदमा हुआ, जहाँ अदालत मे कोई भी शहर का आदमी न आता था ! इतना भी तो न हुआ कि एक अच्छा प्रेस-रिपोर्टर ही रहता, जो मुकदमे की सारी कार्यवाही को, जो कुछ अदालत मे होता था, प्रेस मे भेजता रहता ! इण्डियन डेली टेलीग्राफ वालो ने कृपा की। यदि कोई अच्छा रिपोर्टर आ भी गया, और जो कुछ अदालत की कार्यवाही ठीक-ठीक प्रकाशित हुई तो पुलिस वालो ने जज साहब से मिलकर तुरन्त उस रिपोर्टर को निकलवा दिया ! जनता की कोई सहानुभूति न थी। जो पुलिस के जी मे आया, करती रही। इन सारी बातो को देखकर जज का साहस बढ गया। उसने जैसा जी चाहा सब कुछ किया। अभियुक्त चिल्लाये—'हाय ! हाय !' पर कुछ भी सुनवाई न हुई ! और बाते तो दूर, श्रीयुत दामोदर स्वरूप सेठ को पुलिस ने जेल मे सडा डाला। लगभग एक वर्ष तक वे जेल मे तडपते रहे। एक सौ पाउण्ड से केवल ६६ पाउण्ड वज़न रह गया। कई बार जेल मे मरणासन्न हो गये। नित्य बेहोशी आ जाती थी। लगभग दस मास तक कुछ भी भोजन न कर सके। जो कुछ छटाक दो छटाक दूध किसी प्रकार पेट मे पहुँच जाता था, उससे इस प्रकार की विकट वेदना होती थी कि कोई उनके पास खडे होकर उस छटपटाने के दृश्य को देख न सकता था। एक मैडिकल बोर्ड बनाया गया, जिसमे तीन डाक्टर थे। उनकी कुछ समझ में न आया, तो कह दिया गया कि सेठ जी को कोई बीमारी ही नही है ! जब से काकोरी षड्यन्त्र के अभियुक्त जेल मे एक साथ रहने लगे, तभी से

उनमे एक अद्भुत परिवर्त्तन का समावेश हुआ, जिसका अवलोकन कर मेरे आश्चर्य की सीमा न रही। जेल मे सबसे बडी बात तो यह थी कि प्रत्येक आदमी अपनी नेतागीरी की दुहाई देता था। कोई भी वडे छोटे का भेद न रहा। वडे तथा अनुभवी पुरुषो की बातो की अवहेलना होने लगी। अनुशासन का नाम भी न रहा। बहुधा उलटे जवाब मिलने लगे। छोटी-छोटी बातो पर मतभेद हो जाता। इस प्रकार का मतभेद कभी-कभी वैमनस्य तक का रूप धारण कर लेता। आपस मे झगडा भी हो जाता। खैर! जहाँ चार बर्तन रहते है, वहाँ खटकते ही है। ये लोग तो मनुष्य देहधारी थे। परन्तु लीडरी की धुन ने पार्टीवन्दी का खयाल पैदा कर दिया। जो युवक जेल के बाहर अपने से बड़ो की आज्ञा को वेद-वाक्य के समान मानते थे, वे ही उन लोगों का तिरस्कार तक करने लगे! इसी प्रकार आपस का वाद-विवाद कभी-कभी भयकर रूप धारण कर लिया करता। प्रान्तीय प्रश्न छिड जाता। बंगाली तथा सयुक्त प्रान्तवासियो के कार्य की आलोचना होने लगती। इसमे कोई सन्देह नही कि बगाल ने क्रान्तिकारी आन्दोलन मे दूसरे प्रान्तो से अधिक कार्य किया है, किन्तु बगालियो की हालत यह है कि जिस किसी कार्यालय या दफ्तर मे एक भी बगाली पहुँच जायगा, थोडे ही दिनो मे हो उस कार्यालय या दफ्तर मे बगाली ही बगाली दिखाई देगे! जिस शहर मे बंगाली रहते है उनकी बस्ती अलग ही बसती है। बोली भी अलग। खानपान भी अलग। यही सब जेल मे अनुभव हुआ।

जिन महानुभावो को मै त्याग की मूर्ति समझता था, उनके अन्दर भी बगालीपने का भाव देखा। मैंने जेल से बाहर कभी स्वप्न

मे भी यह विचार न किया था कि क्रान्तिकारी दल के सदस्यो मे भी प्रान्तीय भावो का समावेश होगा। मै तो यही समझता रहा कि क्रान्तिकारी तो समस्त भारतवर्ष को स्वतन्त्र करने का प्रयत्न कर रहे है, उनको किसी प्रान्त विशेष से क्या सम्वन्ध ? परन्तु साक्षात् देख लिया कि प्रत्येक वगाली के दिमाग मे कविवर रवीन्द्रनाथ का गीत 'आमार सोनार वागला, आमि तोमाके भालोवासी' (मेरे सोने का वगाल, मै तुझ से मुहब्वत करता हूँ) ठूँस-ठूँस कर भरा था, जिसका उनके नैमित्तिक जीवन मे पग-पग पर प्रकाश होता था। अनेक प्रयत्न करने पर भी जेल के बाहर इस प्रकार का अनुभव कदापि न प्राप्त हो सकता था।

वडी भयकर से भयकर आपत्ति मे भी मेरे मुख से आह न निकली, प्रिय सहोदर का देहान्त होने पर भी आँख से आँसू न गिरा, किन्तु इस दल के कुछ व्यक्ति ऐसे थे, जिनकी आज्ञा को मै ससार मे सबसे श्रेष्ठ मानता था, जिनकी ज़रा-सी कडी दृष्टि भी मै सहन न कर सकता था, जिनके कटु वचनो के कारण मेरे हृदय पर चोट लगती थी, और अश्रुओ का श्रोत उवल पडता था। मेरी इस अवस्था को देखकर दो-चार मित्रो को जो मेरी प्रकृति को जानते थे वड़ा आश्चर्य होता था। लिखते हुए हृदय कम्पित होता है कि उन्ही सज्जनो मे वगाली तथा अवगाली का भाव इस प्रकार भरा था कि वगालियो की वडी-से-वडी भूल, हठधर्मी तथा भीरुता की अवहेलना की गई। यह देखकर अन्य पुरुषो का साहस वढता था, नित्य नई चाले चली जाती थी। आपस मे ही एक दूसरे के विरुद्ध षड्यन्त्र रचे जाते थे ! वंगालियो का न्याय-अन्याय सव सहन कर

लिया जाता था। इन सारी बातो ने मेरे हृदय को टूक-टूक कर डाला। सब कृत्यो को देख मै मन-ही-मन घुटा करता।

एक बार विचार हुआ कि सरकार से समझौता कर लिया जाय। बैरिस्टर साहब ने खुफिया पुलिस के कप्तान से परामर्श आरम्भ किया। किन्तु यह सोचकर कि इससे क्रान्तिकारी दल की निष्ठा न मिट जाय, यह विचार छोड दिया गया। युवक वृन्द की सम्मति हुई कि अनशन व्रत करके सरकार से हवालातो की हालत में ही माँगे पूरी करा ली जाएँ क्योकि लम्बी-लम्बी सजाये होगी। सयुक्त प्रान्त की जेलो मे साधारण कैदियो का भोजन खाते हुए सजा काटकर जेल से जिन्दा निकलना कोई सरल कार्य नही। जितने राजनैतिक कैदी षड्यत्रो के सम्बन्ध मे सजा पाकर इस प्रान्त के जेलो मे रखे गये, उनमे से पाँच-छ महात्माओ ने इस प्रान्त के जेलो के व्यवहार के कारण ही जेलो मे प्राण त्याग दिये !

इस विचार के अनुसार काकोरी के लगभग सब हवालातियो ने अनशन व्रत आरम्भ कर दिया। दूसरे ही दिन सब पृथक कर दिये गये। कुछ व्यक्ति डिस्ट्रिक्ट जेल मे रखे गये, कुछ सेण्ट्रल जेल भेजे गये। अनशन करते पन्द्रह दिवस व्यतीत हो गये, तब सरकार के कान पर भी जूँ रेगी। उधर सरकार का काफी नुकसान हो रहा था। जज साहब तथा दूसरे कचहरी के कार्यकर्त्ताओ को घर बैठे वेतन देना पडता था। सरकार को स्वय चिन्ता थी कि किसी प्रकार अनशन छूटे। जेल-अधिकारियो ने पहले आठ आने रोज तै किये। मैने उस समझौते को अस्वीकार कर दिया और बड़ी कठिनता से दस आने रोज़ पर ले आया। उस अनशन व्रत मे पन्द्रह दिवस तक मैने जल पीकर निर्वाह किया था। सोलहवे दिन नाक से दूध

पिलाया गया था। श्रीयुत रोशनसिह जी ने भी इसी प्रकार मेरा साथ दिया था। वे पन्द्रह दिन तक बराबर चलते-फिरते रहे थे। स्नानादि करके अपने नैमित्तिक कर्म भी कर लिया करते थे। दस दिन तक तो मेरे मुख को देखकर अनजान पुरुष यह अनुमान भी नही कर सकता था कि मै अन्न नही खाता।

समझौते के जिन खुफिया पुलिस के अधिकारियो से मुख्य नेता महोदय का वार्तालाप बहुधा एकान्त मे हुआ करता था, समझौते की बात खतम हो जाने पर भी आप उन लोगो से मिलते रहे। मैने कुछ विशेष ध्यान न दिया। यदा-कदा दो एक बात से पता चलता कि समझौते के अतिरिक्त कुछ दूसरी भी बाते होती हैं। मैने इच्छा प्रकट की कि मै भी एक समय सी० आई० डी० के कप्तान से मिलूँ, क्योकि मुझ से पुलिस बहुत असन्तुष्ट थी। मुझे पुलिस से न मिलने दिया गया। परिणामस्वरूप सी० आई० डी० वाले मेरे पूरे दुश्मन हो गये। सब मेरे व्यवहार की ही शिकायत किया करते। पुलिस अधिकारियो से बातचीत करके मुख्य नेता महोदय को कुछ आशा बँध गई। आपका जेल से निकलने का उत्साह जाता रहा। जेल से निकलने के उद्योग मे जो उत्साह था, वह बहुत ढीला हो गया। नवयुवको की श्रद्धा को मुझ से हटाने के लिए अनेको प्रकार की बाते की जाने लगी! मुख्य नेता महोदय ने स्वयं कुछ कार्यकर्त्ताओ से मेरे सम्बन्ध मे कहा कि ये कुछ रुपये खा गये। मैने एक-एक पैसे का हिसाब रखा था। जैसे ही मैने इस प्रकार की बाते सुनी, मैने कार्यकारिणी के सदस्यो के सामने रखकर हिसाब देना चाहा, और अपने विरुद्ध आपेक्ष करने वाले को दण्ड देने का प्रस्ताव उपस्थित किया। अब तो बंगालियो का साहस

न हुआ कि मुझसे हिसाब समझे। मेरे आचरण पर भी आक्षेप किये गये !

जिस दिन सफाई की बहस मैने समाप्त की, सरकारी वकील ने उठकर मुक्त कण्ठ से मेरी बहस की प्रशसा की कि सैकडो वकीलों से अच्छी बहस की। मैने नमस्कार कर उत्तर दिया कि आपके चरणों की कृपा है, क्योकि इस मुकदमे के पहले मैने किसी अदालत मे समय न व्यतीत किया था, सरकारी तथा सफाई के वकीलो की जिरह को सुनकर मैने भी साहस किया था। इसके बाद सबसे पहले मुख्य नेता महाशय के विषय मे सरकारी वकील ने बहस करनी शुरू की। खूब ही आडे हाथो लिया। अब तो मुख्य नेता महाशय का बुरा हाल था, क्योकि उन्हे आशा थी कि सम्भव है 'सबूत की कमी से वे छूट जाएँ या अधिक से अधिक पाँच या दस वर्ष की सजा हो जाय। आखिर चैन न पडी। सी० आई० डी० अफसरो को बुलाकर जेल मे उनसे एकान्त मे डेढ घण्टे तक बाते हुई। युवक मण्डल को इसका पता चला। सब मिलकर मेरे पास आये। कहने लगे, इस समय सी० आई० डी० अफसर से क्यो मुलाकात की जा रही है ? मेरी जिज्ञासा पर उत्तर मिला कि सजा होने के बाद जेल मे क्या व्यवहार होगा, इस सम्बन्ध मे बातचीत कर रहे है। मुझे सन्तोष न हुआ। दो या तीन दिन बाद मुख्य नेता महाशय एकान्त मे बैठकर कई घण्टे तक कुछ लिखते रहे। लिखकर कागज जेब मे रख भोजन करने गये। मेरी अन्तरात्मा ने कहा 'उठ, देख तो क्या हो रहा है ?' मैने जेब से कागज निकालकर पढे। पढ़कर शोक तथा आश्चर्य की सीमा न रही। पुलिस द्वारा सरकार को क्षमा-प्रार्थना भेजी जा रही थी। भविष्य के लिये किसी प्रकार के हिसात्मक आन्दोलन या

कार्य मे भाग न लेने की प्रतिज्ञा की गई थी। Undertaking दी गई थी। मैने मुख्य कार्यकर्त्ताओ से सब विवरण कहकर इस सब का कारण पूछा, कि क्या हम लोग इस योग्य भी नही रहे, जो हमसे किसी प्रकार का परामर्श किया जाय ? तब उत्तर मिला कि व्यक्तिगत बात थी। मैंने बडे जोर के साथ विरोध किया कि यह कदापि व्यक्तिगत बात नही हो सकती। खूब फटकार बतलाई। मेरी बातो को सुन चारो ओर खलबली पडी। मुझे बडा क्रोध आया कि कितनी धूर्तता से काम लिया गया। मुझे चारो ओर से चढाकर लडने के लिये प्रस्तुत किया गया। मेरे विरुद्ध षड्यन्त्र रचे गये। मेरे ऊपर अनुचित आक्षेप किये गए, नवयुवको के जीवन का भार लेकर लीडरी की शान झाडी गई, और थोडी सी आपत्ति पडने पर इस प्रकार बीस-बीस वर्ष के युवको को बडी-बडी सजायें दिला, जेल मे सडने को डालकर स्वय बंबेज से निकल जाने का प्रयत्न किया गया ! धिक्कार है ऐसे जीवन को ! किन्तु सोच-समझकर चुप रहा।

अभियोग

काकोरी मे रेलवे ट्रेन लुट जाने के बाद ही, पुलिस का विशेष विभाग उक्त घटना का पता लगाने के लिए तैनात किया गया। एक विशेष व्यक्ति मि० हार्टन इस विभाग के निरीक्षक थे। उन्होंने घटनास्थल तथा रेलवे पुलिस की रिपोर्टो को देखकर अनुमान किया कि सम्भव है यह कार्य क्रान्तिकारियो का हो। प्रान्त के क्रान्तिकारियो की जाँच शुरू हुई। उसी समय शाहजहाँपुर मे रेलवे डकैती के तीन नोट मिले। चोरी गये नोटो की सख्या सौ से अधिक थी, जिनका मूल्य लगभग एक हजार रुपये के होगा। इनमे से लगभग सात सौ

या आठ सौ रुपये के मूल्य के नोट सीधे सरकार के खजाने मे पहुँच गये। अतः सरकार नोटो के मामले को चुपचाप पी गई। ये नोट लिस्ट प्रकाशित होने से पूर्व ही सरकारी खजाने मे पहुँच चुके थे। पुलिस का लिस्ट प्रकाशित करना व्यर्थ हुआ। सरकारी खजाने में से ही जनता के पास कुछ नोट लिस्ट प्रकाशित होने के पूर्व ही पहुँच गये थे, इस कारण वे जनता के पास निकल आये।

उन्ही दिनो मे जिला खुफिया पुलिस को मालूम हुआ कि मै ८, ९ तथा १० अगस्त सन् १९२५ ई० को शाहजहाँपुर में नही था। अधिक जाँच होने लगी। इसी जाँच पडताल मे पुलिस को मालूम हुआ कि गवर्मेण्ट स्कूल शाहजहाँपुर के इन्दुभूषण मित्र नामी एक विद्यार्थी के पास मेरे क्रान्तिकारी दल सम्बन्धी पत्र आते है, जो वह मुझे दे आता है। स्कूल के हेडमास्टर द्वारा इन्दुभूषण के पास आये हुए पत्रो की नकल करा के हार्टन साहव के पास भेजी जाती रही। इन्ही पत्रो से हार्टन साहव को मालूम हुआ कि मेरठ मे प्रान्त की क्रान्तिकारी समिति की बैठक होने वाली है। उन्होने एक सब-इस्पेक्टर को मेरठ अनाथालय मे जहाँ पर मीटिग होने का पता चला था, भेजा। उन्ही दिनो हार्टन साहव को किसी विशेष सूत्र द्वारा मालूम हुआ कि शीघ्र ही कनखल मे डाका डालने का प्रवन्ध क्रान्तिकारी समिति के सदस्य कर रहे हैं, और सम्भव है किसी वड़े शहर में डाकखाने की आमदनी भी लूटी जाय। हार्टन साहव को एक सूत्र से एक पत्र मिला, जो मेरे हाथ का लिखा था। इस पत्र मे सितम्बर मे होने वाले श्राद्ध का जिक्र था जिसकी १३ तारीख निश्चित की गई थी। पत्र मे था कि दादा का श्राद्ध नं० १ पर

१३ सितम्बर को होगा, अवश्य पधारिये। मै अनाथालय मे मिलूंगा। पत्र पर 'रुद्र' के हस्ताक्षर थे।

आगामी डकैतियो को रोकने के लिये हार्टन साहब ने प्रान्त भर मे २६ सितम्बर सन् १९२५ ई० को लगभग तीस मनुष्यों को गिरफ्तार किया। उन्ही दिनो मे इन्दुभूपरण के पास आये हुए पत्र से पता लगा कि कुछ वस्तुएँ बनारस मे किसी विद्यार्थी की कोठरी मे बन्द है। अनुमान किया गया कि सम्भव है कि वे हथियार हो। अनुसधान करने से हिन्दू विश्वविद्यालय के एक विद्यार्थी की कोठरी से दो राइफले निकली। उस विद्यार्थी को कानपुर में गिरफ्तार किया गया। इन्दूभूपरण ने मेरी गिरफ्तारी की सूचना एक पत्र द्वारा बनारस को भेजी। जिसके पास पत्र भेजा था, उसे पुलिस गिरफ्तार कर चुकी थी, क्योंकि उसी श्री रामनाथ पाण्डेय के पते का पत्र मेरी गिरपतारी के समय मेरे मकान से पाया गया था। रामनाथ पाण्डेय के पत्र पुलिस के पास पहुँचे थे। अत. इन्दुभूपरण का पत्र देख, इन्दुभूषरण को गिरफ्तार किया गया। इन्दुभूपरण ने दूसरे दिन अपना बयान दे दिया। गिरपतार किये हुए व्यक्तियो मे से कुछ से मिल मिलाकर बनारसीलाल ने भी जो शाहजहाँपुर के जेल मे था, अपना बयान दे दिया और वह सरकारी गवाह बना लिया गया। यह कुछ अधिक जानता था। इसके बयान से क्रान्तिकारी पत्र के पार्सलो का पता चला। बनारस के डाकखाने से जिन जिन के पास पार्सल भेजे गये थे उनको पुलिस ने गिरफ्तार किया। कानपुर में गोपीनाथ ने जिसके नाम पार्सल गया था, गिरफ्तार होते ही पुलिस को बयान दे दिया और वह सरकारी गवाह बना लिया गया। इसी प्रकार रायबरेली मे स्कूल के विद्यार्थी कुवर बहादुर के पास पार्सल आया था, उसने

भी गिरफ्तार होते ही बयान दे दिया और सरकारी गवाह बना लिया गया। इसके पास मनीआर्डर भी आया करते थे, क्योंकि यह बनवारीलाल का पोस्ट वक्स (डाक पाने वाला) था। इसने बनवारीलाल के एक रिश्तेदार का पता बताया, जहाँ तक तलाशी लेने से बनवारीलाल का एक ट्रंक मिला। इस ट्रक मे एक कारतूसी पिस्तौल, एक कारतूसी फौजी रिवाल्वर तथा कुछ कारतूस पुलिस के हाथ लगे। श्री वनवारीलाल की खोज हुई। वनवारीलाल भी पकड लिये गये। गिरफ्तारी के थोडे दिनो बाद ही पुलिस वाले मिले, उल्टा सीधा सुझाया और बनवारीलाल ने भी अपना बयान दे दिया तथा इकवाली मुलजिम वनाये गये। श्रीयुत बनवारीलाल ने काकोरी डकैती मे अपना सम्मिलित होना बताया था। उधर कलकत्ते मे दक्षिणेश्वर मे एक मकान मे वम वनाने का सामान, एक बना हुआ वम, ७ रिवाल्वर, पिस्तौल तथा कुछ राजद्रोही साहित्य पकडा गया। इसी मकान मे श्रीयुत राजेन्द्रनाथ लाहिरी बी० ए०, जो इस मुकदमे मे फरार थे, गिरफ्तार हुए।

इन्दूभूषण के गिरफ्तार हो जाने के बाद उसके हेडमास्टर को एक पत्र मध्य प्रान्त से मिला, जिसे उसने हार्टन साहब के पास वैसा ही भेज दिया। इस पत्र से एक व्यक्ति 'मोहनलाल खत्री' का चान्दा मे पता चला। वहाँ से पुलिस ने खोज लगाकर पूना में श्रीयुत रामकृष्ण खत्री को गिरफ्तार कर के लखनऊ भेजा। बनारस मे भेजे हुए पार्सलो के सम्बन्ध मे से जवलपुर मे श्रीयुत प्रणवेशकुमार चटर्जी को गिरफ्तार करके भेजा गया। कलकत्ता से श्रीयुत शचीन्द्रनाथ सान्याल जिन्हे बनारस षड्यत्र से आजन्म कालेपानी की सजा हुई थी और जिन्हे वाकुरा मे 'क्रान्तिकारी' पर्चे

बाँटने के कारण दो वर्ष की सजा हुई थी, इस मुकदमे मे लखनऊ भेजे गये। श्रीयुत योगेशचन्द्र चटर्जी बगाल ग्रार्डीनेस के कैदी हजारी बाग़ जेल से भेजे गये। ग्राप अक्टूबर सन् १९२४ ई० मे कलकत्ते मे गिरफ्तार हुए थे। ग्रापके पास दो कागज पाये गए थे, जिनमे सयुक्त प्रान्त के सब जिलो का नाम था, और लिखा था कि बाईस जिलो मे समिति का कार्य हो रहा है। ये कागज इस षड्यत्र के सम्वन्ध के समझे गये। श्रीयुत राजेन्द्रनाथ लाहिरी दक्षिणेश्वर बम केस मे दस वर्ष के दीपान्तर की सजा पाने के वाद इस मुकदमे मे लखनऊ भेजे गये। अब लगभग छत्तीस मनुष्य गिरफ्तार हुए थे। अट्ठाईस पर मजिस्ट्रेट की अदालत मे मुकदमा चला। तीन व्यक्ति श्रीयुत १—शचीन्द्रनाथ बख्शी, २—श्रीयुत चन्द्रशेखर आज़ाद ३—श्रीयुत अशफाकउल्ला खॉ फरार रहे। वाकी सब मुकदमे अदालत मे आने से पहले ही छोड दिये गये। अट्ठाईस मे से दो पर से मजिस्ट्रेट की अदालत मे मुकदमा उठा लिया गया। दो को सरकारी गवाह वनाकर उन्हे माफी दी गई। अन्त मे मजिस्ट्रेट ने इक्कीस व्यक्तियो को सेशन सुपुर्द किया। सेशन मे मुकदमा आने पर श्रीयुत दामोदरस्वरूप सेठ बहुत बीमार हो गये। अदालत न आ सकते थे, अत अन्त मे बीस व्यक्ति रह गये। बीस मे से दो व्यक्ति श्रीयुत शचीन्द्रनाथ विश्वास तथा श्रीयुत हरगोविन्द सेशन की अदालत से मुक्त हुए। बाकी अट्ठारह को सजाएँ हुई।

श्री बनवारीलाल इकबाली मुलजिम हो गये। वे रायबरेली जिला कांग्रेस कमेटी के मन्त्री भी रह चुके है। उन्होने असहयोग आन्दोलन मे छ मास का कारावास भी भोगा था। इस पर भी पुलिस की धमकी से प्राण संकट मे पड गये! आप ही हमारी

समिति के ऐसे सदस्य थे कि जिन पर समिति का सब से अधिक धन व्यय किया गया। प्रत्येक मास आपको पर्याप्त धन भेजा जाता था। मर्यादा की रक्षा के लिए हम लोग यथाशक्ति वनवारीलाल को मासिक शुल्क दिया करते थे। अपने पेट काटकर इनको मासिक व्यय दिया गया। फिर भी इन्होने अपने सहायको की गर्दन पर छुरी चलाई ! अधिक से अधिक दस वर्ष की सजा हो जाती। जिस प्रकार सबूत इनके विरुद्ध था, वैसे ही, इसी प्रकार के दूसरे अभियुक्तो पर था, जिन्हे दस-दस वर्ष की सजा हुई। यही नही पुलिस के बहकाने से सेशन मे बयान देते समय जो नई बाते इन्होने जोडी, उन मे मेरे सम्बन्ध मे कहा कि रामप्रसाद डकैतियो के रुपये से अपने परिवार का निर्वाह करता है ! इस बात को सुनकर मुझे हँसी भी आई, पर हृदय पर बड़ा आघात लगा, कि जिनकी उदर-पूर्ति के लिये प्राणो को सकट मे डाला, दिन को दिन और रात को रात न समझा, बुरी तरह से मार खाई, माता-पिता का कुछ भी ख्याल न किया, वही इस प्रकार आक्षेप करे !

समिति के सदस्यो ने इस प्रकार का व्यवहार किया। बाहर जो साधारण जीवन के सहयोगी थे, उन्होने भी अद्भुत रूप धारण किया। एक ठाकुर साहव के पास काकोरी डकैती का नोट मिल गया था। वह कही शहर मे पा गये थे। जब गिरफ्तारी हुई, मजिस्ट्रेट के यहाँ जमानत नामजूर हुई, जज साहब ने चार हजार की जमानत माँगी। कोई जमानती न मिलता था। आपके वृद्ध भाई मेरे पास आये। पैरो पर सिर रखकर रोने लगे। मैने जमानत कराने का प्रयत्न किया। मेरे माता-पिता कचहरी जाकर खुले रूप से पैरवी करने को मना करते रहे कि पुलिस खिलाफ है, रिपोर्ट

हो जायगी, पर मैने एक न सुनी। कचहरी जाकर, कोशिश करके ज़मानत दाखिल कराई। जेल से उन्हे स्वयं जाकर छुड़ाया। पर जब मैने उक्त महाशय का नाम उक्त घटना को गवाही देने के लिए सूचित किया, तब पुलिस ने उन्हे धमकाया और उन्होने पुलिस को तीन बार लिख कर दे दिया कि हम रामप्रसाद को जानते भी नही। हिन्दू मुसलिम झगडे मे जिनके घरो की रक्षा की थी, जिनके बाल बच्चे मेरे सहारे मुहल्ले मे निर्भयता से निवास करते रहे, उन्होने ही मेरे खिलाफ झूठी गवाहियाँ बनवाकर भेजी! कुछ मित्रो के भरोसे पर उनका नाम गवाही मे दिया कि जरूर गवाही देगे, ससार लौट जावे पर वे नही डिग सकते। पर वचन दे चुकने पर भी जब पुलिस का दबाव पडा, वे भी गवाही देने से इनकार कर गये! जिनको अपना हृदय, सहोदर तथा मित्र समझकर हर तरह की सेवा करने को तैयार रहता था, जिस प्रकार की आवश्यकता होती यथाशक्ति उसको पूर्ण करने की प्राणपण से चेप्टा करता था, उनसे इतना भी न हुआ कि कभी जेल पर आकर दर्शन दे जाते, फाँसी की कोठरी मे ही आकर सतोषदायक दो बाते कर जाते! एक दो सज्जनो ने इतनी कृपा तथा साहस किया कि दस मिनट के लिये अदालत मे दूर खडे होकर दर्शन दे गये। यह सब इसलिए कि पुलिस का आतंक छाया हुआ था कि कही गिरफ्तार न कर लिये जाये। इस पर भी जिसने जो कुछ किया मै उसी को अपना सौभाग्य समझता हूँ, और उनका आभारी हूँ—

वह फूल चढाते हैं, तुर्बत भी दवी जाती।
माशूक के थोड़े से भी एहसान बहुत हैं॥

परमात्मा से यही प्रार्थना है कि सब प्रसन्न तथा सुखी रहे। मैने तो सब बातो को जानकर ही इस मार्ग मे पैर रखा था। मुकदमे के पहले संसार का कोई अनुभव ही न था। न कभी जेल देखा, न किसी अदालत का कोई तजर्वा था। जेल मे जाकर मालूम हुआ कि किसी नई दुनिया मे पहुँच गया। मुकदमे से पहले मै यह भी न जानता था, कि कोई लेखन-कला-विज्ञान भी है, इसका भी कोई दक्ष (Hand-writing expert) भी होता है, जो लेखन शैली को देखकर लेखको का निर्णय कर सकता है। यह भी नही पता था कि लेख किस प्रकार मिलाये जाते है, एक मनुष्य के लेख मे क्या भेद होता है, क्यो भेद होता है, लेखन-कला का दक्ष हस्ताक्षर को प्रमाणित कर सकता है, तथा लेखक के वास्तविक लेख मे तथा बनावटी लेख मे भेद कर सकता है, इस प्रकार का कोई भी अनुभव तथा ज्ञान न रखते हुए भी एक प्रान्त की क्रान्तिकारी समिति का सम्पूर्ण भार लेकर उसका सचालन कर रहा था! बात यह है कि क्रान्तिकारी कार्य की शिक्षा देने के लिये कोई पाठशाला तो है ही नही। यही हो सकता था कि पुराने अनुभवी क्रान्तिकारियो से कुछ सीखा जाय। न जाने कितने व्यक्ति बगाल तथा पजाब के षड्यन्त्रो मे गिरफ्तार हुए, पर किसी ने भी यह उद्योग न किया कि एक इस प्रकार की पुस्तक लिखी जाय, जिससे नवागन्तुको को कुछ अनुभव की बातें मालूम होती।

लोगों को इस बात की बड़ी उत्कण्ठा होगी कि क्या यह पुलिस का भाग्य ही था, जो सब बना बनाया मामला हाथ आ गया। क्या पुलिस वाले परोक्ष ज्ञानी होते है? कैसे गुप्त बातो का पता चला लेते है? कहना पड़ता है कि यह इस देश का दुर्भाग्य!

सरकार का सौभाग्य !! बगाल पुलिस के सम्बन्ध मे तो अधिक कहा नही जा सकता, क्योकि मेरा कुछ विशेषानुभव नही। इस प्रान्त की खुफिया पुलिस वाले तो महान भोदू होते है, जिन्हे साधारण ज्ञान भी नही होता। साधारण पुलिस से खुफिया मे आते हैं। साधारण पुलिस की दरोगाई करते है, मजे मे लम्बी-लम्बी घूस खाकर बडे-बड़े पेट बढा आराम करते है। उनकी वला तकलीफ उठाय ! यदि कोई एक दो चालाक हुए भी तो थोडे दिन बडे ओहदे की फिराक मे काम दिखाया, दौड-धूप की, कुछ पद-वृद्धि हो गई और सब काम बन्द ! इस प्रान्त मे कोई बाकायदा पुलिस का गुप्तचर विभाग नही, जिसको नियमित रूप से शिक्षा दी जाती हो। फिर काम करते-करते अनुभव हो ही जाता है। मैनपुरी षड्यन्त्र तथा इस षड्यन्त्र से इसका पूरा पता लग गया, कि थोडी सी कुशलता से कार्य करने पर पुलिस के लिए पता पाना बडा कठिन है। वास्तव मे उनके कुछ भाग्य ही अच्छे होते है। जब से इस मुकदमे की जाँच शुरू हुई, पुलिस ने इस प्रान्त के सदिग्ध क्रान्तिकारी व्यक्तियो पर दृष्टि डाली, उनसे मिली, बातचीत की। एक दो को कुछ धमकी दी। 'चोर की दाढी मे तिनका', वाली जनश्रुति के अनुसार एक महाशय से पुलिस को सारा भेद मालूम हो गया। हम सबके सब चक्कर मे थे कि इतनी जल्दी पुलिस ने मामले का पता कैसे लगा लिया ! उक्त महाशय की ओर तो ध्यान भी न जा सकता था। पर गिरफ्तारी के समय मुझ से तथा पुलिस के अफसर से जो बाते हुई, उनमे पुलिस अफसर ने वे सब बाते मुझसे कही जिनको मेरे तथा उक्त महाशय के अतिरिक्त कोई भी दूसरा जान ही न सकता था। और भी बडे पक्के तथा बुद्धिगम्य प्रमाण मिल

गये, कि जिन बातो को उक्त महाशय जान सके थे, वे ही पुलिस जान सकी। जो बाते आप को मालूम न थी, वे पुलिस को किसी प्रकार न मालूम हो सकी। उन बातो से यह निश्चय हो गया कि यह काम उन्ही महाशय का है। यदि ये महाशय पुलिस के हाथ न आते और भेद न खोल देते, तो पुलिस सिर पटक कर रह जाती, कुछ भी पता न चलता। बिना दृढ प्रमाणो के भयकर से भयकर व्यक्ति पर भी हाथ रखने का साहस नही होता, क्योकि जनता मे आन्दोलन फैलने से बदनामी हो जाती है। सरकार पर जवाबदेही आती है। अधिक से अधिक दो चार मनुष्य पकडे जाते, और अन्त मे उन्हे भी छोडना पडता। परन्तु जब पुलिस को वास्तविक सूत्र हाथ आ गया, उसने अपनी सत्यता को प्रमाणित करने के लिए लिखा हुआ प्रमाण पुलिस को दे दिया, उस अवस्था मे यदि पुलिस गिरफ्तारियाँ न करती, तो फिर कब करती ? जो भी हुआ, परमात्मा उनका भी भला करे। अपना तो जीवन भर यही उसूल रहा—

> सताये तुझ को जो कोई बेवफा 'बिस्मिल'।
> तो मुंह से कुछ न कहना आह ! कर लेना ॥
> हम शहीदाने वफ़ा का दीनो ईमां और है।
> सिजदे करते हैं हमेशा पांव पर जल्लाद के ॥

मैने इस अभियोग मे जो भाग लिया अथवा जिनकी जिन्दगी जिम्मेदारी मेरे सिर पर थी, उनमे से ज्यादा हिस्सा श्रीयुत अशफाकउल्ला खॉ वारसी का है। मै अपनी कलम से उनके लिए भी अन्तिम समय मे दो शब्द लिख देना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।

अशफ़ाक

मुझे भली भाँति याद है, जब कि मै बादशाही एलान के बाद शाहजहाँपुर आया था, तो तुमसे स्कूल मे भेंट हुई थी। तुम्हारी मुझ से मिलने की बड़ी हार्दिक इच्छा थी। तुमने मुझसे मैनपुरी षड्यन्त्र के सम्बन्ध मे कुछ बातचीत करनी चाही थी। मैने यह समझकर कि एक स्कूल का मुसलमान विद्यार्थी मुझसे इस प्रकार की बातचीत क्यो करता है, तुम्हारी बातो का उत्तर उपेक्षा की दृष्टि से दे दिया था। तुम्हे उस समय बडा खेद हुआ था। तुम्हारे मुख से हार्दिक भावों का प्रकाश हो रहा था। तुमने अपने इरादे को यो ही नही छोड दिया, अपने निश्चय पर डटे रहे। जिस प्रकार हो सका कॉंग्रेस मे बातचीत की। अपने इष्ट मित्रो द्वारा इस बात का विश्वास दिलाने की कोशिश की कि तुम बनावटी आदमी नही, तुम्हारे दिल मे मुल्क की खिदमत करने की ख्वाहिश थी। अन्त मे तुम्हारी विजय हुई। तुम्हारी कोशिशो ने मेरे दिल मे जगह पैदा कर ली। तुम्हारे बडे भाई मेरे उर्दू मिडिल के सहपाठी तथा मित्र थे, यह जानकर मुझे बडी प्रसन्नता हुई। थोड़े दिनो मे ही तुम मेरे छोटे भाई के समान हो गये थे, किन्तु छोटे भाई बनकर तुम्हे सन्तोष न हुआ। तुम समानता के अधिकार चाहते थे, तुम मित्र की श्रेणी मे अपनी गणना चाहते थे। वही हुआ। तुम सच्चे मित्र बन गये। सबको आश्चर्य था कि एक कट्टर आर्य-समाजी और मुसलमान का मेल कैसा? मै मुसलमानो की शुद्धि करता था। आर्य-समाज मन्दिर में मेरा निवास था, किन्तु तुम इन बातो की किंचितमात्र चिन्ता न करते थे। मेरे कुछ साथी तुम्हारे मुसलमान होने के कारण कुछ

घृणा की दृष्टि से देखते थे, किन्तु तुम अपने निश्चय मे दृढ थे। मेरे पास आर्य-समाज मन्दिर मे आते-जाते थे। हिन्दू-मुसलिम झगडा होने पर, तुम्हारे मुहल्ले के सब कोई तुम्हे खुल्लमखुल्ला गालियाँ देते थे, काफिर के नाम से पुकारते थे, पर तुम कभी भी उनके विचारो से सहमत न हुए। सदैव हिन्दू-मुसलिम ऐक्य के पक्षपाती रहे। तुम एक सच्चे मुसलमान तथा सच्चे स्वदेश-भक्त थे। तुम्हे यदि जीवन मे कोई विचार था, तो यही कि मुसलमानो को खुदा अक्ल देता, कि वे हिन्दुओ के साथ मिलकर के हिन्दोस्तान की भलाई करते। जब मै हिन्दी मे कोई लेख या पुस्तक लिखता तो तुम सदैव यही अनुरोध करते कि उर्दू मे क्यो नही लिखते, जो मुसलमान भी पढ सके ? तुमने स्वदेशभक्ति के भावो को भली भाँति समझने के लिए ही हिन्दी का अच्छा अध्ययन किया। अपने घर पर जब माता जी तथा भ्राता जी से बातचीत करते थे, तो तुम्हारे मुंह से हिन्दी शब्द निकल जाते थे, जिससे सबको बडा आश्चर्य होता था।

तुम्हारी इस प्रकार की प्रवृत्ति देखकर बहुतो को सन्देह होता था, कि कही इस्लाम-धर्म त्याग कर शुद्धि न करा लो। पर तुम्हारा हृदय तो किसी प्रकार अशुद्ध न था, फिर तुम शुद्धि किस वस्तु की कराते ? तुम्हारी इस प्रकार की प्रगति ने मेरे हृदय पर पूर्ण विजय पा ली। बहुधा मित्र मण्डली मे बात छिडती कि कही मुसलमान पर विश्वास करके धोखा न खाना। तुम्हारी जीत हुई, मुझ मे तुम मे कोई भेद न था। बहुधा मैने तुमने एक थाली मे भोजन किए। मेरे हृदय से यह विचार ही जाता रहा कि हिन्दू-मुसलमान में कोई भेद है। तुम मुझ पर अटल विश्वास तथा अगाध प्रीति रखते थे। हाँ ! तुम

मेरा नाम लेकर नहीं पुकार सकते थे। तुम तो मुझे सदैव 'राम' कहा करते थे। एक समय जब तुम्हें हृदय-कम्प (Palpitation of heart) का दौरा हुआ, तुम अचेत थे, तुम्हारे मुँह से बारम्बार 'राम' 'हाय राम'। शब्द निकल रहे थे। पास खडे हुए भाई बांधवो को आश्चर्य था कि 'राम' 'राम' कहता है। कहते कि 'अल्लाह' 'अल्लाह' कहो, पर तुम्हारी 'राम-राम' की रट थी। उसी समय किसी मित्र का आगमन हुआ, जो 'राम' के भेद को जानते थे। तुरन्त मै बुलाया गया। मुझ से मिलने पर तुम्हे शान्ति हुई, तब सब लोग 'राम! राम!' के भेद को समझे।

अन्त मे इस प्रेम, प्रीति तथा मित्रता का परिणाम क्या हुआ? मेरे विचारो के रग मे तुम भी रग गये। तुम भी एक कट्टर क्रान्तिकारी बन गए। अब तो तुम्हारा दिन रात प्रयत्न यही था, कि जिस प्रकार हो मुसलमान नवयुवको मे भी क्रान्तिकारी भावों का प्रवेश हो। वे भी क्रान्तिकारी आन्दोलन मे योग दे। जितने तुम्हारे बन्धु तथा मित्र थे सब पर तुमने अपने विचारो का प्रभाव डालने का प्रयत्न किया। बहुधा क्रान्तिकारी सदस्यो को भी बडा आश्चर्य होता कि मैने कैसे एक मुसलमान को क्रान्तिकारी दल का प्रतिष्ठित सदस्य बना लिया। मेरे साथ तुमने जो कार्य किये, वे सराहनीय है। तुमने कभी भी मेरी आज्ञा की अवहेलना न की। एक आज्ञाकारी भक्त के समान मेरी आज्ञा पालन मे तत्पर रहते थे। तुम्हारा हृदय बडा विशाल था। तुम्हारे भाव बडे उच्च थे।

मुझे यदि शान्ति है तो यही कि तुमने ससार मे मेरा मुख उज्ज्वल कर दिया। भारत के इतिहास मे यह घटना भी उल्लेखनीय हो गई, कि अशफाकउल्ला ने क्रान्तिकारी आन्दोलन मे योग

दिया। अपने भाई बन्धु तथा सम्बन्धियों के समझाने पर कुछ भी ध्यान न दिया। गिरफ्तार हो जाने पर भी अपने विचारों मे दृढ रहे। जैसे तुम शारीरिक बलशाली थे, वैसे ही मानसिक वीर तथा आत्मा से उच्च सिद्ध हुए। इन सबके परिणामस्वरूप अदालत मे तुमको मेरा सहकारी (लेफ्टीनेण्ट) ठहराया गया, और जज ने मुकदमे का फैसला लिखते समय तुम्हारे गले मे जयमाल (फाँसी की रस्सी) पहना दी। प्यारे भाई, तुम्हे यह समझ कर सन्तोष होगा कि जिसने अपने माता-पिता की धन-सम्पत्ति को देश-सेवा में अर्पण करके उन्हे भिखारी बना दिया, जिसने अपने सहोदर के भावी भाग्य को भी देश सेवा की भेंट कर दिया, जिसने अपना तन-मन-धन-सर्वस्व मातृ-सेवा मे अर्पण करके अपना अन्तिम बलिदान भी दे दिया, उसने अपने प्रिय सखा अशफाक को भी उसी मातृ-भूमि की भेंट चढा दिया।

'असग़र' हरीम इश्क मे हस्ती ही जुर्म है।
रखना कभी न पाँव यहाँ सर लिये हुए॥

फांसी की कोठरी

अन्तिम समय निकट है। दो फाँसी सजाएँ सिर पर झूल रही है। पुलिस को साधारण जीवन में और समाचार पत्रों तथा पत्रिकाओं मे खूब जी भर के कोसा है। खुली अदालत मे जज साहब, खुफिया पुलिस के अफसर, मजिस्ट्रेट, सरकारी वकील तथा सरकार को खूब आडे हाथों लिया है। हर एक के दिल में मेरी बातें चुभ रही हैं। कोई दोस्त आशना, अथवा यार-मददगार नहीं, जिसका सहारा हो। एक परम पिता परमात्मा की याद है। गीता पाठ करते हुए सतोप है कि—

जो कुछ किया सो तै किया, मैं कुछ कीन्हा नाहिं ।
जहाँ कहीं कुछ मैं किया, तुम ही थे मुझ माँहि ॥
ब्रह्मण्याधाय कर्माणि संग त्यक्त्वा करोति यः ।
लिप्यते न स पापेभ्यो पद्मपत्रमिवाम्भसः ॥

भगवद्गीता । ५।१०

'जो फल की इच्छा को त्याग करके कर्मो को ब्रह्म मे अर्पण करके कर्म करता है, वह पाप से लिप्त नही होता । जिस प्रकार जल मे रहकर भी कमल-पत्र जल मे नही होता ।' जीवन पर्यन्त जो कुछ किया, स्वदेश की भलाई समझ कर किया । यदि शरीर की पालना की तो इसी विचार से, कि सुदृढ शरीर से भले प्रकार स्वदेश-सेवा हो सके । बडे प्रयत्नो से यह शुभ दिन प्राप्त हुआ। सयुक्त प्रान्त मे इस तुच्छ शरीर का ही सौभाग्य होगा, जो सन् १८५७ ई० के गदर की घटनाओ के पश्चात् क्रान्तिकारी आन्दोलन के सम्वन्ध मे इस प्रान्त के निवासी का पहला बलिदान मातृ-वेदी पर होगा ।

सरकार की इच्छा है कि मुझे घोट-घोट कर मारे । इसी कारण इस गरमी की ऋतु मे साढे तीन महीने वाद अपील की तारीख नियत की गई । साढे तीन महीने तक फाँसी की कोठरी मे भूँजा गया । यह कोठरी पक्षी के पिंजरे से भी खराव है । गोरखपुर जेल को फाँसी की कोठरी मैदान मे वनी है । किसी प्रकार की छाया निकट नही । प्रात काल आठ बजे से रात्रि के आठ बजे तक सूर्य देवता की कृपा से तथा चारो ओर रेतीली ज़मीन होने से अग्नि-वर्षण होता रहता है । नौ फीट लम्बी तथा नौ फीट चौडी कोठरी मे केवल छ फीट लम्बा और दो फीट चौडा द्वार है । पीछे

की ओर जमीन के आठ या नौ फीट की ऊँचाई पर, एक-दो फीट लम्बी एक फीट चौडी खिडकी है। इसी कोठरी मे भोजन, स्नान, मल-मूत्र त्याग तथा शयनादि होता है। मच्छर अपनी मधुर ध्वनि रात भर सुनाया करते है। वडे प्रयत्न से रात्रि मे तीन या चार घटे निद्रा आती है, किसी-किसी दिन एक दो घंटे ही सोकर निर्वाह करना पडता है। मिट्टी के पात्रों मे भोजन दिया जाता है। ओढने विछाने के दो कम्बल मिले है। वडे त्याग का जीवन है। साधना के सव साधन एकत्रित हैं। प्रत्येक क्षण शिक्षा दे रहा है—अन्तिम समय के लिए तैयार हो जाओ, परमात्मा का भजन करो।

मुझे तो इस कोठरी मे बडा आनन्द आ रहा है। मेरी इच्छा थी कि किसी साधु की गुफा पर कुछ दिन निवास करके योगाभ्यास किया जाता। अन्तिम समय वह इच्छा भी पूर्ण हो गई। साधु की गुफा न मिली तो क्या, साधना की गुफा तो मिल ही गई। इसी कोठरी मे यह सुयोग प्राप्त हो गया, कि अपनी कुछ अन्तिम वात लिखकर देशवासियो को अर्पण कर दूं। सम्भव है कि मेरे जीवन के अध्ययन से किसी आत्मा का भला हो जाय। वडी कठिनता से यह शुभ अवसर प्राप्त हुआ।

महसूस हो रहे हैं वादे फ़ना के झोंके।
खुलने लगे हैं मुझ पर इसरार जिन्दगी के॥
वारे अलम उठाया रगे निशात देखा।
आये नहीं हैं यूं ही अन्दाज वेहिसी के॥

वफा पर दिल को सदके जान को नजरे जफा कर दे।
मुहव्वत में यह लाजिम है कि जो कुछ हो फिदा कर दे॥

अव तो यही इच्छा है—

वहे बहरे फ़ना में जल्द यारब लाश 'बिस्मिल' की।
कि भूखी मछलियाँ हैं किन्तु जौहरे शमशीर कातिल की॥
समझकर फूंकना इसको जरा ऐ दागे नाकामी।
बहुत से घर भी हैं आबाद इस उजड़े हुए दिल से॥

परिणाम

ग्यारह वर्ष पर्यन्त यथाशक्ति प्राणपण से चेष्टा करने पर भी हम अपने उद्देश्य मे कहाँ तक सफल हुए ? क्या लाभ हुआ ? इसका विचार करने से कुछ अधिक प्रयोजन सिद्ध न होगा, क्योंकि हमने लाभ-हानि अथवा जय-पराजय के विचार से क्रान्तिकारी दल मे योग नहीं दिया था। हमने जो कुछ किया वह अपना कर्त्तव्य समझ कर किया। कर्त्तव्य-निर्णय मे हमने कहाँ तक बुद्धिमत्ता से काम लिया, इसका विवेचन करना उचित जान पडता है। राजनैतिक दृष्टि से हमारे कार्यों का इतना ही मूल्य है कि कतिपय होनहार नवयुवकों के जीवन को कष्टमय बनाकर नीरस कर दिया, और उन्ही मे से कुछ ने व्यर्थ मे जाने गँवाईं। कुछ धन भी खर्च किया। हिन्दू-शास्त्र के अनुसार किसी की अकाल मृत्यु नही होती जिसका जिस विधि से जो काल होता है, वह उसी विधि समय पर ही प्राण त्याग करता है। केवल निमित्त मात्र कारण उपस्थित हो जाते हैं। लाखो भारतवासी महामारी, हैजा, ताऊन इत्यादि अनेक प्रकार के रोगो मे मर जाते है। करोडो दुर्भिक्ष मे अन्न बिना प्राण त्यागते हैं, तो उसका उत्तरदायित्व किस पर है ? रह गया धन का व्यय, सो इतना धन तो भले आदमियो के विवाहोत्सवों मे व्यय हो जाता है। गण्यमान व्यक्तियो की तो केवल विलासिता की सामग्री का मासिक व्यय इतना होगा, जितना कि हमने एक षड्यन्त्र के निर्माण मे व्यय

किया। हम लोगो को डाकू वता कर फाँसी और काले पानी की सजाये दी गई है। किन्तु हम समझते है कि वकील और डाक्टर हमसे कही बड़े डाकू है। वकील डाक्टर दिन दहाढे वड़े-वड़े तालुकेदारो की जायदादे लूट कर खा गए। वकीलों के चाटे हुए अवध के ताल्लुकेदारों को ढूंढे रास्ता भी नही दिखाई देता, और वकीलो की ऊँची अट्टालिकाये उन पर खिलखिला कर हँस रही है। इसी प्रकार लखनऊ मे डाक्टरो के भी ऊँचे-उँचे महल वन गये। किन्तु राज्य मे दिन के डाकुओ की प्रतिष्ठा है। अन्यथा रात के साधारण डाकुओ मे और दिन के इन डाकुओ (वकीलो तथा डाक्टरो) मे कोई भेद नही। दोनों अपने-अपने मतलब के लिए बुद्धि की कुशलता से प्रजा का धन लूटते है।

ऐतिहासिक दृष्टि से हम लोगो के कार्य का वहुत वडा मूल्य है। जिस प्रकार भी हो, यह तो मानना ही पड़ेगा कि इस गिरी हुई अवस्था मे भी, भारतवासी युवको के हृदय मे स्वाधीन होने के भाव विराजमान है। वे स्वतन्त्र होने की यथाशक्ति चेष्टा भी करते है। यदि परिस्थितियाँ अनुकूल होती तो यही इनेगिने नवयुवक अपने प्रयत्नो से संसार को चकित कर देते। उस समय भारत-वासियो को भी फ्रांसीसियो की भाँति कहने का सौभाग्य प्राप्त होता जो कि उस जाति के नवयुवको ने फ़ासीसी प्रजातन्त्र की स्थापना करते हुए कहा था : (The monument so raised, may serve as a lesson to the oppressors and an instance to the oppressed) 'स्वाधीनता का जो स्मारक निर्माण किया गया है वह अत्याचारियों के लिए शिक्षा का कार्य करे और अत्याचार पीड़ितों के लिए उदाहरण बने।'

गाज़ी मुस्तफा कमालपाशा जिस समय तुर्की से भागे थे उस समय केवल इक्कीस युवक आपके साथ थे। कोई साजो-सामान न था, मौत का वारट पीछे-पीछे घूम रहा था। पर समय ने ऐसा पलटा खाया कि उसी कमाल ने अपने कमाल से संसार को आश्चर्यान्वित कर दिया। वही कातिल कमालपाशा टर्की का भाग्य निर्माता वन गया। महामना लेनिन को एक दिन शराव के पीपो मे छिपकर भागना पड़ा था, नही तो मृत्यु मे कुछ देर न थी। वही महात्मा लेनिन रूस के भाग्य-विधाता बने। श्री शिवाजी डाकू और लुटेरे समझे जाते थे, पर समय आया जब कि हिन्दू जाति ने उन्हे अपना शिरमौर बना, गौ ब्राह्मण-रक्षक छत्रपति शिवाजी वना दिया। भारत सरकार को भी अपने स्वार्थ के लिए छत्रपति के स्मारक निर्माण कराने पडे। क्लाइव एक उद्दण्ड विद्यार्थी था, जो अपने जीवन से निराश हो चुका था। समय के फेर ने उसी उद्दण्ड विद्यार्थी को अँग्रेज जाति का राज्य-स्थापनकर्त्ता लार्ड क्लाइव वना दिया। श्री सनयात सेन चीन के अराजकवादी पलातक (भागे हुए) थे। समय ने ही उसी पलातक को चीनी प्रजातन्त्र का सभापति वना दिया। सफलता ही मनुष्य के भाग्य का निर्माण करती है। असफल होने पर उसी को बर्बर, डाकू, अराजक, राजद्रोही तथा हत्यारे के नामों से विभूषित किया जाता है। सफलता उन्ही सव नामो को वदल कर दयालु, प्रजापालक, न्यायकारी, प्रजातन्त्रवादी तथा महात्मा वना देती है!

भारतवर्ष के इतिहास में हमारे प्रयत्नो का उल्लेख करना ही पडेगा, किन्तु इसमे भी कोई सन्देह नही है कि भारतवर्ष की राजनैतिक, धार्मिक तथा सामाजिक किसी प्रकार की परिस्थिति

इस समय क्रान्तिकारी आन्दोलन के पक्ष मे नही है। इसका कारण यही है कि भारतवासियो मे शिक्षा का अभाव है। वे साधारण से साधारण सामाजिक उन्नति करने मे भी असमर्थ है। फिर राजनैतिक क्रान्ति की बात कौन कहे ? राजनैतिक क्रान्ति के लिए सर्वप्रथम क्रान्तिकारियो का सगठन ऐसा होना चाहिए कि अनेक विघ्न तथा वाधाओ के उपस्थित होने पर भी संगठन मे किसी प्रकार त्रुटि न आये। सब कार्य यथावत् चलते रहे। कार्यकर्त्ता इतने योग्य तथा पर्याप्त सख्या में होने चाहिये कि एक की अनुपस्थिति मे दूसरा स्थान-पूर्ति के लिए सदा उद्यत रहे। भारतवर्ष मे कई वार कितने ही षड्यन्त्रो का भण्डा फूट गया और सव किया कराया काम चौपट हो गया। जव क्रान्तिकारी दलो की यह अवस्था है तो फिर क्रान्ति के लिए उद्योग कौन करे ? देशवासी इतने शिक्षित हो कि वे वर्तमान सरकार की नीति को समझ कर अपने हानि-लाभ को जानने मे समर्थ हो सके। वे यह भी पूर्णतया समझते हो कि वर्तमान सरकार को हटाना आवश्यक है या नही। साथ ही साथ उनमे इतनी वुद्धि भी होनी चाहिए कि किस रीति से सरकार को हटाया जा सकता है। क्रान्तिकारी दल क्या है ? वह क्या करना चाहता है ? क्यो करना चाहता है ? इन सारी वातो को जनता की अधिक सख्या समझ सके, क्रान्तिकारियो के साथ जनता की पूर्ण सहानुभूति हो, तव कही क्रान्तिकारी दल को देश मे पैर रखने का स्थान मिल सकता है। यह तो क्रान्तिकारी दल की स्थापना की प्रारम्भिक वाते हैं। रह गई क्रान्ति, सो वह तो वहुत दूर की वात है।

क्रान्ति का नाम ही वड़ा भयकर है। प्रत्येक प्रकार की क्रान्ति विपक्षियो को भयभीत कर देती है। जहाँ पर रात्रि होती है तो

दिन का आगमन जान निशिचरों को दुख होता है। ठडे जलवायु में रहने वाले पशु-पक्षी गरमी के आने पर उस देश को भी त्याग देते है। फिर राजनैतिक क्रान्ति तो बडी भयावनी होती है। मनुष्य अभ्यासो का समूह है। अभ्यासो के अनुसार ही उसकी प्रकृति भी बन जाती है। उसके विपरीत जिस समय कोई बाधा उपस्थित होती है, तो उनको भय प्रतीत होता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक सरकार के सहायक अमीर और जमीदार होते है। ये लोग कभी नही चाहते कि उनके ऐशो-आराम मे किसी प्रकार की बाधा पडे। इसलिए वे हमेशा क्रान्तिकारी आन्दोलन को नष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। यदि किसी प्रकार दूसरे देशो की सहायता लेकर समय पाकर क्रान्तिकारी दल क्रान्ति के उद्योग में सफल हो जाय, देश मे क्रान्ति हो जाय, तो भी योग्य नेता न होने से अराजकता फैल कर व्यर्थ की नर-हत्या होती है, और उस प्रयत्न मे अनेको सुयोग्य वीरो तथा विद्वानो का नाश हो जाता है। इसका ज्वलन्त उदाहरण सन् १८५७ ई० का गदर है। यदि फ्रास तथा अमेरिका की भाँति क्रान्ति द्वारा राजतन्त्र को पलट कर प्रजातन्त्र स्थापित भी कर लिया जाय तो बड़े-बडे धनी पुरुष अपने धन-बल से सब प्रकारो के अधिकारो को दबा बैठते है। कार्यकारिणी समितियो मे बडे-बड़े अधिकार धनियो को प्राप्त हो जाते है। देश के शासन मे धनियो का मत ही उच्च आदर पाता है। धन-बल से देश के समाचार पत्रों, कल-कारखानों तथा खानो पर उनका ही अधिकार हो जाता है। मजबूरन जनता की अधिक सख्या धनियो का समर्थन करने को बाध्य हो जाती है। जो दिमाग वाले होते हैं, वे भी समय पाकर बुद्धिबल से जनता की खरी कमाई से प्राप्त किये अधिकारों को हडप कर बैठते है। स्वार्थ

के वशीभूत होकर वे श्रमजीवियो तथा कृषको को उन्नति का अवसर नही देते। अन्त मे ये लोग भी धनियो के पक्षपाती होकर राजतन्त्र के स्थान मे धनिकतन्त्र की ही स्थापना करते हैं। रूसी क्रान्ति के पश्चात् यही हुआ था। रूस के क्रान्तिकारी इस बात को पहले से ही जानते थे। अतएव उन्होने राज्य-सत्ता के विरुद्ध युद्ध करके राजतन्त्र की समाप्ति की। इसके बाद जैसे ही धनी तथा बुद्धि जीवियो ने रोडा अटकाना चाहा कि उसी समय उनसे भी युद्ध करके उन्होने वास्तविक प्रजातन्त्र की स्थापना की।

अब विचारने की बात यह है कि भारतवर्ष मे क्रान्तिकारी आन्दोलन के समर्थक कौन कौन से साधन मौजूद है ? गत पृष्ठो मे मैने अपने अनुभवो का उल्लेख करके दिखला दिया है कि समिति के सदस्यो की उदर-पूर्ति तक के लिए कितना कष्ट उठाना पडा। प्राणपण से चेष्टा करने पर भी असहयोग आन्दोलन के पश्चात् कुछ थोडे से ही गिने-चुने युवक युक्त-प्रान्त मे ऐसे मिल सके, जो क्रान्तिकारी आन्दोलन का समर्थन करके सहायता देने को उद्यत हुए। इन गिने-चुने व्यक्तियो मे भी हार्दिक सहानुभूति रखने वाले, अपनी जान पर खेल जाने वाले कितने थे, इसका कहना ही क्या है ! कैसी बडी बडी आशाये बँधा कर इन व्यक्तियो को क्रान्तिकारी समिति का सदस्य बनाया गया था, और इस अवस्था मे, जब कि असहयोगियो ने सरकार की ओर से घृणा उत्पन्न कराने मे कोई कसर न छोडी थी, खुले रूप मे राज्यद्रोही बातो का पूर्ण प्रचार किया गया था। इस पर भी बोलशेविक सहायता की आशाएँ बँधा-बँधा कर तथा क्रान्तिकारियो के ऊँचे-ऊँचे आदर्शो तथा बलिदानो का उदाहरण दे देकर प्रोत्साहन दिया जाता था। नवयुवको के हृदय

में क्रान्तिकारियों के प्रति बडा प्रेम तथा श्रद्धा होती है। उनकी अस्त्र-शस्त्र रखने की स्वाभाविक इच्छा तथा रिवाल्वर या पिस्तौल से प्राकृतिक प्रेम उन्हे क्रान्तिकारी दल से सहानुभूति उत्पन्न करा देता है। मैंने अपने क्रान्तिकारी जीवन मे एक भी युवक ऐसा न देखा, जो एक रिवाल्वर या पिस्तौल अपने पास रखने की इच्छा न रखता हो। जिस समय उन्हे रिवाल्वर के दर्शन होते है, वे समझते हैं कि इष्टदेव के दर्शन प्राप्त हुए, आधा जीवन सफल हो गया। उसी समय से वे समझते हैं कि क्रान्तिकारी दल के पास इस प्रकार के सहस्रों अस्त्र होगे, तभी तो इतनी बड़ी सरकार से युद्ध करने का प्रयत्न कर रहे हैं। सोचते हैं कि धन की भी कोई कमी न होगी। अब क्या, अब समिति के व्यय से देश-भ्रमण का अवसर भी प्राप्त होगा, बडे-बडे त्यागी महात्माओ के दर्शन होगे, सरकारी गुप्तचर विभाग का भी हाल मालूम हो सकेगा, सरकार द्वारा जब्त किताबे कुछ तो पहले ही पढा दी जाती है, रही सही की भी आशा रहती है कि बड़ा उच्च साहित्य देखने को मिलेगा, जो यो कभी प्राप्त नही हो सकता। साथ ही साथ खयाल होता है कि क्रान्तिकारियो ने देश के राजा-महाराजाओ को तो अपने पक्ष मे कर ही लिया होगा। अब क्या, थोड़े दिन की ही कसर हैं, लौट दिया सरकार का राज्य! बम बनाना सीख ही जाएँगे। अमर बूटी प्राप्त हो जायेगी, इत्यादि। परन्तु जैसे ही एक युवक क्रान्तिकारी दल का सदस्य बनकर हार्दिक प्रेम से समिति के कार्यों मे योग देता है, थोडे दिनो मे ही उसे विशेष सदस्य होने के अधिकार प्राप्त होते है, वह ऐक्टिव (कार्यशील) मेम्बर बनता है, उसे संस्था का कुछ असली भेद मालूम होता है, तब समझ मे आता है कि कैसे भीषण कार्य मे उसने हाथ डाला है। फिर

तो वही दशा हो जाती है, जो 'नकटा पंथ' के सदस्यो की थी। जब चारो ओर से असफलता तथा अविश्वास की घटाये दिखाई देती है, तब यही विचार होता है कि ऐसे दुर्गम पथ मे ये परिणाम तो होते ही है। दूसरे देश के क्रान्तिकारियो के मार्ग मे भी ऐसी ही वाधाये उपस्थित हुई होगी। वीर वही कहलाता है, जो अपने लक्ष्य को नही छोडता, इसी प्रकार की बातो से मन को शान्त किया जाता है। भारत के जनसाधारण की तो कोई बात ही नही। अधिकांश शिक्षित समुदाय भी यह नही जानता कि क्रान्तिकारी दल क्या चीज़ है, फिर उनसे सहानुभूति कौन रखे ? विना देशवासियो की सहानुभूति के अथवा विना जनता की आवाज के सरकार भी किसी वात की कुछ चिन्ता नही करती। दो चार पढे लिखे एक दो अँग्रेज़ी अखवार मे दबे हुए शब्दो मे यदि दो एक लेख लिख दे, तो वे अरण्य रोदन के समान निष्फल सिद्ध होते है। उनकी ध्वनि व्यर्थ मे ही आकाश में विलीन हो जाती है । तमाम वातो को देखकर अब तो मै इस निर्णय पर पहुँचा हूँ कि अच्छा हुआ जो मै गिरफ्तार हो गया, और भागा नही। भागने की मुझे सुविधाएँ थी। गिरफ्तारी से पहले ही मुझे अपनी गिरफ्तारी का पूरा पता चल गया था। गिरफ्तारी के पूर्व भी यदि इच्छा करता तो पुलिस वालों को मेरी हवा भी न मिलती, किन्तु मुझे तो अपनी शक्ति की परीक्षा करनी थी। गिरफ्तारी के वाद सड़क पर आध घण्टे तक विना किसी वधन के घूमता रहा। पुलिस वाले शान्तिपूर्वक वैठे हुए थे। जव पुलिस कोतवाली मे पहुँचा, दोपहर के समय पुलिस कोतवाली के दफ्तर में विना किसी वन्धन के खुला हुआ वैठा था। केवल एक सिपाही निगरानी के लिये पास वैठा हुआ था, जो रात भर का जागा था।

सब पुलिस अफसर भी रात भर के जगे हुए थे, क्योकि गिरफ्तारियों मे लगे रहे थे। सब आराम करने चले गये थे। निगरानी वाला सिपाही भी घोर निद्रा मे सो गया! दफ्तर मे केवल एक मुन्शी लिखा पढी कर रहे थे। यह भी श्रीयुत रोशनसिंह अभियुक्त के फूफीजात भाई थे। यदि मै चाहता तो धीरे से उठकर चल देता। पर मैने विचारा कि मुन्शी जी महाशय बुरे फँसेगे। मैंने मुन्शी जी को बुलाकर कहा कि यदि भावी आपत्ति के लिए तैयार हो तो मैं जाऊँ। वे मुझे पहले से जानते थे। पैरों पड़ गये कि गिरफ्तार हो जाऊँगा, बाल-बच्चे भूखों मर जायेगे। मुझे दया आ गई। एक घण्टे बाद श्री अशफ़ाकउल्ला खाँ के मकान की तलाशी लेकर पुलिस वाले लौटे। श्री अशफाकउल्ला खाँ के भाई की कारतूसी बन्दूक और कारतूसो की भरी हुई पेटी लाकर उन्ही मुन्शी जी के पास रख दी गई, और मैं पास ही कुर्सी पर खुला हुआ बैठा था। केवल एक सिपाही खाली हाथ पास मे खडा था। इच्छा हुई कि बन्दूक उठाकर कारतूसो की पेटी गले मे डाल लूं, फिर कौन सामने आता है! पर फिर सोचा कि मुन्शी जी पर आपत्ति आयेगी, विश्वासघात करना ठीक नही। उसी समय खुफिया पुलिस के डिप्टी सुपरिण्टेण्डेण्ट सामने छत पर आये। उन्होने देखा कि मेरे एक ओर कारतूस तथा बन्दूक पडी है, दूसरी ओर श्रीयुत प्रेमकृष्ण का माउजर पिस्तौल तथा कारतूस रखे हैं, क्योकि सब चीजें मुन्शी जी के पास आकर जमा होती थी और मै बिना किसी बन्धन के बीच मे खुला हुआ बैठा हूं। डि० सु० को तुरन्त सन्देह हुआ, उन्होने बन्दूक तथा पिस्तौल को वहाँ से हटवा कर मालखाने में बद करवाया। निश्चय किया कि अब भाग चलूं। पाखाने के बहाने से

बाहर निकाला गया। एक सिपाही कोतवाली से बाहर दूसरे स्थान मे शौच के निमित्त लिवा गया। दूसरे सिपाहियो ने उससे बहुत कुछ कहा कि रस्सी डाल लो। उसने कहा मुझे विश्वास है यह भागेंगे नही। पाखाना नितान्त निर्जन स्थान मे था। मुझे पाखाने भेजकर वह सिपाही खडे होकर सामने कुश्ती देखने लगा। मैंने दीवार पर पैर रखा और चढकर देखा कि सिपाही महोदय कुश्ती देखने मे मस्त है! हाथ बढाते ही दीवार के ऊपर और एक क्षण मे बाहर हो जाता, फिर मुझे कौन पाता? किन्तु तुरन्त विचार आया कि जिस सिपाही ने विश्वास करके तुम्हे इतनी स्वतन्त्रता दी, उसके साथ विश्वासघात करके भाग कर उसको जेल मे डालोगे? क्या यह अच्छा होगा? उसके बाल बच्चे क्या कहेगे? इस भाव ने हृदय पर एक ठोकर लगाई। एक ठडी साँस भरी, दीवार से उतर कर बाहर आया, सिपाही महोदय को साथ लेकर कोतवाली की हवालात मे आकर बन्द हो गया।

लखनऊ जेल मे काकोरी के अभियुक्तो को बडी भारी आजादी थी। राय साहब प० चम्पालाल जेलर की कृपा से हम कभी भी न समझ सके कि जेल मे है या किसी रिश्तेदार के यहाँ मेहमानी कर रहे है। जैसे माता-पिता से छोटे-छोटे लडके बात-बात पर बिगड जाते है, यही हमारा हाल था। हम लोग जेल वालो से बात-बात पर ऐठ जाते। प० चम्पालाल जी का ऐसा हृदय था कि वे हम लोगों से अपनी सन्तान से भी अधिक प्रेम करते थे। हम मे से किसी को जरा सा कष्ट होता था, तो उन्हे बड़ा दुख होता था। हमारे तनिक से कष्ट को भी वह स्वयं न देख सकते थे। और हम लोग ही क्यो, उनके जेल में किसी कैदी या सिपाही, जमादार या

मुन्शी—किसी को भी कोई कष्ट नही। सब बडे प्रसन्न रहते हैं। इसके अतिरिक्त मेरी दिनचर्या तथा नियमों का पालन देखकर पहरे के सिपाही अपने गुरु से भी अधिक मेरा सम्मान करते थे। मै यथा नियम जाडे, गर्मी तथा बरसात मे प्रातःकाल तीन बजे से उठकर संध्यादि से निवृत्त हो नित्य हवन भी करता था। प्रत्येक पहरे का सिपाही देवता के समान मेरा पूजन करता था। यदि किसी के बाल बच्चे को कष्ट होता था, तो वह हवन की भभूत ले जाता था! कोई जन्त्र माँगता था। उनके विश्वास के कारण उन्हे आराम भी होता था तथा उनकी श्रद्धा और भी बढ जाती थी। परिणामस्वरूप जेल से निकल जाने का पूरा प्रबन्ध कर लिया। जिस समय चाहता चुपचाप निकल जाता। एक रात्रि को तैयार होकर उठ खडा हुआ। बैरेक के नम्बरदार तो मेरे सहारे पहरा देते थे। जब जी मे आता सोते, जब इच्छा होती बैठ जाते, क्योकि वे जानते थे कि यदि सिपाही या जमादार सुपरिन्टेण्डेण्ट जेल के सामने पेश करना चाहेगे, तो मै बचा लूँगा। सिपाही तो कोई चिन्ता ही न करते थे। चारो ओर शान्ति थी। केवल इतना प्रयत्न करना था कि लोहे की कटी हुई सलाखो को उठाकर बाहर हो जाऊँ। चार महीने पहले से लोहे की सलाखें काट ली थी। काटकर उन्हे ऐसे ढग से जमा दी थी कि सलाखें धोई गई, रंगत लगवाई गई, तीसरे दिन झाड़ी जाती, आठवे दिन हथोड़े से ठोंकी जाती और जेल के अधिकारी नित्य प्रति सायंकाल घूमकर सब ओर दृष्टि डाल जाते थे, पर किसी को कोई पता न चला! जैसे ही मै जेल से भागने का विचार कर के उठा था, ध्यान आया कि जिन प० चम्पालाल की कृपा से सब प्रकार के आनन्द भोगने की स्वतन्त्रता जेल मे प्राप्त हुई, उनके

बुढापे मे, जव कि थोड़ा सा समय ही उनकी पेशन के लिए बाकी है, क्या उन्ही के साथ विश्वासघात करके निकल भागूं ? सोचा जीवन भर किसी के साथ विश्वासघात न किया, अब भी विश्वासघात न करूँगा। उस समय मुझे यह भली भाँति मालूम हो चुका था कि मुझे फाँसी की सजा होगी, पर उपरोक्त वात सोचकर भागना स्थगित ही कर दिया। ये सव वाते चाहे प्रलाप ही क्यो न मालूम हो, किन्तु सव अक्षरश. सत्य है, सबके प्रमाण विद्यमान है।

मै इस समय इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि यदि हम लोगो ने प्राणपण से जनता को शिक्षित बनाने मे पूर्ण प्रयत्न किया होता, तो हमारा उद्योग क्रान्तिकारी आन्दोलन से कही अधिक लाभदायक होता, जिसका परिणाम स्थायी होता। अति उत्तम होगा यदि भारत की भावी सतान तथा नवयुवक-वृन्द क्रान्तिकारी सगठन करने की अपेक्षा जनता की प्रवृत्ति को देश सेवा की ओर लगाने का प्रयत्न करे, और श्रमजीवी तथा कृपको का सगठन करके उनको जमीदारो तथा रईसो के अत्याचारो से बचाये। भारतवर्ष के रईस तथा जमीदार सरकार के पक्षपाती है। मध्य श्रेणी के लोग किसी न किसी प्रकार इन्ही तीनो के आश्रित है। कोई तो नौकर पेशा है और जो कोई व्यवसाय भी करते है, उन्हे भी इन्ही के मुँह की ओर ताकना पड़ता है। रह गये श्रमजीवी तथा कृपक—सो उनको उदर-पूर्ति के उद्योग से ही समय नही मिलता, जो धर्म, समाज तथा राजनीति की ओर कुछ ध्यान दे सके। मद्यपानादि दुर्व्यसनो के कारण उनका आचरण भी ठीक नही रह सकता। व्यभिचार, सन्तान-वृद्धि, अल्पायु मे मृत्यु तथा अनेक प्रकार के रोगो से जीवन-भर उनकी मुक्ति नही हो सकती। कृपको मे उद्योग का तो नाम

भी नही पाया जाता। यदि एक किसान को जमींदार की मजदूरी करने या हल चलाने की नौकरी करने पर ग्राम में आज से बीस वर्ष पूर्व दो आने रोज या चार रुपये मासिक मिलते थे, तो आज भी वही वेतन बँधा चला आ रहा है। बीस वर्ष पूर्व वह अकेला था, अब उसकी स्त्री तथा चार सन्तान भी हैं। पर उसी वेतन में उसे निर्वाह करना पडता है। उसे उसी पर सन्तोष करना पडता है। सारे दिन जेठ की लू तथा धूप मे गन्ने के खेत मे पानी देते देते उसको रतौंधी आने लगती है। अंधेरा होते ही आँख से दिखाई नही देता, पर उसके बदले मे आधा सेर सडे हुए शीरे का शरबत या आधा सेर चना तथा छ पैसे रोज मजदूरी मिलती है, जिसमें ही उसे अपने परिवार का पेट पालना पडता है।

जिसके हृदय में भारतवर्ष की सेवा के भाव उपस्थित हो, या जो भारतभूमि को स्वतन्त्र देखने या स्वाधीन बनाने की इच्छा रखता हो, उसे उचित है कि ग्रामीण सगठन करके कृषको की दशा सुधारकर, उनके हृदय से भाग्य-निर्भरता को हटाकर उद्योगी बनने की शिक्षा दे। कल, कारखाने, रेलवे, जहाज तथा खानों मे जहाँ कही श्रमजीवी हो, उनकी दशा को सुधारने के लिये श्रमजीवियो के संघ की स्थापना की जाय, ताकि उनको अपनी अवस्था का ज्ञान हो सके और कारखानों के मालिक मन-माने अत्याचार न कर सकें और अछूतो को, जिनकी सख्या इस देश मे लगभग छ करोड है, पर्याप्त शिक्षा प्राप्त कराने का प्रबन्ध हो, तथा उनको सामाजिक अधिकारो में समानता हो। जिस देश मे छ करोड मनुष्य अछूत समझे जाते हो, उस देशवासियो को स्वाधीन बनने का अधिकार ही क्या है? इसी के साथ ही साथ स्त्रियो की दशा भी इतनी सुधारी

जाय कि वे अपने आप को मनुष्य जाति का अग समझने लगे। वे पैर की जूती तथा घर की गुडिया न समझी जायँ। इतने कार्य हो जाने के वाद जव भारत की जनता का अधिकाश शिक्षित हो जायगा, वे अपनी भलाई-बुराई समझने के योग्य हो जायँगे, उस समय प्रत्येक आन्दोलन, जिसका शिक्षित जनता समर्थन करेगी, अवश्य सफल होगा। ससार की वडी से वडी शक्ति भी उसके दवाने मे समर्थ न हो सकेगी। रूस मे जव तक किसान सगठन नही हुआ, रूस सरकार की ओर से देश-सेवको पर मनमाने अत्याचार होते रहे। जिस समय से 'केथोराइन' ने ग्रामीण-सगठन का कार्य अपने हाथ मे लिया, स्थान स्थान पर कृषक-सुधारक सघो की स्थापना की, घूम घूम कर रूस के युवक तथा युवतियो ने ज़ारशाही के विरुद्ध प्रचार आरम्भ किया। फिर किसानो को अपनी वास्तविक अवस्था का ज्ञान होने लगा। वे अपने मित्र तथा शत्रु को समझने लगे, उसी समय से जारशाही की नीव हिलने लगी। श्रमजीवियो के सघ भी स्थापित हुए। रूस मे हडतालों का आरम्भ हुआ। उसी समय से जनता की प्रवृत्ति को देखकर मदान्धो के नेत्र खुल गये।

भारतवर्ष मे सवसे वड़ी कमी यही है कि इस देश के युवको मे शहरी जीवन व्यतीत करने की वान पड़ गई है। युवक-वृन्द साफ-सुथरे कपडे पहनने, पक्की सडको पर चलने, मीठा, खट्टा तथा चटपटा भोजन करने, विदेशी सामग्री से सुसज्जित वाजारो मे घूमने, मेज-कुर्सी पर वैठने तथा विलासिता में फँसे रहने के आदी हो गये हैं। ग्रामीण-जीवन को वे नितान्त नीरस तथा शुष्क समझते है। उनकी समझ मे ग्रामों मे अर्धसभ्य या जगली लोग निवास करते है। यदि कभी किसी अंग्रेजी स्कूल या कालेज मे पढ़ने वाला

शहरी जीवन छोड़कर ग्रामीण-जीवन से प्रीति उत्पन्न हो। जो युवक मिडिल, एण्ट्रेन्स, एफ० ए०, बी० ए० पास करने मे हजारो रुपये नष्ट करके दस, पन्द्रह, वीस या तीस रुपये की नौकरी के लिए ठोकरे खाते फिरते है, उन्हे नौकरी का ग्रासरा छोडकर कोई उद्योग जैसे—वढईगीरी, लुहारगीरी, दर्जी का काम, धोबी का काम, जूते वनाना, कपड़ा बुनना, मकान बनाना, राजगीरी इत्यादि सीख लेना चाहिए। यदि ज़रा साफ सुथरे रहना हो तो वैद्यक सीखे। किसी बड़े ग्राम या कस्बे मे जाकर काम शुरू करे। उपरोक्त कामों मे से कोई काम भी ऐसा नही है, जिसमे चार या पाँच घण्टा मेहनत करके तीस रुपये मासिक की आय न हो जाय। ग्राम मे तीस रुपये मासिक शहर के साठ रुपये से अधिक है, क्योकि ग्राम मे लकडी या कण्डो का मूल्य वहुत कम होता है और यदि किसी जमीदार की कृपा हो गई और एक सूखा हुआ वृक्ष कटवा दिया तो छ. महीने के लिए ईधन की छुट्टी हो गई। शुद्ध घी, दूध सस्ते दामो मे मिल जाता है और स्वयं एक या दो गाय या भैस पाल ली, तव तो ग्राम के ग्राम गुठलियो के दाम ही मिल गये। चारा सस्ता मिलता है। घी दूध वाल वच्चे खाते हैं। कण्डों का ईंधन होता है और यदि किसी की कृपा हो गई तो फसल पर एक या दो भुस की गाडी विना मूल्य ही मिल जाती है। अधिकतर काम-काजियो को गाँव मे चारा लकडी के लिये पैसा खर्च नही करना पड़ता। हजारो अच्छे-अच्छे ग्राम है, जिनमे वेद्य, दर्जी, धोवी निवास ही नही करते। उन ग्रामों के लोगों को दस, वीस कोस दूर दौडना पडता है। वे इतने दुखी होते हैं कि जिसका अनुमान करना कठिन है। विवाह आदि अवसरो पर यथासमय कपड़े नही मिलते।

जो रिपोर्ट करे। वैसे यदि कोई खद्दरधारी ग्राम मे उपदेश करना चाहे तो तुरन्त ही जमीदार पुलिस मे खबर कर दे और यदि कस्बे के वैद्य, लडके पढाने वाले अथवा कथा कहने वाले पण्डित कोई बात कहे तो सब चुपचाप सुनकर उस पर अमल करने की कोशिश करते है और उन्हे कोई पूछता भी नही। इसी प्रकार अनेक सुविधाएँ मिल सकती है, जिनके सहारे ग्रामीणो की सामाजिक दशा सुधारी जा सकती है। रात्रि-पाठशालाये खोलकर निर्धन तथा अछूत जातियो के बालको को शिक्षा दे सकते है। श्रमजीवी-सघ स्थापित करने मे शहरी जीवन तो व्यतीत हो सकता है, किन्तु इसके लिये उनके साथ अधिक समय खर्च करना पडेगा। जिस समय वे अपने-अपने काम से छुट्टी पाकर आराम करते है, उस समय उनके साथ वार्तालाप करके मनोहर उपदेशो द्वारा उनको उनकी दशा का दिग्दर्शन कराने का अवसर मिल सकता है। इन लोगो के पास वक्त बहुत कम होता है, इस लिये बेहतर यही होगा कि चित्ताकर्षक साधनो द्वारा किसी उपदेश करने की रीति से, जैसे लालटेन द्वारा तसवीरे दिखाकर या किसी दूसरे उपाय से उनको एक स्थान पर एकत्रित किया जा सके, तथा रात्रि-पाठशालाये खोलकर उन्हे तथा उनके बच्चो को शिक्षा देने का भी प्रबन्ध किया जाय। जितने युवक उच्च शिक्षा प्राप्त करके व्यर्थ मे धन व्यय करने की इच्छा रखते है, उनको उचित है कि अधिक से अधिक अग्रेजी के दसवे दर्जे तक की योग्यता प्राप्त करके किसी कला-कौशल के सीखने का प्रयत्न करे और उस कला-कौशल द्वारा ही अपना जीवन निर्वाह करे।

जो धनी मानी स्वदेश-सेवार्थ बड़े-बडे विद्यालयों तथा पाठशालाओं की स्थापना करते हैं, उनको उचित है कि विद्यापीठो के साथ-साथ उद्योगपीठ, शिल्पविद्यालय तथा कलाकौशल भवनो की स्थापना भी करे। इन विद्यालयो के विद्यार्थियो को नेतागीरी के लोभ से बचाया जाय। विद्यार्थियो का जीवन सादा हो और विचार उच्च हो। इन्ही विद्यालयो में एक-एक उपदेशक विभाग भी हो, जिसमें विद्यार्थी प्रचार करने का ढंग सीख सके। जिन युवको के हृदय मे स्वदेश सेवा के भाव हो, उनको कष्ट सहन करने की आदत डालकर सुसगठित रूप से ऐसा कार्य करना चाहिए, जिसका परिणाम स्थायी हो। केथोराइन ने इसी प्रकार कार्य किया था। उदर-पूर्ति के निमित्त केथोराइन के अनुयायी ग्रामो मे जाकर कपड़े सीते या जूते बनाते और रात्रि के समय किसानो को उपदेश देते थे। जिस समय से मैंने केथोराइन की जीवनी (The grand mother of the Russian Revolution) का अग्रेजी भाषा मे अध्ययन किया, मुझ पर उसका बहुत प्रभाव हुआ। मैंने तुरन्त उसकी जीवनी 'केथोराइन' नाम से हिन्दी मे प्रकाशित कराई। मै भी उसी प्रकार काम करना चाहता था, पर बीच मे ही क्रान्तिकारी दल मे फँस गया। मेरा तो अब यह दृढ निश्चय हो गया है कि अभी पचास वर्ष तक क्रान्तिकारी दल को भारतवर्ष मे सफलता नही हो सकती, क्योकि यहाँ की स्थिति उसके उपयुक्त नही। अतएव क्रान्तिकारी दल का सगठन करके व्यर्थ मे नवयुवको के जीवन को नष्ट करना और शक्ति का दुरुपयोग करना बडी भारी भूल हैं। इससे लाभ के स्थान मे हानि की सभावना बहुत अधिक है। नवयुवको को मेरा अन्तिम सन्देश यही है कि वे रिवाल्वर या पिस्तौल को अपने पास रखने की इच्छा

को त्याग कर सच्चे देशसेवक बनें। पूर्ण स्वाधीनता उनका ध्येय हो और वे वास्तविक साम्यवादी बनने का प्रयत्न करते रहे। फल की इच्छा छोडकर सच्चे प्रेम से कार्य करे, परमात्मा सदैव उनका भला ही करेगा।

यदि देश हित मरना पड़े मुझ को सहस्रों बार भी,
तो भी न मैं इस कष्ट को निज ध्यान में लाऊँ कभी।
हे ईश भारतवर्ष में शत बार मेरा जन्म हो,
कारण सदा ही मृत्यु का देशोपकारक कर्म हो।

अन्तिम समय की बातें

आज १६ दिसम्बर १९२७ ई० को निम्नलिखित पक्तियो का उल्लेख कर रहा हूँ, जबकि १९ दिसम्बर १९२७ ई० सोमवार (पौष कृष्ण ११ सम्वत् १९८४ वि०) को ६॥ बजे प्रात काल इस शरीर को फॉसी पर लटका देने की तिथि निश्चित हो चुकी है। अतएव नियत समय पर इह-लीला सवरण करनी ही होगी। यह सर्वशक्तिमान प्रभु की लीला है। सब कार्य उसकी इच्छानुसार ही होते है। यह परम पिता परमात्मा के नियमो का परिणाम है कि किस प्रकार किस को शरीर त्यागना होता हैं। मृत्यु के सकल उपक्रम निमित्त मात्र हैं। जब तक कर्म क्षय नही होता, आत्मा को जन्म-मरण के बन्धन मे पडना ही होता है, यह शास्त्रो का निश्चय है। यद्यपि यह बात वह परब्रह्म ही जानता है कि किन कर्मो के परिणामस्वरूप कौन सा शरीर इस आत्मा को ग्रहण करना होगा, किन्तु अपने लिए यह मेरा दृढ निश्चय है कि मै उत्तम शरीर धारण कर नवीन शक्तियो सहित अति शीघ्र ही पुन भारतवर्ष मे ही किसी निकटवर्ती सम्बन्धी या इष्ट मित्र के गृह मे जन्म ग्रहण

करूँगा, क्योकि मेरा जन्म-जन्मान्तर यही उद्देश्य रहेगा कि मनुष्य मात्र को सभी प्राकृतिक पदार्थों पर समानाधिकार प्राप्त हो। कोई किसी पर हुकूमत न करे। सारे ससार मे जनतन्त्र की स्थापना हो। वर्तमान समय मे भारतवर्ष की अवस्था बडी शोचनीय है। अतएव लगातार कई जन्म इसी देश में ग्रहण करने होगे और जब तक कि भारतवर्ष के नर-नारी पूर्णतया सर्वरूपेण स्वतन्त्र न हो जायँ, परमात्मा से मेरी यही प्रार्थना होगी कि वह मुझे इसी देश मे जन्म दे, ताकि मै उसकी पवित्र वाणी--'वेद वाणी' का अनुपम घोष मनुष्य मात्र के कानों तक पहुँचाने मे समर्थ हो सकूँ। सम्भव है कि मै मार्ग-निर्धारण मे भूल करूँ, पर इसमे मेरा कोई विशेष दोष नही, क्योकि मै भी तो अल्पज्ञ जीव मात्र ही हूँ। भूल न करना केवल सर्वज्ञ से ही सम्भव है। हमे परिस्थितियो के अनुसार ही सब कार्य करने पडे और करने होगे। परमात्मा अगले जन्म मे सुबुद्धि प्रदान करे ताकि मैं जिस मार्ग का अनुसरण करूँ, वह त्रुटि-रहित ही हो।

अब मैं उन बातो का भी उल्लेख कर देना उचित समझता हूँ जो काकोरी षड्यंत्र के अभियुक्तो के सम्बन्ध मे सेशन जज के फैसला सुनाने के पश्चात् घटित हुईं। ६ अप्रैल सन् २७ ई० को सेशन जज ने फैसला सुनाया था। १८ जुलाई सन् २७ ई० को अवध चीफ कोर्ट मे अपील हुई। इसमे कुछ की सजाये बढी और एकाध की कम भी हुई। अपील होने की तारीख से पहले मैंने संयुक्त प्रान्त के गवर्नर की सेवा मे एक मेमोरियल भेजा था, जिसमे प्रतिज्ञा की थी कि अब भविष्य मे क्रान्तिकारी दल से कोई सम्बन्ध न रखूंगा। इस मेमोरियल का जिक्र मैंने अपनी अन्तिम दया-प्रार्थना पत्र मे, जो मैंने चीफ कोर्ट के जजो को दिया था, कर दिया

था, किन्तु चीफ कोर्ट के जजो ने मेरी किसी प्रकार की प्रार्थना स्वीकार न की। मैने स्वय ही जेल से अपने मुकदमे की बहस लिखकर भेजी, जो छापी गई। जब यह बहस चीफ कोर्ट के जजों ने सुनी, तो उन्हे बडा सन्देह हुआ कि बहस मेरी लिखी हुई न थी। इन तमाम बातों का नतीजा यह निकला कि चीफ कोर्ट अवध द्वारा मुझे महाभयकर षड्यन्त्रकारी की पदवी दी गई। मेरे पश्चाताप पर जजो को विश्वास न हुआ और उन्होने अपनी धारणा को इस प्रकार प्रगट किया कि यदि यह (रामप्रसाद) छूट गया तो फिर वही कार्य करेगा। बुद्धि की प्रखरता तथा समझ पर कुछ प्रकाश डालते हुए मुझे 'निर्दयी हत्यारे' के नाम से विभूषित किया गया। लेखनी उनके हाथ मे थी, जो चाहे सो लिखते, किन्तु काकोरी षड्यत्र का चीफ कोर्ट का आद्योपान्त फैसला पढने से भली भाँति विदित होता है कि मुझे मृत्यु-दण्ड किस ख्याल से दिया गया। यह निश्चय किया गया कि रामप्रसाद ने सेशन जज के विरुद्ध अपशब्द कहे हैं, खुफिया विभाग के कार्यकर्त्ताओ पर लाँछन लगाये है अर्थात् अभियोग के समय जो अन्याय होता था, उसके विरुद्ध आवाज उठाई है, अतएव रामप्रसाद सब से बडा गुस्ताख मुलजिम है। अब माफी चाहे वह किसी रूप मे माँगे, नही दी जा सकती।

चीफ कोर्ट से अपील खारिज हो जाने के बाद यथा नियम प्रान्तीय गवर्नर तथा फिर वाइसराय के पास दया-प्रार्थना की गई। रामप्रसाद 'बिस्मिल', राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी, रोशनसिह तथा अशफाक उल्ला खाँ के मृत्यु-दण्ड को बदलकर अन्य दूसरी सजा देने की सिफारिश करते हुए संयुक्त प्रान्त की कौंसिल के लगभग सभी निर्वाचित हुए मेम्बरो ने हस्ताक्षर करके निवेदन-पत्र दिया। मेरे

पिता ने ढाई सौ रईस, आननेरी मजिस्ट्रेट तथा जमीदारो के हस्ताक्षर से एक अलग प्रार्थना-पत्र भेजा, किन्तु श्रीमान सर विलियम मेरिस की सरकार ने एक न सुनी । उसी समय लेजिसलेटिव एसेम्बली तथा कौसिल ऑफ स्टेट के ७८ सदस्यो ने हस्ताक्षर करके वाइसराय के पास प्रार्थनापत्र भेजा कि 'काकोरी षड्यन्त्र के मृत्यु-दण्ड पाये हुओ को मृत्यु-दण्ड की सजा बदल कर दूसरी सजा कर दी जाये, क्योकि दौरा जज ने सिफारिश की है कि यदि ये लोग पश्चात्ताप करे तो सरकार दण्ड कम दे। चारो अभियुक्तो ने पश्चाताप प्रकट कर दिया है।' किन्तु वाइसराय महोदय ने भी एक न सुनी ।

इस विषय मे माननीय प० मदनमोहन मालवीय जी ने तथा एसेम्बली के कुछ अन्य सदस्यो ने वाइसराय से मिलकर भी प्रयत्न किया था कि मृत्यु-दण्ड न दिया जाय। इतना होने पर सबको आशा थी कि वाइसराय महोदय अवश्यमेव मृत्यु-दण्ड की आज्ञा रद्द कर देगे। इसी हालत मे चुपचाप विजयादशमी से दो दिन पहले जेलो को तार भेज दिये गये कि दया नही होगी। सबकी फाँसी की तारीख मुकर्र हो गई। जब मुझे सुपरिन्टेण्डेण्ट जेल ने तार सुनाया, तो मैने भी कह दिया कि आप अपना काम कीजिये। किन्तु सुपरिन्टेण्डेण्ट जेलर के अधिक कहने पर कि एक तार दया-प्रार्थना का सम्राट् के पास भेज दो, क्योकि यह उन्होने एक नियम सा बना रखा है कि प्रत्येक फाँसी के कैदी की ओर से जिसकी दया-भिक्षा की अर्जी वाइसराय के यहाँ से खारिज हो जाती है, वह एक तार सम्राट् के नाम से प्रान्तीय सरकार के पास अवश्य भेजते हैं। कोई दूसरा जेल सुपरिन्टेण्डेण्ट ऐसा नही करता। उपरोक्त तार लिखते समय मेरा

कुछ विचार हुआ कि प्रिवि कौंसिल इग्लैण्ड मे अपील की जाय। मैने श्रीयुत मोहनलाल सक्सेना वकील लखनऊ को सूचना दी। बाहर किसी को वाइसराय की अपील खारिज होने की बात पर विश्वास भी न हुआ। जैसे तैसे करके श्रीयुत मोहनलाल द्वारा प्रिवि कौन्सिल मे अपील कराई गई। नतीजा तो पहले से ही मालूम था। वहाँ से भी अपील खारिज हुई। यह जानते हुए कि अँग्रेज सरकार कुछ भी न सुनेगी, मैने सरकार को प्रतिज्ञा-पत्र क्यो लिखा? क्यो अपीलो पर अपीले तथा दया-प्रर्थनाये की? इस प्रकार के प्रश्न उठ सकते है। मेरी समझ मे सदैव यही आया है कि राजनीति एक शतरज के खेल के समान है। शतरंज के खेलने वाले भली भाँति जानते हैं कि आवश्यकता होने पर किस प्रकार अपने मोहरे मरवा देने पडते हैं। बगाल आर्डिनेन्स के कैदियो के छोडने या उन पर खुली अदालत मे मुकदमा चलाने के प्रस्ताव जब एसेम्बली मे पेश किये गये, तो सरकार की ओर से बड़े जोरदार शब्दो मे कहा गया कि, सरकार के पास पूरा सबूत मौजूद है। खुली अदालत मे अभियोग चलाने से गवाहो पर आपत्ति आ सकती है। यदि आर्डिनेन्स के कैदी लेखबद्ध प्रतिज्ञा-पत्र दाखिल कर दे कि वे भविष्य मे क्रान्तिकारी आन्दोलन से कोई सम्बन्ध न रखेगे, तो सरकार उन्हे रिहाई देने के विषय में विचार कर सकती है। बगाल मे दक्षिणेश्वर तथा शोभा बाजार बम-केस आर्डिनेन्स के बाद चले। खुफिया विभाग के डिप्टी सुपरिन्टेण्डेण्ट के कत्ल का मुकदमा भी खुली अदालत मे हुआ, और भी कुछ हथियारो के मुकदमे खुली अदालत में चलाये गये, किन्तु कोई एक भी दुर्घटना या हत्या की सूचना पुलिस न दे सकी। काकोरी षड्यन्त्र केस पूरे डेढ साल तक खुली अदालतों मे चलता रहा। सबूत

की ओर से लगभग तीन सौ गवाह पेश किये गये। कई मुखबिर तथा इकबाली खुले तौर से घूमते रहे, पर कही कोई दुर्घटना या किसी को धमकी देने की कोई सूचना पुलिस ने न दी। सरकार की इन बातो की पोल खोलने की गरज से ही मैंने लेखबद्ध बयेज सरकार को दिया। सरकार के कथनानुसार जिस प्रकार बंगाल ग्रार्डिनेन्स के कैदियो के सम्बन्ध मे सरकार के पास पूरा सबूत था ओर सरकार उनमे से अनेको को भयकर षड्यन्त्रकारी दल का सदस्य तथा हत्याओ का जिम्मेदार समझती तथा कहती थी, तो इसी प्रकार काकोरी के षड्यन्त्रकारियों के लेखबद्ध प्रतिज्ञा करने पर कोई गौर क्यो न किया ? बात यह है कि जबरा मारे रोने न देय। मुझे तो भली भाँति मालूम था कि सयुक्त प्रान्त मे जितने राजनैतिक अभियोग चलाये जाते हैं, उनके फैसले खुफिया पुलिस के इच्छानुसार लिखे जाते है। बरेली पुलिस कानस्टेबलों की हत्या के अभियोग मे नितान्त निर्दोष नवयुवको को फँसाया गया और सी० आई० डी० वालो ने अपनी डायरी दिखलाकर फैसला लिखाया। काकोरी षड्यन्त्र मे भी अन्त मे ऐसा ही हुआ। सरकार की सब चालो को जानते हुए भी मैने सब कार्य उसकी लम्बी-लम्बी बातो को पोल खोलने के लिए ही किये। काकोरी के मृत्युदण्ड पाये हुओ की दया-प्रार्थना न स्वीकार करने का कोई विशेष कारण सरकार के पास नही। सरकार ने बगाल ग्रार्डिनेन्स के कैदियो के सम्बन्ध मे जो कुछ कहा था, सो काकोरी वालो ने किया। मृत्यु-दण्ड को रद कर देने से देश मे किसी प्रकार की शान्ति भंग होने अथवा किसी विप्लव हो जाने की सम्भावना न थी। विशेपतया जब कि देश भर के सब प्रकार के हिन्दू मुसलमान एसेम्बली के सदस्यो ने इसकी

सिफारिश की थी। षड्यन्त्रकारियों की इतनी वडी सिफारिश इससे पहले कभी नही हुई। किन्तु सरकार तो अपना पासा सीधा रखना चाहती है। उसे अपने वल पर विश्वास है। सर विलियम मेरिस ने ही स्वय शाहजहाँपुर तथा इलाहावाद के हिन्दू-मुसलिम दगे के अभियुक्तो के मृत्यु-दण्ड रद किये है, जिनको कि इलाहावाद हाईकोर्ट से मृत्यु-दण्ड ही देना उचित समझा गया था और उन लोगों पर दिन दहाडे हत्या करने के सीधे सबूत मौजूद थे। ये सजाये ऐसे समय माफ की गई थी, जब कि नित्य नये हिन्दू-मुसलिम दंगे वढते ही जाते थे। यदि काकोरी के कैदियो को मृत्यु-दण्ड माफ करके, दूसरी सजा देने से दूसरो का उत्साह वढता तो क्या इसी प्रकार मजहबी दगों के सम्वन्ध मे भी नही हो सकता था ? मगर वहाँ तो मामला कुछ और ही है, जो अब भारतवासियो के नरम से नरम दल के नेताओ के भी शाही कमीशन के मुकर्रर होने और उसमे एक भी भारतवासी के न चुने जाने, पार्लमेंट मे भारत सचिव लार्ड वर्कनहेड के तथा अन्य मजदूर दल के नेताओ के भाषणो से भली भाँति समझ मे आया है कि किस प्रकार भारतवर्ष को गुलामी की जंजीरो मे जकडे रहने की चाले चली जा रही हैं।

मै प्राण त्यागते समय निराश नही हूँ कि हम लोगो के बलिदान व्यर्थ गये। मेरा तो विश्वास है कि हम लोगो की छिपी हुई आहो का ही यह नतीजा हुआ कि लार्ड बर्कनहेड के दिमाग मे परमात्मा ने एक विचार उपस्थित किया कि हिन्दुस्तान के हिन्दू-मुसलिम झगडो का लाभ उठाओ और भारतवर्ष जंजीरे और कस दो। गये थे रोजा छोड़ने नमाज गले पड गई ! भारतवर्ष के प्रत्येक विख्यात राजनैतिक दल ने और हिन्दुओ के तो लगभग सभी

तथा मुसलमानों के भी अधिकतर नेताओं ने एक स्वर होकर सायमन कमीशन की नियुक्ति तथा उसके सदस्यों के विरुद्ध घोर विरोध किया है, और अगली कांग्रेस (मद्रास) पर सब राजनैतिक दल के नेता तथा हिन्दू-मुसलमान एक होने जा रहे हैं। वाइसराय ने जब हमें काकोरी के मृत्युदण्ड वालों की दया-प्रर्थना अस्वीकार की थी, उसी समय मैंने श्रीयुत मोहनलाल जी को पत्र लिखा था कि हिन्दुस्तानी नेताओं को तथा हिन्दू-मुसलमानों को अगली कांग्रेस पर एकत्रित हो हम लोगों की याद मनानी चाहिए। सरकार ने अशफाक उल्ला को रामप्रसाद का दाहिना हाथ करार दिया। अशफाक उल्ला कट्टर मुसलमान होकर पक्के आर्यसमाजी रामप्रसाद का क्रान्तिकारी दल के सम्बन्ध में यदि दाहना हाथ बन सकते हैं, तब क्या भारतवर्ष की स्वतन्त्रता के नाम पर हिन्दू मुसलमान अपने निजी छोटे-छोटे फायदों का ख्याल न करके आपस में एक नहीं हो सकते ?

परमात्मा ने मेरी पुकार सुन ली और मेरी इच्छा पूरी होती दिखाई देती है। मैं तो अपना कार्य कर चुका। मैंने मुसलमानों में से एक नवयुवक निकाल कर भारतवासियों को दिखला दिया, जो सब परीक्षाओं में पूर्णतया उत्तीर्ण हुआ। अब किसी को यह कहने का साहस न होना चाहिए कि मुसलमानों पर विश्वास न करना चाहिए। पहला तजर्बा था, जो पूरी तौर से कामयाब हुआ। अब देशवासियों से यही प्रार्थना है कि यदि वे हम लोगों के फांसी पर चढ़ने से जरा भी दुखित हुए हों, तो उन्हें यही शिक्षा लेनी चाहिए कि हिन्दू-मुसलमान तथा सब राजनैतिक दल एक होकर कांग्रेस को अपना प्रतिनिधि मानें। जो कांग्रेस तय करे, उसे सब पूरी तौर से मानें और उस पर अमल करें। ऐसा करने के बाद वह दिन बहुत

दूर न होगा जब कि अँग्रेजी सरकार को भारतवासियो की माँग के सामने सिर झुकाना पडे, और यदि ऐसा करेगे तब तो स्वराज्य कुछ दूर नही। क्योकि फिर तो भारतवासियो को काम करने का पूरा मौका मिल जायगा। हिन्दू-मुसलिम एकता ही हम लोगो की यादगार तथा अन्तिम इच्छा है, चाहे वह कितनी कठिनता से क्यो न प्राप्त हो। जो मै कह रहा हूँ वही श्री अशफाकउल्ला खाँ वारसी का भी मत है, क्योकि अपील के समय हम दोनो लखनऊ जेल मे फाँसी की कोठरियो मे आमने सामने कई दिन तक रहे थे। आपस मे हर तरह की बाते हुई थी। गिरफ्तारी के बाद से हम लोगो की सजा पढने तक श्री अशफाकउल्ला खॉ की बडी भारी उत्कट इच्छा यही थी, कि वह एक बार मुझसे मिल लेते, जो परमात्मा ने पूरी कर दी।

श्री अशफाकउल्ला खाँ तो अग्रेजी सरकार से दया-प्रार्थना करने पर राजी ही न थे। उनका तो अटल विश्वास यही था कि खुदावद करीम के अलावा किसी दूसरे से दया की प्रार्थना न करनी चाहिए, परन्तु मेरे विशेष आग्रह से ही उन्होने सरकार से दया-प्रार्थना की थी। इसका दोषी मै ही हूँ, जो मैंने अपने प्रेम के पवित्र अधिकारो का उपयोग करके श्री अशफाकउल्ला खॉ को उनके दृढ निश्चय से विचलित किया। मैने एक पत्र द्वारा अपनी भूल स्वीकार करते हुए भ्रातृ-द्वितीया के अवसर पर गोरखपुर जेल से श्री अशफाक को पत्र लिखकर क्षमा-प्रार्थना की थी। परमात्मा जाने कि वह पत्र उनके हाथो तक पहुँचा भी या नही। खैर! परमात्मा की ऐसी ही इच्छा थी कि हम लोगो को फाँसी दी जाय, भारतवासियो के जले हुए दिलों पर नमक पड़े, वे बिलबिला उठे और हमारी आत्माएँ उनके कार्य को देखकर सुखी

हो। जब हम नवीन शरीर धारण करके देश-सेवा मे योग देने को उद्यत हो, उस समय तक भारतवर्ष की राजनैतिक स्थिति पूर्णतया सुधरी हुई हो। जनसाधारण का अधिक भाग सुशिक्षित हो जाय। ग्रामीण लोग भी अपने कर्त्तव्य समझने लग जायँ।

प्रिवि कौंसिल मे अपील भिजवा कर मैंने जो व्यर्थ का अपव्यय करवाया, उसका भी एक विशेष अर्थ था। सब अपीलो का तात्पर्य यह था कि मृत्यु-दण्ड उपयुक्त दण्ड नही। क्योकि न जाने किस की गोली से आदमी मारा गया। अगर डकैती डालने की जिम्मेदारी के खयाल से मृत्यु-दण्ड दिया गया तो चीफ कोर्ट के फैसले के अनुसार भी मै ही डकैतियो का ज़िम्मेदार तथा नेता था, और प्रान्त का नेता भी मै ही था। अतएव मृत्यु-दण्ड तो अकेला मुझे ही मिलना चाहिए था। अन्य तीन को फाँसी नही देनी चाहिए थी। इसके अतिरिक्त दूसरी सज़ाएँ सब स्वीकार होती। पर ऐसा क्यो होने लगा? मै विलायती न्यायालय की भी परीक्षा करके स्वदेश वासियो के लिए उदाहरण छोडना चाहता था, कि यदि कोई राज-नैतिक अभियोग चले तो वे कभी भूलकर के भी किसी अँग्रेजी अदालत का विश्वास न करे। तबियत आये तो जोरदार बयान दे। अन्यथा मेरी तो यही राय है कि अँग्रेजी अदालत के सामने न तो कभी कोई बयान दे और न कोई सफाई पेश करे। काकोरी षड्यन्त्र के अभियोग से शिक्षा प्राप्त कर ले। इस अभियोग मे सब प्रकार के उदाहरण मौजूद है। प्रिवि कौन्सिल मे अपील दाखिल कराने का एक विशेष अर्थ यह भी था कि मै कुछ समय तक फाँसी की तारीख टलवा कर यह परीक्षा करना चाहता था कि नवयुवको मे कितना दम है, और देशवासी कितनी सहायता दे सकते है। इसमे मुझे बडी

निराशापूर्ण असफलता हुई। अन्त मे मैने निश्चय किया था कि यदि हो सके, तो जेल से निकल भागूं। ऐसा हो जाने से सरकार को अन्य तीनो फॉसी वालो की फाँसी की सजा माफ कर देनी पडेगी, और यदि न करते तो मै करा लेता। मैने जेल से भागने के अनेको प्रयत्न किये, किन्तु बाहर से कोई सहायता न मिल सकी। यही तो हृदय पर आघात लगता है कि जिस देश मे मैने इतना बड़ा क्रान्तिकारी आन्दोलन तथा षड्यन्त्रकारी दल खडा किया था, वहाँ से मुझे प्राण-रक्षा के लिए एक रिवाल्वर तक न मिल सका ! एक नवयुवक भी सहायता को न आ सका ! अन्त मे फाँसी पा रहा हूँ। फॉसी पाने का मुझे कोई भी शोक नही, क्योकि मै इस नतीजे पर पहुँचा हूँ, कि परमात्मा को यही मजूर था। मगर मै नवयुवको से फिर भी नम्र निवेदन करता हूँ कि जब तक भारतवासियो की अधिक सख्या सुशिक्षित न हो जाय, जब तक उन्हे कर्तव्य-अकर्तव्य का ज्ञान न हो जाय, तब तक वे भूल कर भी किसी प्रकार के क्रान्तिकारी षड्यन्त्रो मे भाग न ले। यदि देश सेवा की इच्छा हो तो खुले आन्दोलनो द्वारा यथाशक्ति कार्य करे, अन्यथा उनका बलिदान उपयोगी न होगा। दूसरे प्रकार से इससे अधिक देश सेवा हो सकती है, जो ज्यादा उपयोगी सिद्ध होगी। परिस्थिति अनुकूल न होने से ऐसे आन्दोलनो मे परिश्रम प्राय व्यर्थ जाता है। जिनकी भलाई के लिए करो, वही बुरे-बुरे नाम धरते है, और अन्त मे मन-ही-मन कुढ कुढ कर प्राण त्यागने पडते हैं।

देशवासियो से यही अन्तिम विनय है कि जो कुछ करे, सब मिलकर करे, और सब देश की भलाई के लिए करे। इसी से सबका भला होगा।

मरते 'बिस्मिल' 'रोशन' 'लहरी' 'अशफ़ाक' अत्याचार से।
होंगे पैदा सैकड़ों इनके रुधिर की धार से॥

चन्द राष्ट्रीय अशआर और कवितायें

मेरी यह इच्छा हो रही है कि मैं उन कविताओं मे से भी चन्द का यहाँ उल्लेख कर दूं, जो कि मुझे प्रिय मालूम होती हैं और मै ने यथा समय कंठस्थ की थी।

—रामप्रसाद 'बिस्मिल'

(१)

भूखे प्राण तजें भले, केहरि खरु नहिं खाहिं।
चातक प्यासे ही रहें, बिन स्वांती न अघाहिं॥
बिन स्वांती न अघाहिं, हंस मोती ही खावे।
सती नारि पतिव्रता नेक नहिं चित्त डिगावे॥
तिमि 'प्रताप' नहिं डिगे, होहिं चह सब किन रूखे।
अरि सन्मुख नहिं नवे, फिरें चहुँ वन वन भूखे॥

(२)

चाह नहीं है सुर बाला के गहनो में गूंथा जाऊँ।
चाह नहीं है प्यारी के गल पड़ूं हार में ललचाऊँ॥
चाह नहीं है राजाओ के शव पर मैं डाला जाऊँ।
चाह नहीं है देवों के सिर चढ़ूं भाग्य पर इतराऊँ॥
मुझे तोड़कर हे बनमाली उस पथ में तू देना फेंक।
मातृभूमि हित शीश चढ़ाने जिस पथ जावें वीर अनेक॥

(३)

भारत जननि तेरी जय हो, विजय हो!
तू शुद्ध और ज्ञान की आगार,
तेरो विजय सूर्य माता उदय हो॥

हों ज्ञान सम्पन्न जीवन सुफल होवे,

संतान तेरी अखिल प्रेममय हो ॥

आयें पुनः कृष्ण देखें दशा तेरी,

सरिता सरों में भी बहता प्रणय हो ॥

सावर के संकल्प पूरण करें ईश,

विघ्न और बाधा सभी का प्रलय हो ॥

गांधी रहें और तिलक फिर यहां आवें,

अरविंद, लाला, महेन्द्र की जय हो ॥

मेरे लिये जेल हो स्वर्ग का द्वार,

बेड़ी की झनझन मे वीणा की लय हो ॥

कहता खलिल आज हिन्दू—मुसलमान,

सब मिल के गावो जननि तेरी जय हो ॥

(४)

कोउ न सुख सोया कर के प्रीति ।

सुन्दर कली सेमर की देखी, सुअनाने मन मोहा । कर के प्रीति० ॥

मारी चोंच भुआ जब देखा पटक पटक सिर रोया । कर के प्रीति० ॥

सुन्दर कली कमल की देखी, भँवरा का मन मोहा । कर के प्रीति० ॥

सारी रैन सम्पुट में बीती, तड़प तड़प जी खोया । कर के प्रीति० ॥

(५)

तू वह मये खुदी है, ऐ जलवये जानानां ।

हर गुल है तेरा बुलबुल, हर शमा है परवाना ॥

मस्ती में भी सर अपना साक़ी के कदम पर हो ।

इतना तो करम करना, ऐ लग़जिशे मस्ताना ॥

यारब इन्ही हाथो से पीते रहे मस्ताना ।

यारब वही साक़ी हो, यारब वही पैमाना ॥

आखें हैं तो उसकी हैं, किसमत है तो उसकी है ।
जिस ने तुझे देखा है, ऐ जलवा-ऐ जानाना ॥
छेडो न फ़रिश्तो तुम जिक्रे ग़मे जानानां ।
क्यों याद दिलाते हो भूला हुआ अफसाना ॥
ये चश्मे हक़ीकी भी, क्या तेरे सिवा देखें ।
सिजदे से हमें मतलव काबा हो या बुतखाना ॥
साक़ी को दिखा देंगे अदाज़ फकीराना ।
टूटी हुई बोतल है टूटा हुआ पैमाना ॥

(६)

मुर्गे दिल मत रो यहां आंसू वहाना है मना ।
अदलीवों को कफस में चहचहाना है मना ॥
हाय जल्लादी तो देखो कह रहा सय्याद यह ।
वक्ते ज़िबहा बुलबुलो को फड़फड़ाना है मना ॥
वक्ते ज़िबहा जानवर को देते हैं पानी पिला ।
हज़रते इन्सान को पानी पिलाना है मना ॥
मेरे खूं से हाथ रग कर वोले क्या अच्छा है रंग ।
अब हमें तो उम्र भर मरहम लगाना है मना ॥
ऐ मेरे ज़ख्मे जिगर नासूर बनना है तो बन ।
क्या करूँ इस ज़खम पर मरहम लगाना है मना ॥
खूने दिल पीते हैं असगर खाते हैं लख्ते जिगर ।
इस कफस में कैदियो को आबोदाना है मना ॥

(७)

वतन की आबरू का पास देखें कौन करता है ।
सुना है आज मक़तल में हमारा इम्तहां होगा ॥
जुदा मत हो मेरे पहलू से ऐ दर्दे वतन हरगिज़ ।
न जाने वादे मुर्दन में कहां और तू कहां होगा ॥

शहीदों की चिताओ पर जुडेंगे हर बरस मेले।
वतन पर मरने वालो का यही बाकी निशाँ होगा ॥
इलाही वह भी दिन होगा जब अपना राज देखेंगे।
जब अपनी ही जमी होगी और अपना आसमा होगा ॥

(८)

आसहां सब का कर लिया हम ने,
सारे आलम को आजमा देखा।
नजर आया न कोई अपना अजीज,
आंख जिस की तरफ उठा देखा।
कोई अपना न निकला महरमे राज,
जिसको देखा सो बेवफा देखा।
अलगरज सब को इस जमाने में,
अपने मतलब का आशना देखा।

(९)

हैफ हम जिस पै कि तैयार थे मर जाने को।
यकबयक हम से छुडाया उसी काशाने को ॥
आसमा क्या यही बाकी था गजब ढाने को।
लाके गुरबत में जो रक्खा हमें तडपाने को ॥
क्या कोई, और बहाना न था तरसाने को ॥१॥
फिर न गुलशन में हमें लायेगा सय्याद कभी।
क्यो सुनेगा तू हमारी कोई फरियाद कभी ॥
याद आयेगा किसे यह दिले नाशाद कभी।
हम भी इस बाग में थे क़ैद से आजाद कभी ॥
अब तो काहे को मिलेगी यह हवा खाने को ॥२॥
दिल फिदा करते हैं कुरबान जिगर करते हैं।
पास जो कुछ है वह माता की नजर करते हैं ॥

खाना-वीरान कहाँ देखिये घर करते हैं।
खुश रहो अहले वतन हम तो सफर करते हैं ॥
जाके आबाद करेंगे किसी वीराने को ॥३॥
देखिये कब यह असीराने मुसीबत छूटें।
मादरे-हिन्द के अब भाग खुले या फूटें ॥
देश सेवक सभी अब जेल में मूजें कूटें।
हम यहाँ ऐश से दिन-रात बहारें लूटें ॥
क्यों न तरजीह दें इस जीने पे मर जाने को ॥४॥
कोई माता की उमीदों पे न डाले पानी।
ज़िंदगी भर को हमें भेज के काले पानी ॥
मुंह में जल्लाद हुए जाते हैं छाले पानी।
आब खंजर का पिला कर के दुआ ले पानी ॥
भरने क्यों जायें हम इस उम्र के पैमाने को ॥५॥
हम भी आराम उठा सकते थे घर पर रहकर।
हम को भी पाला था माँ-बाप ने दुख सह-सहकर ॥
वक्ते रुखसत उन्हें इतना भी न आये कहकर।
गोद में आँसू जो टपकें कभी रुख से बहकर ॥
तिफ्ल उनको ही समझ लेना जी बहलाने को ॥६॥
देश-सेवा ही का बहता है लहू नस-नस में।
अब तो खा बैठे हैं चित्तौर के गढ की कसमें ॥
सर फरोशी की अदा होती हैं यूं ही रसमें।
भाई खंजर से गले मिलते हैं सब आपस में ॥
बहनें तैयार चिताओं पे हैं जल जाने को ॥७॥
नौजवानों जो तबीयत में तुम्हारी खटके।
याद कर लेना कभी हम को भी भूले-भटके ॥
आप के उज्वे बदन होवें जुदा कट-कट के।
और सर चाक हो माता का कलेजा फटके ॥
पर न माथे पे शिकन आये कसम खाने को ॥८॥

अपनी किस्मत में अजल से ही सितम रक्खा था।
रंज रक्खा था मुहिन रक्खा था ग़म रक्खा था॥
किसको परवाह थी और किसमें यह दम रक्खा था।
हमने जब वादिये गुरबत में कदम रक्खा था॥
दूर तक यादे-वतन आई थी समझाने को॥९॥

अपना कुछ ग़म नहीं पर यह ख़याल आता है।
मादरे हिन्द पे कब तक यह ज़वाल आता है॥
हरदयाल आता है योरुप से न पाल आता है।
कौम अपनी पे तो रह-रह के मलाल आता है॥
मुंतज़िर रहते हैं हम खाक में मिल जाने को॥१०॥

मैकदा किसका है यह जामे सबू किस का है।
वार किस का है मेरी जां यह गुलू किस का है॥
जो बहे कौम की ख़ातिर वह लहू किस का है।
आसमां साफ बता दे तू उदू किस का है॥
क्यों नये रंग बदलता है ये तड़पाने को॥११॥

दर्दमंदो से मुसीबत की हवालात पूछो।
मरने वालो से ज़रा लुत्फ शहादत पूछो॥
चश्म मुश्ताक से कुछ दीद की हसरत पूछो।
कुश्तये नाज़ से ठोकर की कयामत पूछो॥
सोज़ कहते हैं किसे पूछो तो परवाने को॥१२॥

बात तो जब है कि इस बात की ज़िद्दें ठानें।
देश के वास्ते कुरबान करें सब जानें॥
लाख समझाये कोई एक न उसकी मानें।
कहता है खून से मत अपना गरेबां सानें॥
नासिहा आग लगे तेरे इस सम

न मुयस्सर हुआ राहत में कभी मेल
जान पर खेल के आया न कोई खेल

एक दिन को भी न मंजूर हुई 'बेल' हमें।
याद आयेगा बहुत लखनऊ का जेल हमें॥
लोग तो भूल ही जायेंगे इस अफसाने को ॥१४॥
नौजवानो यही मौका है उठो खुल खेलो।
खिदमते कौम में जो बला आये खुशी से झेलो॥
देश के सदक़ में माता को जवानी दे दो।
फिर मिलेंगी न यह माता की दुआयें ले लो॥
देखें कौन आता है इरशाद बजा लाने को ॥१५॥

(१०)

न किसी की आँख का नूर हूँ न किसी के दिल का करार हूँ।
जो किसी के काम न आ सके, मैं वह एक मुश्तेगुबार हूँ॥
न दवाये दर्दे जिगर हूँ मै न किसी की मीठी नजर हूँ मैं।
न इधर हूँ मैं न उधर हूँ मैं न शकेब हूँ न क़रार हूँ॥
मैं नहीं हूँ नगमाये जां फिजा, मुझे सुन के कोई करेगा क्या।
मैं बड़े वियोगी की हूँ सदा मै बडे दुखी की पुकार हूँ॥
न मैं किसी का हूँ दिलरुबा, न किसी के दिल में बसा हुआ।
मैं जमीन की पीठ का बोझ हूँ मै फलक के दिल का गुबार हूँ॥
मेरा बखत मुझ से बिछुड गया, मेरा रग-रूप बिगड गया।
जो चमन खिजा से उजड गया मैं उसी की फसले बहार हूँ॥
कोई पढ़ने फातिहा आये क्यो कोई आके शमा जलाये क्यो।
कोई चार फूल चढ़ाये क्यो कि मैं बेकसी का मजार हूँ॥
न 'जफर' मै किसी का रकीब हूँ न मै किसी का हबीब हूँ।
जो बिगड़ गया वह नसीब हूँ, जो उजड़ गया वह दयार हूँ॥

(११)

उरियानी न हैरानी न थे पाँव में छाले।
हम भी थे कभी आह बड़े नाजो के पाले॥
जुल खाया मिटे उड़ गई आजादी औ राहत।
अल्लाह यह दिन अपने तो दुश्मन पै भी न डाले॥

मारा है मिटाया है हमें आह उन्हीं ने।
कर बैठे थे हम जानो जिगर जिन के हवाले ॥
हम ने तो हमेशा तेरी खुशनूदी ही चाही।
खुद बिगड़े मगर काम तेरे सारे सभाले ॥

उसका यह सिला हमको मिला उफ री मुहब्बत।
बरबाद किया डाल दिये जान के लाले ॥
बेबस हुए जलील हुए मिट तो चुके हम।
अब और क़यामत भी जो ढाना हो सो ढाले ॥

सौगन्द है तुझ को तेरे उस जोरो जफा की।
जी भर के हमें जितना सताना हो सता ले ॥
किसमत का कभी अपने भी चमकेगा सितारा।
हम भी कभी देखेंगे आज़ादी के उजाले ॥

बदले की लहर तब तेरे सर चढ के कहेगी।
था जहर पै केचुल से या लाचार थे काले ॥

(१२)

मानस हो तो वहीं रसखान बसो ब्रज गोकुल गॉव के ग्वारन।
जो पशु हो तो कहा बस मेरो चरो नित नन्द की धेनु मंझारन ॥
पाहन हो तो वही गिरि को जो कियौ ब्रज छत्र पुरन्दर धारन।
जो खग हो तो बसेरो करौं वहि कालिन्दी कूल कदम्ब की डारन ॥

× × × ×

या लकुटी अरु कामरिया पर राज तिहूँ पुर को तजि डारो।
आठहूँ सिद्धि नवौ निधि को सुख नन्द की धेनु चराय बिसारो ॥
रसखान सदा इन नैनन सो ब्रज के बन बाग तड़ाग निहारो।
कोटिन हूँ कलधौत के धाम करील के कुंजन ऊपर वारों ॥

अमर शहीद श्री रोशनसिंह

परिशिष्ट

१

पृष्ठभूमि

श्री मन्मथनाथ गुप्त

जब श्रद्धेय श्री बनारसीदास जी चतुर्वेदी ने मुझे यह बताया कि वे प० रामप्रसाद बिस्मिल की फाँसीघर मे लिखी हुई आत्मकथा पुन प्रकाशित करने की बात सोच रहे है, तो साथ ही उन्होने यह चिन्ता व्यक्त की कि उसे ज्यो-का-त्यो छापना उचित है या नही, क्योकि इस सम्बन्ध मे कुछ लोगो को सन्देह है। इस पर मैंने छूटते ही यह राय दी कि किसी को भी एक शहीद की अन्तिम धरोहर मे अपनी इच्छानुसार काट-छाँट करने का अधिकार नही है और वह ज्यो-की-त्यो छपनी चाहिए।

मुझे काकोरी षड्यन्त्र या भारतीय क्रान्तिकारी आन्दोलन के सम्बन्ध मे इस अवसर पर कुछ नही कहना है, क्योकि उस सम्बन्ध मे मेरा वक्तव्य 'सशस्त्र क्रान्ति चेष्टा का रोमाचकारी इतिहास' तथा 'क्रान्तिकारी की आत्मकथा' मे प्रकाशित हो चुका है। इसके अतिरिक्त समय-समय पर मैंने कुछ अन्य पुस्तके भी लिखी— जैसे 'चन्द्रशेखर आजाद', 'रामप्रसाद बिस्मिल', इत्यादि-इत्यादि, जिनमे से अधिकाश अब अप्राप्य हैं। समय-समय पर इस सम्बन्ध मे बहुत से लेख भी लिखे हैं। 'राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास' नामक वृहत् पुस्तक मे मैंने सम्पूर्ण राष्ट्रीय आन्दोलन के परिप्रेक्षित मे पुराने क्रान्तिकारी आन्दोलन का स्थान और उसका हाल बताने की चेष्टा की है।

मेरा इस सम्बन्ध मे जो सबसे महत्त्वपूर्ण वक्तव्य रहा, वह सक्षेप मे यो है—क्रान्तिकारी आन्दोलन भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का एक अविभाज्य अग है। यह एक सर्वसम्मत मत रहा कि जहाँ तक त्याग और तपस्या का सम्बन्ध है, भारत के क्रान्तिकारी स्वतन्त्रता आन्दोलन के शीर्षस्थान पर रहे। जब काँग्रेस केवल नौकरी माँगने वाले लोगो की एक सस्था मात्र रही, जो बड़े दिन के अवसर पर मिला करती थी, उस समय भी क्रान्तिकारी फाँसी के तख्ते

पर जा रहे थे। इस उपादान को तो सभी स्वीकार करते है, पर यह बहुत कम लोगो को मालूम है कि विचारधारा के क्षेत्र मे भी क्रान्तिकारी सबसे आगे रहे। कांग्रेस ने तो लाहौर अधिवेशन (१९२९) मे पूर्ण स्वतन्त्रता का नारा दिया, पर क्रान्तिकारी उस समय भी पूर्ण स्वतन्त्रता का जयघोष कर रहे थे, जब गांधी जी ने दक्षिण अफ्रीका मे भारतियो के मामूली-मामूली अधिकारो के लिए लडना भी शुरू नही किया था। यहाँ तक कि जब १९२१ मे असहयोग आन्दोलन छिडा, जिसने काँग्रेस के ढाँचे को बदल कर रख दिया, उस समय भी गाँधी जी ने काँग्रेस के लक्ष्य की परिभाषा नही की, यद्यपि बाबू भगवानदास जैसे लोग बार-बार लक्ष्य की परिभाषा का आग्रह कर रहे थे। जब यह आन्दोलन बहुत जोरो पर था, उस समय होने वाले अहमदाबाद अधिवेशन मे गाँधी जी ने हसरत मोहानी द्वारा पेश किए हुए पूर्ण स्वतन्त्रता के प्रस्ताव का विरोध किया।

अब समाजवाद के लक्ष्य को लीजिए। काँग्रेस ने आवडी मे समाजवादी ढाँचे के समाज को अपना लक्ष्य करार दिया, पर जब १९२१ के असहयोग आन्दोलन को चौरी-चौरा हत्याकाण्ड के बहाने से वापस ले लिया गया और पुराने क्रान्तिकारियो ने फिर से क्रान्तिकारी संगठन किया, तो उन्होने अपने सामने एक ऐसे समाज को लक्ष्य के रूप मे रखा, जिसमे मनुष्य के द्वारा मनुष्य का शोषण असम्भव होगा। पण्डित रामप्रसाद जिस 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन' के नेताओ मे थे, उस दल के 'पीले कागज' नाम से उल्लिखित सविधान मे यह लक्ष्य इन्ही शब्दो मे वर्णित था। जब काकोरी षड्यन्त्र चला और पुराने क्रान्तिकारी गिरफ्तार हो गए, और दल की बागडोर चन्द्रशेखर आज़ाद, भगतसिह आदि लोगो के हाथ मे आई तो उन्होने दल का नाम बदल कर 'हिन्दुस्तान सोशलिस्ट रिपब्लिकन एसोसिएशन या आर्मी' रख दिया। यह लगभग १९२७-२८ की बात है। स्मरण रहे कि उस समय तक भारत मे सोशलिस्ट पार्टी की स्थापना नही हुई थी और कम्युनिस्ट पार्टी की भी नाम मात्र कागजी रूप से ही स्थापना हुई थी। काँग्रेस ने तो इसके लगभग तीस साल बाद समाजवाद का नारा दिया, वह नारा कहाँ तक केवल नारेबाज़ी मात्र है और कहाँ तक ईमानदारी पूर्ण है, इसे तो भविष्य का इतिहास ही बतला सकता है।

दूसरे शब्दो मे मैंने क्रान्तिकारी आन्दोलन पर जो कुछ लिखा, उसमे केवल कुछ व्यक्तियो के वीरतापूर्ण कृत्यो को ही महत्त्व नही दिया, वल्कि मैंने अकाट्य तथ्यो के आधार पर यह प्रमाणित किया है कि विचारो और चिन्तन की दृष्टि से भी यह पुराने क्रान्तिकारी अग्रणी रहे। स्मरण रहे कि यहाँ विचार तथा चिन्तन शब्द से मैं जवानी जमा-खर्च को नही लेता हूँ क्योकि जवानी जमा-खर्च तो सभी कर सकते है और सच तो यह है कि विश्वविद्यालय के अध्यापक इस कार्य को अधिक सुचारु रूप से कर सकते हैं। पर मैं ऐसे चिन्तन को चिन्तन मानता ही नही और न ऐसे चिन्तन की इतिहास पर कोई छाप ही पडती है, जो गद्देदार कुर्सियो पर वैठकर ऊँचे-ऊँचे आदर्शो की वखान तक सीमित हो। चिन्तन के साथ-साथ कार्य भी होना चाहिए। उस कार्य मे जोखिम उठाना और वलिदान करना ही चिन्तन की असलियत को प्रमाणित करता है। केवल यही नही जैसा कि अब लगभग विस्मृत इटैलियन क्रान्तिकारी मैजिनी ने कहा था—"Ideas ripen quickly when nourished by the blood of martyrs" यानी शहीदो के रक्त से पुष्ट होकर ही विचार जल्दी परिपक्व होते है। सच तो यह है कि विचार या चिन्तन तब तक उस विजली के तार की तरह है, जिसमे अभी करेण्ट नही है, जब तक कि उसके लिए जोखिम न उठाई जाए। जव विचार जनता की थाती का अश बन जाता है, तभी उसमे इतिहास निर्माण की शक्ति आती है।

क्रान्तिकारी शहीद जनता से अपने ही ढग से सम्पर्क बनाते थे। इस प्रक्रिया को भी वहुत कम लोगो ने समझा है। हम इस सम्वन्ध मे केवल एक दो बात कह कर असली विषय पर आवेगे।

जिस समय १९०८ के अलीपुर जेल मे पिस्तौल मँगाकर मुखविर नरेन्द्र गोस्वामी का काम तमाम करने वाले कन्हाईलाल दत्त को फाँसी दी गई और उनकी लाश चिता पर चढाई गई, उस समय एक लाख आदमी उस चिता के इर्द-गिर्द खडे होकर दाढ मार-मार कर रो रहे थे। जब शहीद का नश्वर शरीर जल गया तो यह विराट् जनता चिता की ओर लपकी और कुछ क्षण वाद वहाँ राख का एक कण भी नही दिखाई पडा। लोगो ने गण्डा तावीज बनाने के लिए राख लूट ली थी, ताकि उनकी सन्ताने भी उसी तरह निर्भीक, वीर और देशभक्त हो।

इसी प्रकार उस घटना की याद की जाए, जब सरदार भगतसिंह ने केन्द्रीय असेम्बली मे बम डाला था और साथ-ही-साथ कुछ पर्चे फेंके थे, जिनका प्रारम्भ एक फ्रेंच क्रान्तिकारी के इन शब्दो से होता था—'बहरो को सुनाने के लिए धडाके की जरूरत है।'

साथ ही उन्होने 'इनकलाब जिन्दाबाद' का नारा पहले-पहल भारत मे बुलन्द किया, जो तब से भारत के हर प्रकार के क्रान्तिकारी आन्दोलन का प्रधान नारा बन चुका है। जब भगतसिंह तथा उनके साथी राजगुरु और सुखदेव को फाँसी हुई, तो उस समय भारत मे कैसी उथल-पुथल मची, इसका विवरण उस समय की पत्र-पत्रिकाओ मे मिल सकता है। स्वय श्री जवाहरलाल नेहरू ने यह लिखा है कि उन दिनो भारत मे भगतसिह की जनप्रियता गाँधी जी से किसी प्रकार कम नही थी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि क्रान्तिकारियो के कुछ अपने विचार थे, वे उन विचारो के लिए लडने-मरने को तैयार थे, साथ ही उनके अपने तरीके थे, जिनसे वे जनता को प्रभावित करते थे। उन क्रान्तिकारियो ने भारत के मानस-पटल पर कितनी गहरी छाप डाली है, इसका प्रमाण हमे गत दस वर्षों मे प्रकाशित होने वाले हिन्दी उपन्यासो और कहानियो मे भी एक हद तक मिल सकता है, जिनमे जब भी पात्र-पात्रियो मे कोई बौद्धिक तर्क-वितर्क होता है तो क्रान्तिकारी जरूर आ जाते हैं।

सूत्र रूप मे इस प्रकार एक पृष्ठभूमि तैयार कर लेने के बाद अब मैं असली विषय पर आता हूँ। क्रान्तिकारी सामूहिक रूप से बहुत ऊँचे लोग थे। बात यह है कि जो उस उच्चता से उतरता था और कई लोग उतर कर मुखबिर तक हो जाते थे, वे क्रान्तिकारी रहते ही नही थे, यानी उनका नाम फौरन उस सूची से कट जाता था। इसीलिए क्रान्तिकारी शब्द अपने शुद्ध रूप मे ही रहता था।

पर जब हम वैयक्तिक सतह पर उतरते हैं तो हम देखते हैं कि केवल भारत के ही नही सभी देशो के क्रान्तिकारी राग-द्वेषपूर्ण होते हैं, उनमे भलाई और बुराई दोनो पाई जाती है। पण्डित रामप्रसाद की आत्मकथा से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि जिस समय सघर्ष की लौ धीमी पड जाती है, उस समय कई तरह की छोटाइयाँ सामने आती हैं। ठीक भी है क्योकि क्रान्तिकारी तो तभी तक महान् है, जब तक कि वह अपने युग का वाहन है। जब उसका

यह वाहनत्व कमजोर पड जाता है और वैयक्तिक बातें उभर कर सामने आती हैं तो आप उसकी आँतो को उधेड कर देख सकते हैं कि उनमे भी उसी प्रकार से तमाम तरह की चीजे भरी होती हैं, जो दूसरे लोगो मे पाई जाती है।

अब मैं ऐसी बातें लिखने जा रहा हूँ जो मैंने क्रान्तिकारी आन्दोलन सम्बन्धी अपनी किसी भी पुस्तक मे पहले नही लिखी, क्योकि उसकी जरूरत नही थी। अब जब कि यह आत्मकथा जनता के हाथो मे जाएगी तो कई तरह के प्रश्न उठेंगे। पण्डित रामप्रसाद ने जो बातें लिखी है, उनमे सबसे अधिक प्रश्न इस बात पर उठेंगे कि क्या पण्डित जी ने अपने दल के बगाली नेताओ के सम्बन्ध मे जो बाते लिखी है, वे सच हैं? अब देखिए कि काकोरी षड्यन्त्र मे कौन-कौन बगाली नेता थे। सर्वोपरि श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल थे, जो दल के प्रधान नेता थे। वे रास बिहारी बोस के दाहिने हाथ समझे जाते थे और स्वदेशी या वग-भग युग से क्रान्तिकारी आन्दोलन मे थे। प्रथम महायुद्ध के समय बनारस षड्यन्त्र मे उन्हे नेता करार दिया गया था और उन्हे आजीवन काले पानी की सजा दी गई थी। युद्ध मे अग्रेजो की जीत हो जाने पर आम माफी मे सैकडो दूसरे क्रान्तिकारियो के साथ अण्डमन से वे भी रिहा कर दिए गए। असहयोग के जमाने मे वे चुपचाप रहे और ज्यो ही असहयोग आन्दोलन समाप्त हुआ, त्यो ही क्रान्तिकारी सगठन करने के लिए मैदान मे कूद पडे। वे बहुत ऊँचे दर्जे के विद्वान् थे और उन्हे काकोरी षड्यन्त्र मे बाद को चलकर आजीवन कालेपानी की सजा हुई थी। उससे रिहा होने के बाद वे दूसरे महायुद्ध के समय नजरबन्द कर लिए गए। उसी अवस्था मे उन्हे तपेदिक हो गई और सन् १९४२ मे जब उनके लगभग सभी पुराने साथी जेल मे थे वे रोग के कारण छोड दिए गए और थोड़े ही दिनो मे उनका देहान्त हो गया। उनकी लिखी हुई कई पुस्तकें हैं, जिनमे 'बन्दी जीवन' क्रान्तिकारियो का क्लासिक बन गया था।

उस समय के दूसरे बगाली नेता श्री योगेशचन्द्र चटर्जी थे। वे भी बहुत पुराने जमाने से क्रान्तिकारी आन्दोलन मे थे और सन् १९१६ से १९१९ तक रेगुलेशन '३' के अनुसार नजरबन्द रहे। उसके बाद ये अनुशीलन दल की ओर से उत्तर भारत मे क्रान्तिकारी सगठन करने के लिए आए। बाद को इनका सगठन शचीन्द्रनाथ सान्याल के सगठन के साथ एक हो गया और इस सयुक्त

दल का काम 'हिन्दुस्तान रिपब्लिकन एसोसिएशन' रखा गया, जिसके प्रधान नेता शचीन्द्रनाथ सान्याल बने।

शचीन्द्रनाथ सान्याल सगठनकर्त्ता और बम बनाने के विशेषज्ञ थे। वे अच्छे लेखक भी थे और दल की ओर से समय-समय पर गुप्त रूप से बाँटे गए परचो के लेखक भी वे ही थे। पर योगेशचन्द्र चटर्जी बहुत अच्छे सगठन-कर्त्ता होने के साथ ही डकैती आदि कार्य मे भी प्रवीण थे। वे इस लेख के लिखते समय ससद्-सदस्य हैं।

योगेशचन्द्र को काकोरी षड्यन्त्र मे आजन्म कालेपानी की सजा मिली और १२ साल तक जेल मे रहने के बाद वे जब छूटे तो थोडे दिन बाहर रहने के बाद दूसरे महायुद्ध मे फिर जेल भेज दिए गए और इस बार १९४६ तक जेल मे रहे।

तीसरे बगाली नेता श्री सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य थे। वे भी प्रथम महायुद्ध के समय नजरबन्द थे और इसके बाद काकोरी षड्यन्त्र मे उनको दस साल की सजा हुई। वे इस समय शहीद गणेशशकर विद्यार्थी द्वारा प्रवर्तित कानपुर के 'दैनिक प्रताप' के मुख्य सम्पादक हैं।

चौथे बगाली नेता श्री गोविन्दचरण कार थे, जो प्रथम महायुद्ध के समय पुलिस से सन्मुख युद्ध कर गोली लगी हुई हालत मे पकडे गए थे और अण्डमन भेज दिए गए थे। बाद को वे काकोरी षड्यन्त्र मे शामिल हुए। अभी-अभी साल भर हुआ उनका देहान्त हो गया।

ये ही चार बगाली नेता थे। बाकी शचीन्द्रनाथ बख्शी, राजकुमारसिह, शचीन्द्रनाथ विश्वास, भूपेन्द्र सान्याल और मैं दल के नेताओ मे नही, बल्कि नौजवान कार्यकर्त्ताओ मे थे। काकोरी षड्यन्त्र मे गिरफ्तार होते समय मेरी उम्र १७ साल की थी। राजेन्द्र लाहिडी को इसमे मैं इसलिए नही गिन रहा हूँ कि उन्हे तो पण्डित रामप्रसाद के साथ ही फाँसी की सजा मिली।

यह स्पष्ट है कि पण्डित रामप्रसाद ने जिन बगाली नेताओ का जिक्र किया है उनमे शचीन्द्रनाथ सान्याल, योगेशचन्द्र चटर्जी, गोविन्दचरण कार और सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य ही हो सकते हैं। बाकी बगाली क्रान्तिकारी जैसा कि मैं कह चुका, कार्यकर्त्ता मात्र थे। स्वयं मुझे तो पण्डित रामप्रसाद के ही

नेतृत्व मे अधिक काम करने का मौका मिला और कभी किसी प्रकार की वदमज़गी हुई हो ऐसा याद नही आता।

फिर भी पण्डित रामप्रसाद जो बाते इस सम्बन्ध मे लिख गए हैं, वे बिलकुल कार्य-कारण सम्बन्ध से बाहर नही है, जैसा कि आगे चलकर पाठक को मालूम हो जाएगा।

दल के अन्दर स्वाभाविक रूप से दो भाग थे, एक सगठन पर जोर देता था और दूसरा अस्त्र-शस्त्र सग्रह करता था, डकैतियो की योजना बनाता था और उन्हे कार्यान्वित करता था। शेषोक्त भाग के नेता पण्डित रामप्रसाद थे, क्योकि मैनपुरी षड्यन्त्र के सिलसिले मे उन्हे डकैतियाँ डालने तथा अस्त्र-शस्त्र सग्रह करने के सम्बन्ध मे बहुत सुन्दर ज्ञान हो गया था। जैसा कि मैने अपनी आत्मकथा मे विस्तार के साथ लिखा है, आतकवादी क्रान्तिकारी दलो मे कई बार अफसरो की हत्या करना और डकैतियाँ डालने को मुख्यता देने की प्रवृत्ति होती है और उसमे जो लोग भाग लेते है, वे दल के नेता बन जाते है। पर दूसरे लोग ऐसे लोगो को बार-बार असली लक्ष्य की ओर सन्नद्ध करते रहते हैं। इस प्रकार कुछ तनातनी की सृष्टि हो सकती है।

हम लोग १९२५ के २६ सितम्बर को गिरफ्तार कर लिए गए, शचीन्द्र नाथ सान्याल और योगेशचन्द्र चटर्जी इसके पहले गिरफ्तार हो चुके थे, सान्याल को राजद्रोह मे सजा हुई थी और योगेशचन्द्र चटर्जी नजरबन्द थे। ये दोनो नेता अपनी-अपनी जेलो से काकोरी षड्यन्त्र के मुकदमे मे लाए गए।

यद्यपि बनवारीलाल, बनारसीदास और इन्दुभूषण मुखबिर बन गए थे, फिर भी पुलिस को काफी झूठी गवाहियो और सबूत एकत्र करने पडे। मुकदमा डावाडोल था, क्योकि यदि इस्तगासे की तरफ से पण्डित जगतनारायण मुल्ला थे तो हमारी तरफ से एक डिफेन्स कमेटी थी, जिससे पडित मोतीलाल नेहरू, बाबू शिवप्रसाद गुप्त, श्री गणेशशकर विद्यार्थी, श्री जवाहरलाल नेहरू, बाबू श्रीप्रकाश आदि किसी-न-किसी रूप मे सयुक्त थे और हमारे वकीलो मे पण्डित गोविन्दवल्लभ पन्त, चन्द्रभानु गुप्त, मोहनलाल सक्सेना साथ ही कलकत्ता के प्रसिद्ध बैरिस्टर बी० के० चौधरी थे। इसलिए पुलिस को भरोसा नही था कि मुखबिरो और झूठी गवाहियो के बावजूद वह सब को सजा दिलवा सकेगी।
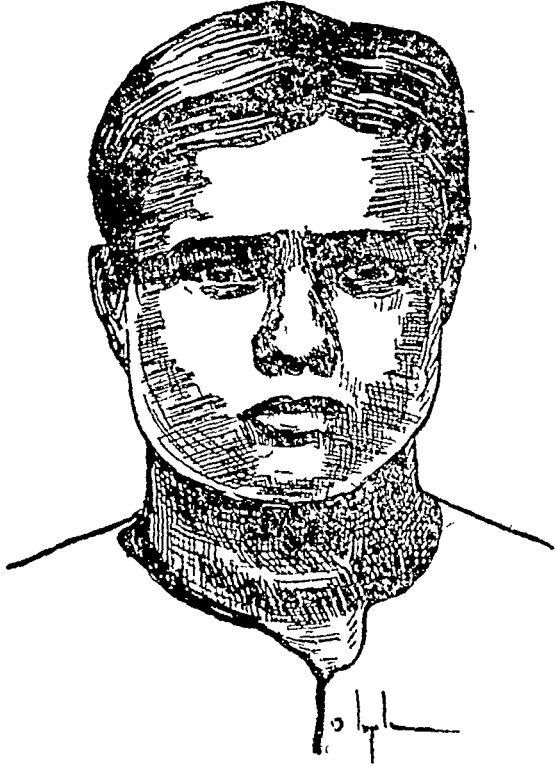
अमर शहीद श्री राजेन्द्रनाथ लाहिड़ी

इस कारण पुलिस की ओर से हमारे नेता यानी सर्वोपरि शचीन्द्रनाथ सान्याल से पुलिस वालो की बातचीत चली। बंगाल के क्रान्तिकारी इतिहास मे ढाका षड्यन्त्र का एक उदाहरण मौजूद था, जिसमे पुलिस वालो मे और गिरफ्तार क्रान्तिकारियो मे एक समझौता हुआ था। इसके अनुसार क्रान्तिकारियो ने कुछ हद तक दूसरो को बिना फँसाए हुए अपना जुर्म स्वीकार कर लिया था और उसके फलस्वरूप पुलिस वालो ने दो एक आदमियो पर जो फांसी तथा कालेपानी का मुकदमा बनता था, उसे इतना नरम कर दिया था कि वह साबित ही न हो। नतीजा यह हुआ कि सब लोगो को थोडी-थोडी सजा हो गई थी, पर किसी को बडी सजा नही हुई थी।

इसी तरीके पर यहाँ भी बातचीत चली और स्वाभाविक रूप से यह बातचीत शचीन्द्रनाथ सान्याल के साथ चली। अवश्य वे इसकी सूचना दूसरे नेताओ यानी पण्डित रामप्रसाद, योगेशचन्द्र, सुरेशचन्द्र, विष्णुशरण दुबलिस, राजेन्द्र नाथ लाहिडी आदि को देते थे। हम लोगो तक इसकी भनक ही आती थी। कभी कोई प्रामाणिक बात नही आई। हाँ, जब सजा आदि हो गई और हम लोग जेलो मे तितर-बितर कर दिए गए, फाँसियाँ भी हो गई, तब इसका ब्योरेवार पता चला।

सक्षेप मे इतना ही बताया जाय कि हमारे नेता समझौते मे इस बात पर अड रहे थे कि किसी को फाँसी न हो जाए। इस बात से पण्डित रामप्रसाद को ही सबसे अधिक फायदा था। (अवश्य दल को फायदा उससे अधिक था) क्योकि यह तो सभी को मालूम था और हमारे वकील भी यही कहते थे कि यदि काकोरी षड्यन्त्र मे किसी एक व्यक्ति को फाँसी होती है, तो पण्डित रामप्रसाद को जरूर होगी, बाकी किसे फांसी होगी या नही होगी, इस सम्बन्ध मे मतभेद था। दूसरे शब्दो मे शचीन्द्रनाथ सान्याल तथा उनके सलाहकार, पण्डित रामप्रसाद के साथ-साथ अन्य फांसी वालो को बचाने के लिए ही यह वार्ता चला रहे थे।

पर पुलिस वालो ने शायद हिसाब लगा-लगू कर यह देखा कि समझौते के बिना ही उनकी कार्य-सिद्धि हो जायगी क्योकि हमारा अग्रेज जज हैमिल्टन बहुत ही सख्त आदमी था। उसकी शोहरत यह थी कि वह जहाँ गुंजाइश रहती थी वहाँ फांसी जरूर देता था, बड़ी सजाओ की तो बात ही नही है। इसलिए

एकाएक पुलिसवालो ने वार्ता चलानी बन्द कर दी, पर शचीन्द्रनाथ सान्याल ने एक सुयोग्य नेता की तरह किसी को भी कानो-कान इसकी खबर नही होने दी, क्योकि जो आशा बँधी थी, उसे वे तोडना नही चाहते थे। अब तक वे पण्डित रामप्रसाद से तथा अन्य लोगो से इस मामले मे सलाह लेते थे, पर अब उन्होने इस सम्बन्ध मे एकाएक चुप्पी साध ली और यह कहते रहे कि वार्ता चल रही है, पर उसका कोई व्यौरा नही देते थे। विशेषकर उन लोगो को नही देते थे, जिनको फाँसी होने की जरा भी सम्भावना थी।

ऐसा मालूम होता है कि पण्डित रामप्रसाद ने इसका यह अर्थ लगाया कि भीतर-भीतर बातचीत जारी है और अब शचीन्द्रनाथ सान्याल फाँसी की सम्भावना युक्त लोगो को खुदा के भरोसे छोडकर पुलिस से कोई ऐसा पेच चल रहे हैं, जिससे कि वे स्वय छूट जाएँ या उन्हे नाम मात्र की सजा हो, इत्यादि। इसी कारण उनके मन मे उनके विरुद्ध भावनाएँ उत्पन्न हुईं और वे भीतर-भीतर बुद-बुदाती रही।

पण्डित रामप्रसाद की सारी पृष्ठभूमि का यदि हम अध्ययन करे तो हम देखेगे कि उनका इस प्रकार सन्देह करना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। काकोरी षड्यन्त्र के पहले वे मैनपुरी षड्यन्त्र मे फरार थे। उसमे ऐसा हुआ था कि जब सब को सजा हो गई और १९१९ मे आम माफी का समय आया, उस समय जेल के अन्दर के सजायाफता क्रान्तिकारियो ने सरकार से कुछ समझौता कर लिया, जिसके फलस्वरूप वे आम माफी मे शामिल कर लिए गए, पर इसमे भी मुकुन्दीलाल को शामिल नही किया गया, जो बेचारे आम-माफी मे नही छूटे और पूरी सजा काटते रहे। यह मुकुन्दीलाल बाद को चलकर काकोरी षड्यन्त्र मे आ गए और उन्हे आजन्म कालेपानी की सजा मिली। मैनपुरी षड्यन्त्र मे भी जो लोग फरार थे, उनको भी उक्त समझौते का कोई लाभ नहीं हुआ। इसलिए मैनपुरी षड्यन्त्र के भूतपूर्व सदस्य होने के नाते पण्डित रामप्रसाद का यह सन्देह कुछ अनुचित नही था और चूंकि काकोरी षड्यन्त्र मे परिस्थिति यह थी कि शचीन्द्रनाथ सान्याल ही नेता थे और योगेशचन्द्र चटर्जी से वह सलाह लेते थे, इसलिए यदि पण्डित रामप्रसाद का क्रोध सारे बगाली नेताओ, यहाँ तक कि बगालियो पर चला गया, तो इस पर हमें विशेष आश्चर्य नहीं है।

अब प्रश्न यह उठता है कि शचीन्द्रनाथ सान्याल ने रामप्रसाद बिस्मिल को समझौते की असफलता के सम्बन्ध मे पूरी बात न बताकर वार्ता जारी है, ऐसा स्वाग रचा, यह कहाँ तक उचित था ? पण्डित रामप्रसाद तपे हुए पुराने क्रान्तिकारी थे, और उनसे यह आशा की जा सकती थी कि वे इस बुरी खबर को, जिसका अर्थ निश्चित फाँसी था, अच्छी तरह झेल लेते, जैसा कि उन्होने बाद को बडी बहादुरी के साथ फासी चढकर प्रमाणित कर दिया। पर केवल पण्डित रामप्रसाद की बात ही नही थी, दूसरे ऐसे लोगो की भी बात थी, जिनको फाँसी की सम्भावना थी। पण्डित रामप्रसाद को तो पूरी बात बताना ठीक होता, इसमे कोई सन्देह नही, पर दूसरो का दिल पहले से दुखाने या निराश करने की कोई जरूरत नही थी।

मैंने सारी बात पाठको के सामने रख दी, पाठक इस पर अपनी राय बना सकते हैं। इस सम्बन्ध मे. दोनो मत के लोग मिलेगे। शचीन्द्रनाथ सान्याल ने, ठीक किया हो या न किया हो, उसके लिए उन पर अधिक-से-अधिक यही दोप लग सकता है कि उन्होने सही फैसला नही किया, उन पर कोई पक्षपात या नैतिक अपराध लागू नही हो सकता, पर केवल इतनी-सी बात पर पण्डित रामप्रसाद ने उन नेताओ की निन्दा ही नही की बल्कि उन पर प्रान्तीयता का जो आरोप लगाया, वह सम्पूर्ण रूप से अनुचित था, यद्यपि जैसा कि मैं पहले ही लिख चुका हूँ, यह दुर्भाग्यपूर्ण परिणति कार्य-कारण सम्बन्ध से बाहर नही थी।

यदि एक या चार या पाँच या दस बगाली क्रान्तिकारियो ने गलती की भी, (मैं देख चुका हूँ कि उन्होने कोई गलती नही की) तो भी इसको वह रूप देना, जो पण्डित जी ने दिया, सम्पूर्ण रूप से अप्रत्याशित और अनुचित था। इससे अच्छा तो यह था कि वे नाम लेकर उन्हे भविष्य-पीढियो के सामने बुरा कह जाते और उन पर स्पष्ट अभियोग लगाते।

मैं इस अप्रिय और दुर्भाग्यपूर्ण विषय पर इससे अधिक नही कहना चाहता। कही मैं गलती न कर जाऊँ, इसलिए जो कुछ मैं लिख रहा हूँ, उसके सम्बन्ध मे मैंने उस समय के अन्यतम नेता और इस समय ससद्-सदस्य अपने अग्रज तुल्य मित्र श्री विष्णुशरण दुबलिस से बातचीत कर ली है और उन्होने मुझसे पूरी सहमति प्रकट की है। इस सम्बन्ध मे मेरे विद्वान मित्र श्री भगवान

एकाएक पुलिसवालों ने वार्ता चलानी बन्द कर दी, पर शचीन्द्रनाथ सान्याल ने एक सुयोग्य नेता की तरह किसी को भी कानो-कान इसकी खबर नही होने दी, क्योकि जो आशा बँधी थी, उसे वे तोडना नही चाहते थे। अब तक वे पण्डित रामप्रसाद से तथा अन्य लोगो से इस मामले मे सलाह लेते थे, पर अब उन्होने इस सम्बन्ध मे एकाएक चुप्पी साध ली और यह कहते रहे कि वार्ता चल रही है, पर उसका कोई ब्यौरा नही देते थे। विशेषकर उन लोगो को नही देते थे, जिनको फाँसी होने की ज़रा भी सम्भावना थी।

ऐसा मालूम होता है कि पण्डित रामप्रसाद ने इसका यह अर्थ लगाया कि भीतर-भीतर बातचीत जारी है और अब शचीन्द्रनाथ सान्याल फाँसी की सम्भावना युक्त लोगो को खुदा के भरोसे छोडकर पुलिस से कोई ऐसा पेच चल रहे है, जिससे कि वे स्वय छूट जाएँ या उन्हे नाम मात्र की सजा हो, इत्यादि। इसी कारण उनके मन मे उनके विरुद्ध भावनाएँ उत्पन्न हुई और वे भीतर-भीतर बुद्‌बुदाती रही।

पण्डित रामप्रसाद की सारी पृष्ठभूमि का यदि हम अध्ययन करे तो हम देखेगे कि उनका इस प्रकार सन्देह करना कोई आश्चर्य की बात नही है। काकोरी षड्‌यन्त्र के पहले वे मैनपुरी षड्‌यन्त्र मे फरार थे। उसमे ऐसा हुआ था कि जब सब को सजा हो गई और १६१६ मे आम माफी का समय आया, उस समय जेल के अन्दर के सजायाफ़्ता क्रान्तिकारियो ने सरकार से कुछ समझौता कर लिया, जिसके फलस्वरूप वे आम माफी मे शामिल कर लिए गए, पर इसमे भी मुकुन्दीलाल को शामिल नही किया गया, जो बेचारे आम-माफी मे नही छूटे और पूरी सजा काटते रहे। यह मुकुन्दीलाल बाद को चलकर काकोरी षड्‌यन्त्र मे आ गए और उन्हे आजन्म कालेपानी की सजा मिली। मैनपुरी षड्‌यन्त्र मे भी जो लोग फरार थे, उनको भी उक्त समझौते का कोई लाभ नही हुआ। इसलिए मैनपुरी षड्‌यन्त्र के भूतपूर्व सदस्य होने के नाते पण्डित रामप्रसाद का यह सन्देह कुछ अनुचित नही था और चूँकि काकोरी षड्‌यन्त्र मे परिस्थिति यह थी कि शचीन्द्रनाथ सान्याल ही नेता थे और योगेशचन्द्र चटर्जी से वह सलाह लेते थे, इसलिए यदि पण्डित रामप्रसाद का क्रोध सारे बगाली नेताओ, यहाँ तक कि बगालियो पर चला गया, तो इस पर हमें विशेष आश्चर्य नही है।

अब प्रश्न यह उठता है कि शचीन्द्रनाथ सान्याल ने रामप्रसाद बिस्मिल को समझौते की असफलता के सम्बन्ध मे पूरी बात न बताकर वार्ता जारी है, ऐसा स्वांग रचा, यह कहाँ तक उचित था ? पण्डित रामप्रसाद तपे हुए पुराने क्रान्तिकारी थे, और उनसे यह आशा की जा सकती थी कि वे इस बुरी खबर को, जिसका अर्थ निश्चित फाँसी था, अच्छी तरह झेल लेते, जैसा कि उन्होने बाद को बडी बहादुरी के साथ फाँसी चढकर प्रमाणित कर दिया। पर केवल पण्डित रामप्रसाद की बात ही नही थी, दूसरे ऐसे लोगो की भी बात थी, जिनको फाँसी की सम्भावना थी। पण्डित रामप्रसाद को तो पूरी बात बताना ठीक होता, इसमे कोई सन्देह नही, पर दूसरो का दिल पहले से दुखाने या निराश करने की कोई जरूरत नही थी।

मैंने सारी बात पाठको के सामने रख दी, पाठक इस पर अपनी राय बना सकते हैं। इस सम्बन्ध मे दोनो मत के लोग मिलेंगे। शचीन्द्रनाथ सान्याल ने ठीक किया हो या न किया हो, उसके लिए उन पर अधिक-से-अधिक यही दोष लग सकता है कि उन्होने सही फैसला नही किया, उन पर कोई पक्षपात या नैतिक अपराध लागू नही हो सकता, पर केवल इतनी-सी बात पर पण्डित रामप्रसाद ने उन नेताओ की निन्दा ही नही की बल्कि उन पर प्रान्तीयता का जो आरोप लगाया, वह सम्पूर्ण रूप से अनुचित था, यद्यपि जैसा कि मैं पहले ही लिख चुका हूँ, यह दुर्भाग्यपूर्ण परिणति कार्य-कारण सम्बन्ध से बाहर नही थी।

यदि एक या चार या पाँच या दस बगाली क्रान्तिकारियो ने गलती की भी, (मैं देख चुका हूँ कि उन्होने कोई गलती नही की) तो भी इसको वह रूप देना, जो पण्डित जी ने दिया, सम्पूर्ण रूप से अप्रत्याशित और अनुचित था। इससे अच्छा तो यह था कि वे नाम लेकर उन्हे भविष्य-पीढियो के सामने बुरा कह जाते और उन पर स्पष्ट अभियोग लगाते।

मैं इस अप्रिय और दुर्भाग्यपूर्ण विषय पर इससे अधिक नही कहना चाहता। कही मैं गलती न कर जाऊँ, इसलिए जो कुछ मैं लिख रहा हूँ, उसके सम्बन्ध मे मैंने उस समय के अन्यतम नेता और इस समय ससद्-सदस्य अपने अग्रज तुल्य मित्र श्री विष्णुशरण दुबलिस से बातचीत कर ली है और उन्होने मुझसे पूरी सहमति प्रकट की है। इस सम्बन्ध मे मेरे विद्वान मित्र श्री भगवान

दास माहौर के वे वक्तव्य भी विशेष रूप से ध्यान देने योग्य है, कि जब पण्डित रामप्रसाद की आत्मकथा प्रकाशित हुई, उसके बाद भी क्रान्तिकारी आन्दोलन बराबर चलता रहा और उसमे सभी प्रान्तो के लोग कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करते रहे, और किसी मौके पर किसी मे कोई प्रान्तीयता देखने मे नही आई। इसके अलावा मैं एक बात पर और ध्यान दिलाना चाहता हूँ कि जिन दो व्यक्तियो पर पण्डित रामप्रसाद की बातें विशेषकर लागू होती हैं, उनमे से शचीन्द्रनाथ सान्याल बाद को भी बराबर एक हुतात्मा की तरह काम करते रहे और उसी मे वे शहीद भी हो गए। सौभाग्य से योगेश दादा अभी तक जीवित है और वे एक जीवित शहीद ही कहे जा सकते हैं।

यहाँ यह बात और उल्लेखनीय है कि श्री शचीन्द्रनाथ सान्याल, सुरेशचन्द्र भट्टाचार्य, श्री चटर्जी और श्री कार को छोडकर उस समय के सभी बगाली कार्यकर्त्ता उत्तर-प्रदेश के ही निवासी थे और उनका सारा राजनैतिक जीवन इसी प्रदेश मे गुज़रा है। श्री चटर्जी और श्री कार भी काकोरी षड्यन्त्र के बाद उत्तर-प्रदेश के ही निवासी हो गए और यही इनका राजनैतिक जीवन व्यतीत हुआ। श्री चटर्जी आज भी ससद् मे उत्तर-प्रदेश का ही प्रतिनिधित्व करते हैं।

आशा है कि पाठक सारी बातो पर गहराई के साथ विचार करेंगे और शहीद की आत्मकथा को उसी रूप मे पढेंगे, जिस रूप मे सभी साहित्य पढना चाहिए यानी 'यान्यस्माकम् सुचरितानि तान्येव त्वयोपास्यानि नो इतराणि।'

अमर शहीद श्री अशफाकुल्ला

२

मेरी डायरी का एक पृष्ठ

श्री शिव वर्मा

माँ फिर रो पडी।

अशफाक और बिस्मिल का यह शहर कालेज के दिनो मे मेरी कल्पना का केन्द्र था। फिर क्रान्तिकारी पार्टी का सदस्य बनने के बाद काकोरी के मुखबिर की तलाश मे काफी दिनो तक इसकी धूल छानता रहा था। अस्तु, यहाँ जाने पर पहली इच्छा हुई बिस्मिल की माँ के पैर छूने की। काफी पूछताछ के बाद उनके मकान का पता चला। छोटे से मकान की एक कोठरी मे दुनिया की आँखो से अलग वीर-प्रसविनी अपने जीवन के अन्तिम दिन काट रही हैं— Unknown, unnoticed। पास जाकर मैंने पैर छुए। आँखो की रोशनी प्राय समाप्त-सी हो चुकने के कारण पहचाने बिना ही उन्होने मेरे सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया और पूछा, "तुम कौन हो ?" क्या उत्तर दूं, कुछ समझ मे नही आया। थोडी देर के बाद उन्होने फिर पूछा, "कहाँ से आये हो बेटा ?" इस बार साहस कर मैंने परिचय दिया—"गोरखपुर जेल मे अपने साथ किसी को ले गयी थी, अपना बेटा बनाकर ?" अपनी ओर खीचकर सिर पर हाथ फेरते हुए माँ ने पूछा, "तुम वही हो बेटा ? कहाँ थे अब तक ? मै तो तुम्हे बहुत याद करती रही, पर जब तुम्हारा आना एकदम ही बन्द हो गया तो समझी कि तुम भी कही उसी रास्ते पर चले गये।" माँ का दिल भर आया। कितने ही पुराने घावो पर एक साथ ठेस लगी। अपने अच्छे दिनो की याद, बिस्मिल की याद, फाँसी, तख्ता, रस्सी और जल्लाद की याद, जवान बेटे की जलती हुई चिता की याद और न जाने कितनी यादो से उनके ज्योतिहीन नेत्रो मे पानी भर आया—वे रो पड़ी। बात छेडने के लिए मैंने पूछा "रमेश (बिस्मिल का छोटा भाई) कहाँ है ?" मुझे क्या पता था कि मेरा प्रश्न उनकी आँखो मे बरसात भर लायेगा। वे ज़ोर से रो पडी। बरसो का रुका बाँध टूट पडा सैलाब बनकर। कुछ देर बाद अपने को सम्हालकर उन्होंने कहानी सुनानी शुरू की।

आरम्भ मे लोगो ने पुलिस के डर से उन के घर आना छोड दिया। वृद्ध पिता की कोई बँधी हुई आमदनी न थी। कुछ साल बाद रमेश बीमार पडा। दवा-इलाज के अभाव मे बीमारी जड पकडती गई। घर का सब कुछ बिक जाने पर भी रमेश का इलाज न हो पाया। पथ्य और उपचार के अभाव मे तपेदिक का शिकार बनकर एक दिन वह माँ को निपूती छोडकर चला गया। पिता को कोरी हमदर्दी दिखाने वालो से चिढ हो गई। वे बेहद चिडचिडे हो गये। घर का सब कुछ तो बिक ही चुका था। अस्तु, फाको से तग आकर एक दिन वे भी चले गये, माँ को ससार मे अनाथ और अकेली छोडकर ! पेट मे दो दाना अनाज तो डालना ही था। अस्तु, मकान का एक भाग किराये पर उठाने का निश्चय किया। पुलिस के डर से कोई किरायेदार भी नही आया और जब आया तब पुलिस का ही एक आदमी ! लोगो ने बदनाम किया कि माँ का सम्पर्क तो पुलिस से हो गया है। उनकी दुनिया से बचा हुआ प्रकाश भी चला गया। पुत्र खोया, लाल खोया, अन्त मे बचा था नाम, सो वह भी चला गया !

उनकी आँखो से पानी की धार बहते देखकर मेरे सामने गोरखपुर की फाँसी की कोठरी घूम गई। काकोरी के चारो अभियुक्तो के जीवन का फैसला हो चुका था—To be hanged by the neck till they be dead. **(प्राण निकल जाने तक गले में फन्दा डालकर लटका दिया जाय।)** फाँसी के एक दिन पहले अतिम मुलाकात का दिन था। समाचार पाकर पिता गोरखपुर आ गये। माँ का कोमल हृदय शायद इस आघात को सँभाल न सके, यही समझकर उन्हे वे साथ न लाये थे। प्रात हम लोग जेल के फाटक पर पहुँचे तो देखा कि माँ वहाँ पहले से ही मौजूद है ! अन्दर जाने के समय सवाल आया मेरा, मुझे कैसे अन्दर ले जाया जाय। उस समय माँ का साहस और पटुता देखकर सभी दग रह गये। मुझे खामोश रहने का आदेश देकर उन्होने मुझे अपने साथ ले लिया। पूछने पर यह कह दिया, "मेरी बहन का लडका है।" हम लोग अन्दर पहुँचे। माँ को देखकर रामप्रसाद रो पडे, किन्तु माँ की आँखो मे आँसुओ का लेश भी न था। उन्होने ऊँचे स्वर मे कहा—"मैं तो समझती थी कि मेरा बेटा बहादुर है, जिसके नाम से अग्रेजी सरकार भी काँपती है। मुझे नही पता था कि वह मौत मे डरता है। तुम्हे यदि रो कर ही मरना था तो व्यर्थ इस

काम मे आये ।" बिस्मिल ने आश्वासन दिया । आँसू मौत से डर के नही वरन् माँ के प्रति मोह के थे । "मौत से मै नही डरता माँ, तुम विश्वास करो ।" माँ ने मेरा हाथ पकडकर आगे कर दिया । यह तुम्हारे आदमी हैं । पार्टी के बारे मे जो चाहो इनसे कह सकते हो । उस समय माँ का स्वरूप देखकर जेल के अधिकारी तक कहने को बाध्य हुए कि बहादुर माँ का बेटा ही बहादुर हो सकता है ।

उस दिन समय पर विजय हुई थी माँ की और आज माँ पर विजय पाई है समय ने । आघात पर आघात देकर उसने उनसे बहादुर हृदय को भी कातर बना दिया है । जिस माँ की आँखो के दोनो ही तारे विलीन हो चुके हो उनकी आँखो की ज्योति यदि चली जाय तो इसमे आश्चर्य ही क्या है ? वहाँ तो रोज ही अँधेरे बादलो से बरसात उमडती रहेगी ।

कैसी है यह दुनिया, मैंने सोचा । एक ओर 'बिस्मिल जिन्दाबाद' के नारे और चुनाव मे वोट लेने के लिए बिस्मिल द्वार का निर्माण और दूसरी ओर उनके घरवालो की परछाई तक से भागना और उनकी निपूती बेवा माँ पर बदनामी की मार ! एक ओर शहीद परिवार सहायक फण्ड के नाम पर हजारो का चन्दा और दूसरी ओर पथ्य और दवादारू तक के लिए पैसो के अभाव में बिस्मिल के भाई का टी० बी० से घुटकर मरना ! क्या यही है शहीदो का आदर और उनकी पूजा ?

फिर आऊँगा माँ, कहकर मैं चला आया, मन पर न जाने कितना बडा भार लिए ।

शाहजहाँपुर
२३, फरवरी १९४६